अवधविलास महाकाव्य का शोधपरक अनुशीलन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्त्री-
श्रीमती विमलेश शुक्ला
एम० ए० (हिन्दी-संस्कृत)
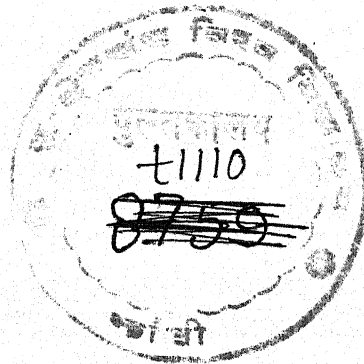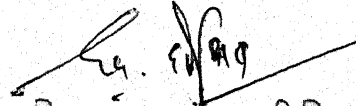
निर्देशक-
डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित
प्रवक्ता हिन्दी विभाग
पं० जवाहरलाल नेहरू महाविद्यालय
बाँदा

प्रमाण-पत्र

(अ) यह प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध प्रबंध शोधार्थी की मौलिक कृति है ।

(ब) यह कि शोधार्थी ने शोध अध्यादेश की धारा-7 के अंतर्गत निर्धारित समय तक शोध कार्य सम्पन्न किया है ।

(स) यह कि शोधार्थी ने निर्धारित अवधि तक सम्बंधित उपस्थिति देकर विधिवत् शोध कार्य सम्पन्न किया है ।

शोध निर्देशक

(डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित)
प्रवक्ता हिन्दी विभाग
पं० जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय, बाँदा

में परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में कवि के काव्य पर उनके प्रतिफलन का भी आकलन किया गया है । किसी निश्चित काल खण्ड के अन्तर्गत लिखे जाने वाले काव्य में उस युग का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक होता है भले ही वह काव्य शाश्वत् और चिरन्तन मूल्यों से सम्पृक्त क्यों न हो अथवा आध्यात्मिक मूल्यों का ही लालदास के काव्य में जो सामाजिक दायित्व तथा राष्ट्रीय जीवन की भंगिमाएं रेखांकित हुई हैं उसके पीछे युगीन परिस्थितियां प्रतिबिम्बित होती है ।

द्वितीय अध्याय जीवन वृत्त से सम्बन्धित है । जीवन -वृत्त की प्रामाणिकता के लिए हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों से प्राप्त विवरण ह०लि० ग्रंथों की खोज रिपोर्टों, `अवधविलास' के प्रकाशित संकरण में दिये गये तथ्यों आदि को आधार मानकर कवि के जीवन वृत्त का वैज्ञानिक विवेचन किया गयाहै।अन्त: साक्ष्य और बाह्यसाक्ष्य आधारों को ध्यान में रखते हुये कवि के जन्म, शैशव, शिक्षा, गुरू, जीवन की प्रमुख घटनाएं एवं व्यक्तित्व का विश्लेषण किया गया है ।

तृतीय अध्याय लालदास की कृतियों से सम्बंधित है । इस परिवर्त्य में कृतियों का परिचय, रचनाकाल तथा उनकी प्रामाणिकता पर विचार किया गया है । कृतियों की प्रामाणिकता के परीक्षण के लिए कवि की उपलब्ध रचनाओं का स्वत: शोध छात्रा ने परीक्षण किया है । विभिन्न प्रतिलिपियों, उनके रचनाकाल, उनकी प्राप्ति स्रोत, सुरक्षा, स्थान, अंतर्वस्तु आदि का अवलोकन करके ही उनके ग्रंथों की प्रामाणिकता पर विचार किया गया है । इसी अध्याय में कवि के `अवधविलास' का परिचय विस्तारपूर्वक दिया गयाहै ।

शोध- प्रबंध का चतुर्थ अध्याय भाव व्यंजना से सम्बन्धित है । इसके अंतर्गत सौन्दर्य, श्रृंगार, प्रकृति चित्रण, आध्यात्मिक प्रेम, सामाजिकता एवं विविध भावों की व्यंजना पर विचार किया गया है।भाव और भक्ति की संसिद्धि इस अध्याय की प्रमुख उपलब्धि है । रसिक भक्ति की भावमयी धारा के कारण लीला भावों की भी प्रधानता पाई जाती है । भावों की विशिष्टता

तथा सघनता के कारण लालदास का भाव जगत् अनन्य भक्ति भावना तथा रसिक साधना से ओत-प्रोत है । श्रृंगार ,प्रेम, विरह, वात्सल्य आदि भावों पर रसिक भावनाओं का कांचनीय स्पर्श पाया जाता है। तुलसी ,सूर की भांति लालदास भावना के विशिष्ट क्षेत्र में अपनी रसिकता को अलग पहिचान बनाते हैं ।

पंचम अध्याय शिल्प- विधान से सम्बंधित है । एक विशिष्ट प्रकार के नये शिल्प -विधान के कारण लालदास अपनी पुर्ववर्ती परम्परा से अलग एक नई तकनीक का प्रयोग करते हैं । इसलिए कवि के शिल्प पक्ष के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए शिल्प -विधान को तीन भागों में विभाजित कर लिया गया है । वस्तु शिल्प, शैली शिल्प और अभिव्यक्ति शिल्प। वस्तु शिल्प के अंतर्गत वस्तु की योजना , विभाजन आदि को रखा गया है । शैली शिल्प के अंतर्गत कवि द्वारा प्रयुक्त नूतन शैलियों का विवेचन किया गया है तथा अभिव्यक्ति शिल्प के अंतर्गत भाषा तथा उसके रूप, काव्य गुण, रीति अलंकार ,छंद आदि का विवेचन कियागयाहै ।

षष्ठ अध्याय आचार्यत्व निरूपण से सम्बंधित है इस परिवर्त्य के अंतर्गत आचार्यत्व को परम्परा में लालदास के स्थान का मुल्यांकन किया गया है तथा विधि काव्यांगों के निरूपण में कवि के आचार्यत्व का विश्लेषण किया गया है । विविध काव्यांङ्गों के अंतर्गत शब्द-भक्ति, गुणदोष, काव्य प्रयोजन, काव्य हेतु, काव्य -लक्षण, काव्य-भेद, तथा ध्वनि आदि क्षेत्रों की विवेचना की गई है ।

शोध- प्रबंध का सप्तम अध्याय मुल्यांकन के आधार और समस्याओं से सम्बंधित है इस परिवर्त्य में प्राचीन हस्तलेखों के पाठालोचन की समस्या तथा प्रकाशन के अभाव में अवर्धित ग्रंथों के मुल्यांकन की समस्याओं पर भी विचार किया गयाहै । मुल्यांकन के विविध आयामों के अंतर्गत राम काव्य परम्परा, रसिक साधना तथा साहित्यिक प्रबंध काव्यों के साथ कवि का अध्ययन किया गया है । प्रभावों के अध्ययन के लिए पुर्ववर्ती तथा परवर्ती कवियों के प्रभाव का आकलन किया गया है साथ ही तुलनात्मक मुल्यांकन भी

किया गया है । कवि के प्रदेय पर विचार करते हुये साहित्य के लेखन में लालदास के स्थान तथा उनकी विशिष्ट साधनापर चिन्तन किया गया है । मध्यकालीन साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में लालदास के प्रदेय का विश्लेषण भी इसी परिवर्त्य के अंतर्गत किया गया है ।

जहाँ तक पद्धति का प्रश्न है, वह गवेषाणात्मक एवं विश्लेषणात्मक रही है । जहाँ कहीं आवश्यक हुआ है तुलनात्मक और विवेचनात्मक पद्धतियों का प्रयोग हुआ है । भक्ति शास्त्रीय, काव्य शास्त्रीय एवं सामाजिक मूल्यों को भी शोध- के दृष्टि पथ पर रखा गया है जहाँ कहीं आवश्यक हुआ है शोध यात्राओं द्वारा तथा शोध सर्वेक्षणों द्वारा विषयवस्तु की जाँच पड़ताल कर वैज्ञानिकता और सुसम्बद्धता प्रदान की गई है ।

अन्त में इस शोध प्रबंध के प्रणयन में जिन मनीषियों, विद्वानों एवं सहयोगियों का सहयोग प्राप्त हुआ उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ । इनमें प्रमुख रूप से मैं अपने शोध निदेशक डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित "ललित" के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ जिन्होंने समय- समय पर शोध विषय के संबंध में न केवल शोध निर्देशक के रूप में प्रत्युत अग्रज के रूप में भी यथेष्ट श्रम एवं समय देकर शोध प्रबंध की पूर्णता में महत्वपूर्ण योग दिया है इसके अतिरिक्त मैं उन सभी विद्वानों के प्रति अपनी कृतज्ञता तथा हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ जिनसे मैंने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ भी पाया । विशेष रूप से मैं साहित्य और संस्कृति के उत्कृष्ट कोटि के मनीषी श्री गोबिन्द प्रसाद जी साँवल जो इस शोध प्रबंध को परिपूर्ण रूप में देखने के लिए व्यग्र थे, किन्तु दुर्भाग्य से जो इस शोध प्रबंध के परिपूर्ण होने के पूर्व ही पार्थिव रूप से पृथक् हो गये, उनके प्रति अपनी कृतज्ञ श्रद्धांजलि समर्पित करती हूँ । इसके अतिरिक्त मैं अपने परम पूज्य पिता जी श्री भवानी दत्त व्यास जी के प्रति भी आभारिणी हूँ । न केवल शोध प्रबंध के अपितु मेरे सम्पूर्ण शैक्षणिक सम्पन्नताओं के प्रति भी उनकी ही प्रेरणा स्फूर्ति रही है ।

शोध प्रबंध के पूर्ण होने में जिन विद्वानों का सहयोग, परामर्श प्राप्त होता रहा है उनमें डॉ० शिवादत्त द्विवेदी, डॉ०रणजीत, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, डॉ० भगीरथ मिश्र, डॉ० नगेन्द्र ,डॉ० आनन्द प्रसाद दीक्षित,

डॉ0 प्रेम शंकर शुक्ल, डॉ0 सत्यनारायण त्रिपाठी, डॉ0 रामचन्द्र तिवारी , डॉ0 विश्वम्भर दयाल अवस्थी, डॉ0 ओम प्रकाश श्रीवास्तव, डॉ0 उदयभान सिंह डॉ0 जगदीश गुप्त, डॉ0 रघुवंश, डॉ0 विद्यानिवास मिश्र, डॉ0 विजय पाल सिंह आदि प्रमुख हैं । इनके प्रति मैं हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ ।

मैं उन साहित्य मनीषियों के प्रति भी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती हूँ जिनकी कृतियों को संदर्भ ग्रंथ के रूप में इस शोध प्रबंध में प्रयुक्त किया गया है ।

मेरी शोध यात्रा में अन्य जिन सहयोगियों का सहयोग प्राप्त हुआ उनमें श्रीमती शशि प्रभा दीक्षित (जिन्होंने शोध को मनोवैज्ञानिक सम्बल प्रदान किया) श्री कमलाकांत पाण्डेय कु0 निर्मला व्यास, प्रवक्ता समाज शास्त्र पं0 ज0ला0ने0म0, बांदा , कु0 आशा निगम, कु0 मंजु मिश्रा ,तथा टंकण कार्य में सहयोग देने वाले श्री विनोद कुमार द्विवेदी के प्रति भी मैं हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ । इस संकल्पना के साथ --

विमलेश शुक्ला
(विमलेश शुक्ला)

विषयानुक्रमणिका

		पृष्ठ संख्या
प्रकरण 1-	परिस्थितियाँ	000
	(क) राजनैतिक परिस्थितियाँ	1-7
	(ख) धार्मिक परिस्थितियाँ	7-10
	(ग) सामाजिक परिस्थितियाँ	10-14
	(घ) साहित्यिक परिस्थितियाँ	14-18
प्रकरण 2-3	जीवन वृत्त	
	हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में प्राप्त विवरण	19
	हस्तलिखित ग्रंथों की खोज रिपोर्ट का विवरण	20-21
	वाह्य साक्ष्य	22-24
	अन्तः साक्ष्य	
	लालदास का काल निर्धारण	24
	परिचय	25
	जाति एवं व्यवसाय	26
	स्थान	27-28
	व्यक्तित्व	29
	प्रकृति एवं जीवन दर्शन	30
	शिक्षा	31-32
	भक्ति	33
	रुचि	33-34
	दर्शन	34-35
	लालदास के जीवन की प्रमुख घटनाएँ	36-38

प्रकरण 3- कृतियाँ ,परिचय, प्रामाणिकता एवं अवधविलास का महाकाव्यत्व

कृतियाँ , परिचय, एवं प्रामाणिकता	39-41
वस्तु संगठन	42-45
संक्षिप्त कथा वस्तु	45-51
कथावस्तु की समीक्षा	52-56
कथावस्तु की मौलिकता	56-62
शास्त्रीय दृष्टि से कथावस्तु की समीक्षा	62-71
अवधविलास का महाकाव्यत्व	72-88

प्रकरण 4- भाव व्यंजना

सौन्दर्य चित्रण	89-95
श्रृंगार चित्रण	95-100
प्रकृति चित्रण	100-102
विविध भावों की व्यंजना	102-123
लालदास की सामाजिकता	124-127

प्रकरण 5- शिल्प विधान

	000
वस्तु शिल्प	128
शैली शिल्प	129-131
अभिव्यक्ति शिल्प	131
भाषा एवं उसके विविध रूप	131-163
काव्य गुण	163-166
काव्य रीति	166-168
अलंकार विधान	169-172
छंद	172-177

प्रकरण 6- **आचार्यत्व**

आचार्यत्व की परम्परा और लालदास	178-179
लालदास का आचार्यत्व	179-181
लालदास का काव्यादर्श	181-182
काव्य सृजन की प्रक्रिया	182-183
रस निरूपण और लालदास	183-186
दर्शन और लालदास	186-196
नायिका भेद और लालदास	197-204
भक्ति निरूपक आचार्यत्व	205- 209
ज्योतिष् और लालदास	209-215
संगीत निरूपक आचार्यत्व	215-221
छंद एवं अलंकार निरूपक आचार्यत्व	222-224
विविध काव्यांगों का विवेचन	
शब्द शक्ति	224-228
व्यंजना शक्ति	228-230
काव्यगुण एवं काव्य दोष	230-231
काव्य प्रयोजन	231-232
काव्य हेतु	232- 233
ध्वनि	233-236

प्रकरण 7- **मूल्यांकन के विविध दृष्टिकोण**

मूल्यांकन के आधार और समस्याएं	237-244
मूल्यांकन के विविध आयाम	244-247
पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव	247-253
पूर्ववर्ती संस्कृत काव्य, नीति, सूक्ति साहित्य का प्रभाव	253-256
अमरकोष और लालदास	257-258
स्मृति और लालदास	258-259

गीता एवं लालदास 260-261

पौराणिक साहित्य एवं लालदास 261-266

परवर्ती कवियों का प्रभाव 266

तुलनात्मक मूल्यांकन 266-268

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में लालदास का योगदान 268-271

परिशिष्ट(अ) सहायक ग्रंथों की सूची 272-275

परिशिष्ट(ब) "अवधविलास" महाकाव्य की पाण्डुलिपि की फोटो स्टेट 276-278

-------------:::::::::::::::::::---------------

प्रथम प्रकरण

परिस्थितियाँ

राजनैतिक परिस्थितियाँ -

लालदास का 'अवधविलास' सं० 1732 सन् 1675 में लिखा गया[1]। चूंकि कवि को जन्म तिथि और निधन तिथि प्रामाणिकता के अभाव में निश्चित नहीं है, अतः ऐसा अनुमान करना स्वाभाविक है कि रचना काल की तिथि से लगभग 40-50 वर्ष का समय कवि के पूर्वार्द्ध का तथा रचनाकाल के कुछ पीछे तक कवि का उत्तरार्द्ध फैला हुआ है। इस प्रकार जिस समय 'अवधविलास' की रचना की जा रही थी वह समय इतिहास की दृष्टि से औरंगजेब का शासन काल सिद्ध होता है। विभिन्न इतिहास ग्रंथों से औरंगजेब का शासन काल 1658 से 1707 ई० प्रामाणिक ठहरता है[2]। औरंगजेब का शासन अशान्ति, रक्तपात ,हिंसा, धर्मान्धता, असहिष्णुता एवं अमानवतावादी माना जाता है, जैसा कि तत्कालीन इतिहास ग्रंथों से प्रमाणित है[3]। रक्त-पात और कोलाहल का प्रभाव संत कवियों में पड़ना स्वाभाविक है। लालदास का रचना संसार भी इससे अप्रभावित नहीं रह सका। कवि के काव्य में भले ही सीधे राजनैतिक घटनाओं को चित्रित न किया गया हो अथवा राजनीति का स्वर उतना मुखर न हुआ हो, किन्तु उनके काव्य में भक्त का एकान्त समर्पण मात्र पलायन नहीं है जैसा कि इस काल

1- संवत सत्रह सय बत्तिस सुधि बैशाष सुकाल।
   लाल अवधि मधि रहि रच्यो अवधविलास रसाल ।।
   अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 9

2- अ- Foreign policy of the great Moughals, 1526-1727, R.C.Verma.
   ब- SHORT HISTORY OF Aurangzeb. J.N.Sarkar, Chap.II,P.42
   स- मुगलकालीन भारत, डॉ० उपेन्द्र ठाकुर, चतुर्थ संस्करण,पृ० 79

3- अ- Aurangzeb, J.N.Sarkar, Vol. II, P. 544-45.
   ब- IBID, P. 183

के इतिहास से भी विदित होता है। रामानंदी सम्प्रदाय के विभिन्न वर्ग अनी (सेना) तथा अखाड़े के नाम से संगठित किये गये और इसी आदर्श के अनुकूल उन्हें सैनिक तथा मल्ल शिक्षा देने की व्यवस्था की गई। लालदास ने भी मल्ल विद्या के अनेकों दाँव-पेचों का वर्णन किया है, जिससे तत्कालीन राजनैतिक और सांस्कृतिक स्थितियों का पता चलता है। उनके काव्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि कवि की राजनैतिक प्रतिबद्धता एक सीमा तक रही है। उसके काव्य का मूल स्वर राजनीति के विद्रोह में भले ही मुखरित न हुआ हो पर अपने समय के दबाव और उसके भीतर होने वाले घटना चक्र का संकेत सर्वत्र मिलता है। किसी भी कवि का रचनाधर्म, चाहे वह कितना ही स्वप्न जीवी क्यों न हो, अपने युग बोध से असम्पृक्त नहीं रह सकता। देशकाल की सीमाएँ एक सीमा तक बिना अभिव्यक्ति लिए नहीं रह सकतीं, भले ही कवि सार्वभौमिक संवेदना का कवि क्यों न हो। लालदास का कवि और उनका कृतित्व भी किसी एक देश काल की सीमा में संकुचित नहीं है। वह सार्वभौमिकता की परिधि में विश्व मानवीय संवेदना का कवि है। जाति ,वर्ग, धर्म, की सीमाएं भक्तों और संतों के मनोदेश को बाधित नहीं करती, इसीलिए उनके काव्य में अभिव्यक्त देशकाल भी प्रत्यक्ष शैली को छोड़कर अन्य प्रविधियों से व्यक्त होता है। कवि के कृतित्व के अनुशीलन के लिए उस युग की राजनैतिक चेतना का अध्ययन भी इसी संदर्भ में अनिवार्य है।

लालदास तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों के प्रति सचेष्ट दिखाई पड़ते हैं। यही कारण है कि उनके राम मात्र रसिकोपासक, साम्प्रदायिक राम नहीं हैं, वे बाल्यकाल से ही दुष्टों के दलन में सचेष्ट दिखाई पड़ते हैं। वैसे तो लालदास के राम तुलसी के राम की भाँति धनुष-बाण नहीं छोड़ते, फिर भी उनके राम सदैव सावधान रहते हैं -

"सावधान सबहीं समय गहे धनुष कर तीर।
लाल भक्त की भीर महिं आइ परत रघुबीर ।।"[2]

1- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, डाॅ0 भगवती प्रसाद सिंह ,पृ0 120-121

2- अवधविलास, लालदास, सं0डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 114

'सावधान' शब्द का प्रयोग कवि ने अपने युग की राजनैतिक विसंगति को व्यक्त करने के लिए किया है। मुगलों के आक्रमण बिना किसी पूर्व सूचना के तथा आकस्मिक हमलों के रूप में हुआ करते थे। आकस्मिक आक्रमण को ही लाल-दास ने सैनिक शब्दावली के प्रयोग {सावधान} से व्यंजित किया है। इतना ही नहीं बाल्यकाल से ही राम बालू के कोट बनाते हैं और बालकों के साथ फौज बनाकर खेल खेलते हैं। रसिकोपासक के राम सरयू में विहार तक ही सीमित रह गये हैं किन्तु लालदास के राम कोट और फौज बनाते हैं। वह केवल नाव नवरि तक ही सीमित नहीं रहते, अपितु दुष्ट राजाओं से कर {टैक्स} भी माँगते हैं और राम राज्य के लिए कर न देने वाले राजाओं पर सेना लेकर चढ़ाई करते हैं तथा उनके गढ़ तोड़ते हैं। इतना ही नहीं, उन्हें बंदी भी बनाते हैं। इस प्रकार का एक वर्णन देखें -

"कबहुँकि बालू कोट बनावहिं। करि करि फौजन्हि चढ़ि चढ़ि धावहि।

x x x

केउ नृप दुष्ट होइ फिर रहई। कर नहिं देहिं राम कौ कहई।
तब लै सैन्य चढ़ै तिन सौहैं। मारै दौरि- दौरि गढ़ मौहैं।

x x x

जोरावर कौ पकरि मिलावै। राम काज के पाइ लगावै।।"[1]

इसी प्रकार चतुर्दश विश्राम में राम राज्य का जो वर्णन किया है, उसमें तत्कालीन मुगल साम्राज्य के समानान्तर एक साम्राज्य का रूपक व्यक्त किया है। यह सब युगीन राजनैतिक चेतना के ही सूचक हैं। कवि ने राम और रावण के युद्ध के प्रसंग को नहीं लिया क्योंकि रसिकोपासना के अंतर्गत इस घटना को कल्पित माना जाता है किन्तु विष्णु के द्वारा दानवीय शक्तियों के दलन हेतु जो चित्र कवि ने दिए हैं, वे प्रकारान्तर से राम के ही चित्र हैं और ऐसे वर्णनों में युद्ध का जैसा सजीव वर्णन कवि ने किया है, उससे सिद्ध होता है कि कवि रसिक धारा के सिद्धान्तों से सम्बद्ध होकर भी अपने युग की परिस्थितियों को नकारने वाले नहीं है। जहाँ कहीं कवि को अवसर

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 322

मिला है, उन्होंने इस प्रकार के संकेत किये हैं। उदाहरण के लिए बालकों के खेल के ही प्रकरण को लें, माताओं का यह कथन कि घर से बाहर मत निकलो अन्यथा दाढ़ी वाले तुरक पकड़ ले जायेंगे -

"हाथन्ह छुरी तुरिक दढ़ियारे। कटिहैं कान जाहु जिनि द्वारे।"[1]

तत्कालीन तुर्कों द्वारा किये गये बलात् धर पकड़ को रेखांकित किया है।

औरंगजेब का शासन उत्तराधिकार की लड़ाइयों से भरा पड़ा है[2]। उत्तराधिकार के लिए शाहजहाँ के चारों पुत्र युद्ध करने लगे। उत्तराधिकार के लिये जो भयंकर युद्ध हुए तथा नृशंस हत्याएं व रक्तपात का वातावरण उत्पन्न हुआ, उससे राजनैतिक स्थितियाँ अस्थिर हो उठी। अधिकारों के लिए जो युद्ध किये गये उनसे भयंकर अव्यवस्था व अशांति फैल गई। इसका प्रभाव हिन्दू राजाओं पर भी पड़ा और वे भी उत्तराधिकार के लिए युद्ध करने लगे। "यदि दिल्ली का औरंगजेब सिंहासन के लिए अपने भाइयों का वध कर सकता था तो आगरे का रामसिंह मुगलों की कृपा पर निर्भर छोटे से राज्य के लिए अन्य व्यक्तियों के संकेत से विष द्वारा अपने पिता की हत्या कर सकता था[3]।"

औरंगजेब की धार्मिक असहिष्णुता तथा राजनैतिक कट्टरता ने पूरे राष्ट्र के जीवन को अस्त व्यस्त कर दिया था। राजपूताने में विद्रोह की आग भड़क रही थी। पंजाब में गुरू गोविन्द सिंह औरंगजेब की नीतियों का विरोध कर रहे थे। दक्षिण में शिवाजी मुगलशासन का विरोध कर रहे थे। मेवाड़ प्रान्त के शिशोदिया वंशीय राणा, बुन्देलखण्ड के वीर बुन्देले, दक्षिण के मराठे, सभी औरंगजेब की राजनैतिक कट्टरता से विक्षुब्ध थे। औरंगजेब की कट्टरतावादी राजनैतिक दमनात्मक शक्तियों ने इस्लाम धर्म के प्रसार तथा हिन्दू धर्म के दलन का

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 299
2- मुगलकालीन भारत, डॉ० आशीर्वादलाल श्रीवास्तव चतुर्थ संस्करण, पृ० 379
3- बिहारी और उनका साहित्य, डॉ० हरवंश लाल शर्मा, पृ० 16-17

कार्य किया। हिन्दुओं पर जजिया कर लगाया गया तथा हिन्दू मन्दिरों को तोड़ने का फरमान जारी किया गया।

लालदास ने 'अवधविलास' में मन्दिरों के तोड़े जाने का संकेत किया है -

"बापी कूप तड़ाग तुरावै। विप्र ग्रेह देवल भहरावै[1]।

औरंगजेब कालीन राजनैतिक व्यवस्था प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों के विपरीत निरंकुशता तथा राजतंत्रीय पद्धति पर आधारित थी। औरंगजेब के समय में राज्य का खर्च और भी बढ़ गया था। वह अपने जागीदारों और सामन्तों से बड़े-बड़े उपहार लेकर उन्हें ओहदे देता था। इस बात का संकेत लालदास ने अपने काव्य के माध्यम से किया है -

"जो कर भाव उसोला जागै। ताकी अवसि चाकरी लागै[2]।।"

इस प्रकार सामन्तीय शासन निर्बल हो गया था। एकतन्त्र शासन प्रणाली में सैनिक व्यवस्था का महत्व सर्वोपरि था। शासन में आतंक व्याप्त था। जनजीवन असुरक्षित था। मुगलशासन की आक्रामक तथा बर्बर स्थितियों का प्रतिफलन लालदास के काव्य में भी परिलक्षित होता है -

" कहत है ठग आवत है दौरा। लरिकन्ह बेचि लेत हैं बौरा।
बाबू केउ जाहु जिनि काटी। बाहर तो बिगवा है बाटी[3]।।

लालदास ने लड़के बेंच कर घोड़े खरीदने का जो चित्र खींचा है, उसमें औरंगजेब कालीन परिस्थितियाँ तथा उनका राजनैतिक आक्रामक स्वरूप स्पष्ट रूप से व्यक्त होता है।

औरंगजेब की राजनीति कूटनीति परक थी। छल-छद्म के द्वारा वह प्रभुसत्ता का विस्तार करना चाहता था तथा हिन्दू राजाओं को परस्पर लड़वा कर नये प्रदेशों को विजित करने की नीति अपनाये था। उसकी इस राजनैतिक कूटनीति की ओर संकेत करते हुये कहा गया है कि वह दो हड्डियों

1- अवधविलास, लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 169

2- उपरिवत, पृ0 314

को हिलाकर तोड़ देता था[1]। औरंगजेब का समस्त जीवन राजनीति के वात्याचक्र में उलझा रहा। उसका पूर्वार्द्ध जमींदारों और राजाओं तथा हिन्दुओं के धार्मिक झगड़ों और विद्रोहों को दबाने में व्यतीत करना पड़ा और उत्तरार्द्ध मुक्तिकामी दक्षिणापथ को अधिकार में बनाए रखने में बिताना पड़ा। राजनैतिक क्षेत्र में राजपूतों की स्वतन्त्रता का अपहरण सम्पूर्ण राजपूताने को विद्रोह के लिए प्रेरित करने वाला सिद्ध हुआ। स्वाभिमानी राजपूत पराधीनता को स्वीकार नहीं करना चाहते थे। मारवाड़ और मेवाड़ में विद्रोह की लपटें उठने लगीं।

पंजाब में गुरू तेग बहादुर की हत्या तथा गुरू गोविन्द सिंह के दो नौजवान पुत्रों को चुनवा देने के कारण जो विप्लवकारी चेतना जागृत हुई, उससे राजनैतिक अस्थिरता उत्पन्न हुई। लालदास ने रावण के जन्म कालीन विप्लव पूर्ण वातावरण के चित्र से तत्कालीन समाज की राजनैतिक अव्यवस्था व मुगलकालीन आतंक की व्याप्ति की व्यंजना की है -

"टूटे लुक धूरि उधिरानी। बरषै रूधिर भूमि थहरानी।

x x x x

चले पवन आँधी अरू पानी। उपरौ रूप शिला उधिरानी।
गज रूदन मुनि बदन मलीना। देव विमान भए गति हीना[2]।

दक्षिण प्रदेशों में औरंगजेब की धार्मिक असहिष्णुता के कारण शिया राज्य की शक्ति क्षीण पड़ गयी थी। शिया राज्यों की स्वतन्त्रता का अपहरण किया जाने लगा[3]। औरंगजेब के प्रतिरोध में सारा हिन्दू राज्य जागृत हो उठा। शिवाजी के नेतृत्व में महाराष्ट्र, गुरुगोविन्द के नेतृत्व में पंजाब, समर्थ गुरु रामदास के नेतृत्व में दक्षिण तथा जाटों के संघर्ष ने राजपूताना को संगठित किया। सम्पूर्ण राष्ट्र में हिन्दुत्व की एक चेतना जागृत हुई। ऐसी परिस्थितियों में साहित्य के द्वारा

1- Breaking two bones by knocking them together.
History of India, L. Mukerji.

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 80

3- "शिया दान दै के जिया दान लीजै।"
रामविनोद, चंददास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, प्राक्कथन, पृ०33

वीर भावों का जागरण किया गया । भूषण, चंद , लाल कवि आदि ने राष्ट्रीय जागरण में अपना योगदान दिया ।

हिन्दू संस्कृति पर जो बर्बर आक्रमण हो रहा था, उसका प्रतिरोध साहित्यिक क्षेत्र में धर्म प्रधान रचनाओं द्वारा किया जा रहा था तथा ऐसे सम्प्रदायों में भक्त और संत दोनों थे और दोनों प्रकार की धाराएँ कार्य कर रही थीं । एक तीसरी धारा जिसे साहित्य में प्रमुख स्थान दिया गया वह रीतिकालीन कवियों की थी, जो श्रृंगारपरक तथा रीति वृत्तियों पर आधारित रचनाएँ कर रहे थे । उस युग की मनोवृत्ति श्रृंगार-परक हो गई थी । राष्ट्रीय जनजीवन में हिन्दुत्व को स्थायित्व प्रदान करने में जिन कवियों की वाणी ने शंखनाद किया उनमें लालदास का 'अवधविलास' भी प्रमुख महत्व रखता है । लालदास का उद्देश्य भक्तिपरक रचनाओं का था इसलिए वे न तो युग की उपेक्षा कर सकते थे और न अपने अन्तर्मन की । अतः वे भक्ति की रसिक धारा को अंगीकार करके आगे चले । इस प्रकार समकालीन राजनीति ने साहित्य सृजन को प्रेरक परिस्थितियाँ प्रदान की ।

धार्मिक परिस्थितियाँ -

किसी भी युग की धार्मिक परिस्थितियाँ उस युग की साहित्यिक रचनाधर्मिता को प्रेरित तथा प्रभावित करती हैं । धार्मिक क्षेत्र की सम्पन्नता और विपन्नता, नैतिक मूल्य और मर्यादाएँ, धार्मिक मत एवं विश्वास सभी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक चेतना के निर्माण में प्रभावी तत्व के रूप में आते हैं ।

लालदास के साहित्य को धार्मिक पृष्ठभूमि ने एक बड़ी सीमा तक प्रभावित किया है । रीतिकाल में धर्म तथा नैतिकता की मान्यताएँ शिथिल हो रही थी तथा विभिन्न सम्प्रदायों में धार्मिक समाज विभक्त हो गया था । सगुण तथा निर्गुण की धाराएँ केवल कबीर, सूर और तुलसी के प्रतिनिधि वर्गों तक ही नहीं थी बल्कि विभिन्न प्रकार के धार्मिक अखाड़ों में बँट चुकी थी । धर्म का ह्रास और अधः पतन इस सीमा तक हो रहा था कि इस युग को सुरा और सुन्दरी से आपूर्ण

के युग को संज्ञा दी गई ।

धार्मिक विश्वासों को तन्त्र -मंत्र , जादू -टोने ने ग्रस्त कर लिया था । तत्कालीन तान्त्रिक प्रभावों की व्यंजना लालदास ने अपने अवधविलास में की है -

"बशीकरन मोहन क्रषन शत्रुदमन गुण एक ।
सब मन्त्र संसार महिं अवधबिलास है एक[1] ।।"

औरंगजेब की कट्टर धार्मिकता हिन्दू जनजीवन को नारकीय बना रही थी । हिन्दू मंदिरों को तोड़ने का अभियान प्रारंभ किया गया जिसके परिणाम स्वरूप अन्य बहुत से मंदिरों के साथ- साथ भारत के प्रसिद्ध मंदिरों काशी के विश्वनाथ, गुजरात के सोमनाथ, मथुरा के केशवराय, जोधपुर, उज्जैन, उदयपुर, गोलकुण्डा, बीजापुर और महाराष्ट्र के लगभग सभी मंदिरों को ध्वस्त किया गया । मनुष्य के लिए उसके धर्म से अधिक पवित्र और कुछ नहीं हो सकता, फिर धर्मप्राण कहा जाने वाला आध्यात्मवाद का जगत्गुरु भारत इस प्रकार के धार्मिक आघात कहाँ सहन कर सकता था । परिणाम स्वरूप अवध के कुछ राजपूत , इलाहाबाद के जमींदार, नारनौल और मेवाड़ के सतनामी सम्प्रदाय के सन्तों ने अपनी अप्रतिम धर्मनिष्ठता का प्रदर्शन किया । उन्होंने औरंगजेब की इस धार्मिक कट्टरता के विपरीत विद्रोहात्मक स्थितियाँ उत्पन्न कीं, जिसका सामना करना औरंगजेब के लिए कठिन हो गया। मंदिरों के तुड़वाने मे ऐतिहासिक तथ्य की पुष्टि कवि‌वर लालदास के 'अवधविलास' से भी हो जाती है -

" पुर ग्राम की सीव मिटावै ।
x x x
वापी कूप तड़ाग तुरावै । विप्र गेह देवल भहरावै[2] ।"

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित पृ0 6

2- उपरिवत् , पृ0 169

औरंगजेब कालीन कवि भूषण की कविता से औरंगजेब ~~न~~ द्वारा हिन्दू धर्म पर किये गये अत्याचारों की व्यंजना हो जाती है -

"देवल गिरावते फिरावते निसान अली।
ऐसे समै राव राने सबै गये लबकी ।।

x x x

कासी हू कि कला गई , मथुरा मसीत भई,
शिवाजी न हो तो सुनति होति सब की ।। "[1]

औरंगजेब ने अधिकाधिक हिन्दू धार्मियों को अनेक प्रकार के कर आदि लगा कर इस्लाम धर्म को स्वीकार करने के लिए बाध्य किया तथा इस्लाम धर्म स्वीकार करने वाले हिन्दुओं को पुरस्कार, सम्मान और उच्चपद प्रदान किये । औरंगजेब की धार्मिक नीति इतनी एकांगी थी कि वह इस्लाम को छोड़कर समस्त धर्मों को मिथ्या मानता था । यहाँ तक कि न्याय~~//~~ करते समय भी अन्य बातों पर ध्यान न देकर केवल अपने धर्म का ही ध्यान रखता था । औरंगजेब की धर्मान्धता की पुष्टि सर जे०एन० सरकार द्वारा भी की गई है[2] । औरंगजेब ने न केवल मंदिरों के विध्वंस का बीड़ा उठाया अपितु काफिरों के पाठशालाओं को विनष्ट करने के साथ- साथ मूर्ति पूजा तथा उससे सम्बंधित शिक्षा का प्रसाद पूर्णतया बंद करा दिया ।

औरंगजेब एक कट्टर सुन्नी मुसलमान शासक था । वह भारत वर्ष को एक सुन्नी इस्लाम राष्ट्र बनाने का उद्देश्य लेकर राजनीति के क्षेत्र में आया[3] । उसकी धार्मिक अंधभक्ति ने गैर मुस्लिम राष्ट्रों को इस्लामी करना चाहा।

1- भूषण ग्रंथावली , पृ० 140

2- (अ) मुगल साम्राज्य का पतन सर जे०एन० सरकार
(ब) The fall of the Moughal Empire by Sidney J.OWEN, p.39

3- Aurangzeb Was an orthodox Sunni Mussalman and the great object of his life was to make India a land of orthodox Sunni Islam.
History of India, Medieval period,

उसकी इसी धार्मिक कट्टरता ने हिन्दुओं के संवेगों, सिखों की धर्म निष्ठता को आघात पहुँचाया । औरंगजेब के अधिकांश युद्ध धार्मिक बदलाव के युद्ध हैं । यहाँ तक कि वह दाराशिकोह की उदारतावादी धार्मिक नीति के विरोध के कारण ही सम्पूर्ण जीवन भर दारा के विरोध में रहा । उसने सिक्खों में इस्लामी कलमा की कुछ पंक्तियाँ खुदवायी । उसकी कट्टरता के कारण मुसलमान उसे जिन्दा पीर भी कहा करते थे । हिन्दुत्व पर सबसे अधिक प्रहार औरंगजेब ने किया । बनारस जैसे हिन्दू धर्म के गढ़ पर उसकी आँख लगी थी । पवित्र मंदिरों को तोड़ने के पीछे उसकी धार्मिक कट्टरता ही काम करती थी । स्वायत्त कर विभाग में उसने हिन्दुओं की नियुक्ति पर रोक लगा दी थी । उसकी धार्मिक चुनौतियों के परिणाम स्वरूप ही जाट, बुन्देले और सतनामियों तथा सिक्खों के आन्दोलन प्रारम्भ हुए । गुरु गोविन्द सिंह ने तो सिक्ख धर्म का संगठन सैनिक शक्ति के रूप में ही किया, क्योंकि उन्हें औरंगजेब की कट्टर धार्मिक नीति का सामना करना था । सिक्ख संगठन को, जिसे खालसा भी कहा गया है, कृपाण रखना इसलिए धर्म का आवश्यक अंग हो गया क्योंकि युद्ध धर्म की एक अनिवार्य विवशता हो गई थी । पाश्चात्य इतिहासकारों ने भी औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता, साम्राज्य विस्तार तथा हिन्दू राष्ट्र को दारुल इस्लाम बनाने की महत्वाकांक्षा पर प्रकाश डाला है[1] । उक्त परिस्थितियों को संदर्भ में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि 'अवधविलास' का रचनाकार इनके प्रति सजग था तथा हिन्दू संस्कृति के संरक्षण के प्रति चिन्ताशील रहा है। 'अवधविलास' महाकाव्य, जिसमें कवि के द्वारा धर्म पर विशेष बल दिया गया है तथा धार्मिक कृत्यों एवं विश्वासों की रक्षा पर चिन्ता व्यक्त की गई है, सामयिक धार्मिक वृत्तियों को ध्यान में रखकर लिखा गया है ।

1- Aurangzeb's policy of treating the Empire as a Muslim state instead of an Indian State with Islam as the state religion.

History of India,
Percival Spear Vol. II, P. 71

सामाजिक परिस्थितियाँ -

सामाजिक परिस्थितियों का प्रतिबिम्ब साहित्य में प्रतिफलित होना स्वाभाविक है । साहित्य अपने समय का दर्पण भी होता है। सामाजिक परिस्थितियों के अंतर्गत रहन ,सहन, वेशभूषा, रूप सौन्दर्य, स्वभाव, शिक्षा, वस्त्र,आभूषण,श्रृंगार प्रसाधन, स्त्रियों का जीवन , विधवाओं की स्थिति नौकर-चाकर , वर्ण व्यवस्था, विवाह, बाल विवाह, बहु विवाह, सतीप्रथा, पर्दा प्रथा, कौटुम्बिक जीवन आदि का विवरण दिया जाता है ।

लालदास के काव्य में भी सामाजिक परिस्थितियों के चित्र मिलते हैं । हिन्दुओं के मंदिरों पुस्तकालयों तथा पूजा- पाठ के स्थानों में जो प्रतिबंध और दुर्व्यहार होता था, उसकी चिन्ता लालदास के काव्य में विद्यमान है। मूर्ति खण्डन, देवालयों का विध्वंस, ग्रंथों का जला देना, ये भी लालदास की चिन्ता के विषय रहे हैं । हिन्दुओं की बेटियों पर मुस्लिमों की कुदृष्टि थी, इसका संकेत भी कवि ने किया है । आर्थिक दृष्टि से समाज दो वर्गों में बटाँ हुआ था, प्रथम राजा, रईस, नवाब, सामन्त आदि तथा दूसरा वर्ग श्रमिक तथा खेतिहर था । कवि ने इस आर्थिक विषमता का भी रेखांकन अपने काव्य में किया है । नृत्य आदि का भी विलासी वातावरण समाज में था । मुगलों के अंतःपुर में हजारों युवतियाँ तथा परिचारिकाएँ रहा करती थीं तथा मुक्त नृत्य हुआ करता था । 'अवधविलास' में एक वेश्या के द्वारा श्रृंगी ऋषि को रिझाने के प्रसंग की कल्पना करना युगीन विलासी वृत्ति का प्रतिबिम्ब है -

"आयसु पाइ आइ भई ठाढ़ी । मानहु रूप सिंधु सें काढ़ी ।।
हँसि मुसिक्याइ कहे जब राजा । बेगिहिं जाइ करहु इह काजा ।।

x x x

करिए जाइ उपाइ सुभाँती । श्रृंगी रिषि आवे जेहि भाँती ।। "[1]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 176

मुगलकालीन सामाजिक स्थिति सुरा -सुन्दरियों की थी तथा मुगलशासक विलास प्रिय थे। वे युवतियों और सुन्दर स्त्रियों के लिए मीना बाजार लगवाते थे। अत: ऐसी स्थिति में कन्याओं का होना सामाजिक अभिशाप हो गया था तथा हिन्दू अपना सम्मान सुरक्षित रखना चाहते थे। लालदास के 'अवधविलास' में इस तथ्य की पुष्टि होती है -

"कन्या बेगि निकासिए बधु राषि घर माहिं।"[1]

उपर्युक्त पंक्ति में लोक जीवन में व्याप्त मुस्लिम शासकों का भय व्यंजित हुआ है। इसी प्रकार सप्त वर्षीय कन्या को ब्याहने[2] का जो संकेत लालदास ने किया है, वह तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव है।

अनमेल विवाह सामाजिक दृष्टि से कल्याणकारी नहीं माना जाता किन्तु मध्ययुगीन समाज में इसका प्रचलन था। इसका संकेत लालदास ने इस प्रकार किया है -

"तुम तै छोटि सयानि कि जोरी। सांवरि है कि दुलहनी गौरी[3]।।"

भारत वर्ष में 'सतीप्रथा' का प्रचलन बहुत पहले से पाया जाता है। लालदास के समय में भी यह प्रथा प्रचलित थी। कवि ने वृन्दा के प्रसंग में उसके सती रूप का वर्णन किया है -

"तीनउं जरी छांड़ि सुष भोगा। जालन्धरकें बिरह बियोगा।
देषहिं हरि ठाढ़े मुष आगे। जरि बीती तब रोवन लागे[4]।।"

मुगलकालीन शासन में राजाओं के द्वारा अनेक पत्नियों को रखना प्रमाणित होता है।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 295
2- उपरिवत्, पृ० 295
3- उपरिवत्, पृ० 179
4- उपरिवत्, पृ० 139

स्वयं औरंगजेब अपने महल में कई सौ रानियों को रखता था । लालदास ने इसी युगीन प्रभाव को क दशरथ के प्रसंग में व्यक्त किया है -

"साढ़े सात सयकरे रानी । गावत गीत कोकिला बानी ।।"[1]

इससे बहु पत्नीत्व प्रथा का अनुमोदन होता है ।

सामाजिक संगठन में वर्ण व्यवस्था को भी प्रमुख भूमिका रही है। समाज चार वर्णों में विभाजित था । ऋग्वेद के पुरुष सूक्त[2] में पुरुष के रूपक से समाज को चार अंगों में विभाजित किया गया है । लालदास भी वैदिक वर्ण व्यवस्था के सिद्धान्त को मान्यता प्रदान करते हैं । उदाहरण के लिए -

(अ) "मुष तैं विप्र बाहु तैं राजा । हृदय वैश्य पग सुद्रहिं साजा ।।"[3]

(ब) "जनम्त बेर शुद्र बस कोई । संस्कार तैं ब्राहमन होई ।
छत्री वैश्य नाम ए धरना । सो तो संस्कार करि बरना ।।"[4]

वर्ण व्यवस्था के साथ आश्रम व्यवस्था भी वैदिक समाज व्यवस्था का एक अंग है । ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास नामक चार आश्रमों में सम्पूर्ण जीवन विभक्त किया जाता था । लालदास भी आश्रम व्यवस्था का समर्थन करते हैं । लालदास के समक्ष अपना युग और देशकाल है।कविने मुगलकालीन शासन के अंगों और विभागों के रूपक से सामाजिक सुदृढ़ता का विवेचन किया है । कवि ने अपने ग्रंथ में तत्कालीन समाज के विभिन्न अंगों का रूपक बैठाया है । उदाहरण के लिए न्यायपालिका, धेरवार,दीवान, कानूनगो, कोतवाल, तहसीलदार, अमीन, मुंशी तथा मालत्र विभाग संबंधी रूपक प्रस्तुत किया है -

"ब्रहमा से दीवान हैं जाकें । स्वायंभु मनु मंत्री ताके ।

x x x

1- अवधविलास,लालदास,सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 23।

2- ब्राह्मणोऽस्य मुखामासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ।"
ऋग्वेद, पुरुष सूक्त 10/90/12

3- अवधविलास,लालदास,सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 30

4- उपरिवत्, पृ० 160

"कोतवाल जमराज हैं जोरा । भैरव ताको फिरत करोरा ।
धर्मराज पुनि रहत अमीना । ग्राम देव कानूनगो कीना ।

x x x

हैं गणेश मुंशी बुधवंता । लिखत किताब कि रहत अनंता ।।[1]"

नारी महत्व व सह शिक्षा के सम्बंध में कवि का दृष्टिकोण अत्यन्त सहृदय और संवेदन शील दिखाई पड़ता है । वह नारी के सम्बंध में संतों से भिन्न दृष्टिकोण लेकर चलते हैं । उनके अनुसार नारी के छूट जाने पर नाड़ी ही छूट जाती है अर्थात जीवन संगिनी से पृथक होकर पुरुष का जीवन ही व्यर्थ हो जाता है -

" नारी प्यारी जीव कैं न्यारी करी न जात ।
नारी के न्यारे भये नारी छूटि ही जात ।।[2]"

इसी प्रकार वह स्त्री -शिक्षा का समर्थन करते हैं । राजपुत्रियाँ तथा विभिन्न वर्गों की कन्याएं गुरु के समीप मंडलाकार बैठकर अपना पाठ पढ़ती हैं । इस प्रकार नारी शिक्षा के प्रति लालदास का दृष्टिकोण संकीर्ण नहीं प्रतीत होता । वह उदारतावादी तथा मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर चलते हैं -

" प्रथमहिं बाला व्याकरण साधन्हि करै लागि ।
सुमिरि सरस्वति लै परी लिखन लगी अनुरागि ।।[3]"

इस प्रकार समाज के विभिन्न अंगों का तथा उसके संगठन के विभिन्न स्वरूपों का प्रतिबिम्ब उनके काव्य में मुखरित हुआ है ।

साहित्यिक परिस्थितियाँ -

लालदास की समकालीन साहित्यिक परिस्थितियाँ रीति युगीन प्रवृत्तियाँ हैं, जिसमें कलात्मकता और अलंकरण की प्रवृत्ति प्रधान है । रीतियुगीन

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 313
2- उपरिवत् , पृ० 139
3- उपरिवत्, पृ० 293

कविता का प्रमुख स्वर श्रृंगारी और रसिक है । इस युग के श्रृंगारी कवियों ने श्रृंगार प्रवण मान्सलता का भी वर्णन किया है । लालदास पर रीतियुग की श्रृंगारी मनोवृत्ति का प्रभाव पड़ा है। रीतिकालीन आचार्यों की भाँति वे भी नख-शिख वर्णन और नायिका भेद का वर्णन करते हैं[1] ।

रीतिकालीन कवि अभिव्यंजना पर बल देता है, वे कवि कथन की भंगिमा पर मुग्ध होते हैं । उक्तियों के बांकपन पर रीझते हैं । लालदास पर रीति युगीन प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है । वे भी उक्ति को काव्य मानते हैं-

"कवि जन उक्ति विशेष बखानो। भाषा जैसीतैसी जानी[2] ।"

रीति के कवि कविकर्म के प्रति सचेष्ट दिखाई पड़ते हैं । वे कविता को श्रम साध्य मानते है । रीति स्वच्छन्द कवि रीतिबद्ध धारा से अलग हट कर प्रेम प्रसूत रचना करते है तथा मानसिक मनोराज्य में विचरण करते हैं किन्तु युग की प्रतिनिधि धारा जिसका प्रतिनिधित्व रीति बद्ध कवियों ने किया है, उसमें आचार्यत्व, पाण्डित्य प्रदर्शन, बहुज्ञता, अलंकरण, नख-शिख वर्णन आदि की प्रवृत्तियाँ प्रमुख हैं । लालदास रीति बद्ध कवियों की भाँति किसी परिपाटी से बँधे तो नहीं है, फिर भी उनकी रसिक काव्यधारा में रीति के तत्व समाये हुये हैं । 'अवधविलास' में जहाँ कहीं कवि की बहुज्ञता, छंदों का परिगणन, पिंगला विषयक सामग्री, नायिका भेद, नायक भेद, श्रृंगार के अंगों का वर्णन किया गया है, उसमें रीति काव्य के छीटें दिखाई पड़ते हैं ।

लालदास की समकालीन साहित्यिक प्रवृत्तियों में बहुत अधिक विस्तार पाया जाता है । भक्ति, रीति, वीरता आदि की धाराएँ इस युग में मिलती और बिछुड़ती हुई चलती हैं। इस युग के कवि आचार्य भी हैं साथ ही रस सिद्ध कवि भी हैं ।

रीतिबद्ध कवियों ने काव्यांग विवेचन को भी अपना विषय

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 258

2- उपरिवत् , पृ0 12

बनाया है । केशव, आचार्य भिखारीदास, कुलपति, प्रतापशाह आदि आचार्य कोटि के कवि हुए हैं। अधिकांश कवियों ने संस्कृत के उत्तरवर्ती अलंकार ग्रंथों को अपने काव्यांग विवेचन का आधार बनाया । चन्द्रालोक, कुवलया नन्द, रस तरंगिणी, रसमंजरी आदि ग्रंथों से प्रभाव ग्रहण किया । लालदास ने स्वयं नायिका भेद प्रकरण के अंतर्गत रसमंजरी का उल्लेख आधार ग्रंथ के रूप में किया है । कवि के शब्दों में -

" नायक है अनुकूल दक्ष पुनि सठ धृष्ट बखानि ।
लक्षण हैं रसमंजरी ते तहँ लीजेहु जानि ।।"[1]

भानुदत्त कृत 'रसमंजरी' हिन्दी के रीतिकालीन आचार्यों का ही नहीं भक्ति युगीन आचार्य कवियों का भी प्रेरक ग्रंथ रहा है[2]।

रीतिसिद्ध कवियों की मानसिकता इससे भिन्नरही है रीति सिद्ध कवि संस्कृत ग्रंथों से परिचित रहे हैं किन्तु इन्होंने रीति विषयों का प्रतिपादन न करके केवल उनका रस परिपाक कराया है । ऐसे कवियों में बिहारी प्रति- -निधि कहे जाते है । इसी काल के कवियों में रीतिमुक्त धारा के कवि भी आते हैं । इन कवियों ने परम्परा से हट कर प्रेम की स्वच्छन्द मनोवृत्तियों पर प्रकाश डाला है । घनानन्द , आलम,बोधा, शुभान इसी वर्ग के कवि हैं । लालदास अपने युग की दरबारदारी से मुक्त हैं किन्तु वे विकल्प में एक दूसरी दरबारदारी स्वीकार करते हैं । रीतिकाल का स्वर प्रेम प्रधान है । लालदास भी रसिक साधना का आधार प्रेम ही मानते हैं । श्रृंगार इस युग की मूलधारा है । लालदास उसी श्रृंगार भावना को भक्ति में रूपान्तरित कर देते हैं । कलात्मकता इस युग के साहित्य की एक विशेष देन है । लालदास भी अपने प्रबंध को अधिकाधिक कलात्मक बनाते हैं । काव्य रूप की दृष्टि से रीति काल में प्रबन्ध काव्य की अपेक्षा मुक्तक काव्य को प्रधानता रही है । ऐसी स्थिति में जिन कवियों ने प्रबंध काव्यों की रचना की ,उनका योगदान काव्य रूप के विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है । लालदास

1- अवधविलास,लालदास,सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 228

2- उपरिवत्, सम्पादक टिप्पणी, पृ0 228

ऐसे ही कवि हैं। उनमें केशव की रामचन्द्रिका , चंददास का रामविनोद और लालदास का 'अवधविलास' प्रमुख प्रबंध प्रतीत होते हैं।

रीतियुगीन राम काव्य धारा के अंतर्गत केशव की रामचन्द्रिका आचार्यत्व के अधिक समीप है। चंददास का 'रामविनोद' रूपक प्रधान होने के कारण भक्ति के साथ और भावों की भी व्यंजना करता है किन्तु विशुद्ध रसिक भाव धारा को प्रवाहित करने में लालदास के 'अवधविलास' को विशिष्ट महत्व दिया जाना चाहिए।

युगीन साहित्यिक परिस्थितियों के प्रभाव ने ही लालदास के काव्य को एक नये मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है। यही कारण है कि उसमें जहाँ एक ओर शृंगार रस को रसराज के रूप में मान्यता दी गई है, वहीं रसों के विवेचन में अथवा उसके भेद और प्रभेदों में रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। छंदों की जो तालिका कवि ने दी है उसमें भी आचार्यत्व का पुट दिखाई पड़ता है। शृंगार के प्रसंगों में जिन हाव-भावों का कवि ने वर्णन किया है उसमें एक विदग्ध आचार्य प्रतिभा का दर्शन होता है। ठगिनी के विलास वर्णन में रति विलास की जो चेष्टाएँ दिखाई गयी हैं उसमें आलिंगन तथा संभोग की ऐसी भी मुद्राएँ हैं जिन्हें भक्तिकालीन शृंगार की परिधि में रखना कठिन है। ऐसे स्थलों में रीतिकाल का प्रभाव स्पष्ट है। उदाहरण के लिए-

"कबहुँ कि बसन बाँधि पिचरि छोरै। कबहुँ कि चंचल इतउत दौरै।
कबहुँ कि कर सों कर गहि बाला। उरज छुवावति हृदय रसाला।

x x x

कबहुँ कि कोमल पात बिछौना। लै बैठति सुनि कों छवि भौंना।

लालदास पर युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियाँ हावी नहीं होती, वे रीतिकाल में भी भक्ति शृंगार की रसिक धारा से आप्लावित होते हैं। रसाद्रता, भावुकता

1- अवधविलास, लालदास, सं० डाॅ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 184-85

तथा मार्मिकता उनके काव्य की प्रमुख भाव निधियाँ है । स्वतन्त्रता ,विनोद और आनन्द की वृत्तियाँ ही उनके काव्य के अलंकरण है । इस प्रकार रीति के श्रृंगार की मान्सलता को रसिकता में रूपान्तरित करने के कारण लालदास सर्जक कोटि के कवि ठहरते है। वह युग की परम्परा के पीछे प्रवाहित होकर प्रभावित नहीं होते बल्कि अपना एक स्वतंत्र मार्ग चुनते हैं । फिर भी वे अपनी युगीन साहित्यिक वृत्तियों की न तो सर्वथा उपेक्षा करते हैं और न ही उसके प्रभाव से आतंकित होते हैं उनका काव्य अपने समय की साहित्यिक परम्पराओं को अपने भीतर समायोजित करता है तथा एक नये पंथ का प्रवर्तन करता है जिससे उनकी मौलिकता को अघात न लगे ।

-5

द्वितीय प्रकरण

जीवन वृत्त

जीवन-वृत्त

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में प्राप्त विवरण -

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखित `हिन्दी साहित्य का इतिहास`[1] में लालचदास नामक कवि का उल्लेख मिलता है। यह लाल दास से भिन्न कवि प्रतीत होते हैं, क्यों कि लालचदास के `भागवत भाषा` ग्रंथ में उनका रचनाकाल सं० 1787 बताया गया है, जब कि लालदास ने अपने ग्रंथ का रचनाकाल 1732 बताया है[2]। अस्तु काल-क्रम के अनुसार दोनों कवि भिन्न ठहरते हैं। `हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास`[3] में वर्णित राम काव्य परम्परा में `अवधविलास` के रचयिता लालदास का नामोल्लेख किया है। रामकथा[4] तथा `राम साहित्य में रसिकोपासना`[5] शोध प्रबन्ध में तथा ना०प्र०खोज रिपोर्ट[6] के अनुसार लालदास और उनके ग्रंथ `अवधविलास` का नामोल्लेख मात्र प्राप्त होता है, अन्य विवरण अनुपलब्ध है। इनके अतिरिक्त `तुलसीदासोत्तर हिन्दी राम साहित्य`[7] शोध प्रबंध में शोधकर्ता पं० रामलखन पाण्डेय ने डा० कामिल बुल्के की राम कथा को आधार मानते हुए रसिक सम्प्रदाय के लालदास कृत `अवधविलास` का उल्लेख किया है। हिन्दी साहित्य इतिहास ग्रंथों में कवि एवं उनके ग्रंथ के विषय में अन्य विवरण प्राप्त न

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास, पं० रामचन्द्र शुक्ल, पृ० 164
2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०9
3- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास, डॉ० शिवमूर्तिशर्मा, पृ० 217
4- रामकथा, डॉ० फादर कामिल बुल्के, पृ० 252
5- राम साहित्य में रसिकोपासना, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० 539
6- ना०प्र०खोज रिपोर्ट, प्रथम भाग
7- तुलसीदासोत्तर हिन्दी राम साहित्य, पं० रामलखन पाण्डेय, पृ०4

होने के कारण यह कवि प्राय: अचर्चित रहा तथा उसके जीवन वृत्त के सम्बंध में इतिहास मौन ही रहा है ।

हस्त लिखित ग्रन्थों की खोज रिपोर्ट का विवरण -

हिन्दी की हस्तलिखित पुस्तकों की खोज के द्वारा हिन्दी साहित्य के इतिहास में छूटे हुये अनेक कवियों का पता चला है/नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, चंददास साहित्य शोध संस्थान बाँदा ने `अवधविलास` की हस्तलिखित प्रतियों को खोजने में सफलता प्राप्त की तथा `अवधविलास` की कुछ खण्डित तथा सम्पूर्ण प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, जिनके द्वारा लालदास के सम्बंध में कतिपय जानकारी प्राप्त होती है। ~~वह इस प्रकार है~~ - ना0 प्र0 खो0 रिपोर्ट[1] में लालदास नाम के तीन कवियों का उल्लेख हुआ है, वह इस प्रकार है -

1- लालदास-

अयोध्या निवासी, पहले बरेला में रहते थे, सं0 1732 के लगभग वर्तमान, इनके विषय में और कुछ भी ज्ञात नहीं है।

अवधविलास - दे0 {ख-32} {ज-169} { छ - 190 सी }
बारहमासी- दे0 { छ-190 ए }
भरत की बारहमासी - दे0 {छ-190 बी }

2- लालदास-

आगरा निवासी, बादशाह अकबर के समकालीन सं0 1643 के लगभग वर्तमान, जाति के वैश्य, स्वामी ऊधौदास के पुत्र थे।

इतिहास भाषा- {इतिहास सार समुच्चय} दे0 {ग-26} { ख- 10}
बलि वामन की कथा - {दे0 { छ- 191}

1- ना0 प्र0 खो0 रिपोर्ट, प्रथम भाग; पृ0 152

3-   लालदास-

मनोहर दास के पुत्र , मालती (मालवा) निवासी थे।

अखा कथा - दे० (ज- 170-ए)
बावन चरित- दे० (ज- 170 -बी)[1]

ना०प्र० खो० रिपोर्ट द्वितीय भाग में लालदास के सम्बंध में जो विवरण दियागया है,वह ना०प्र० खो० भाग एक से साम्य रखती है,केवल द्वितीय रिपोर्ट में एक ग्रंथ का नाम और दिया गया है- 'ज्ञान विवेक मोह संवाद' । शेष ग्रंथ प्रथम खोज रिपोर्ट में उल्लिखित ग्रंथ ही हैं । ना०प्र० खो० रिपोर्ट के अनुसार लालदास नाम के जिन कवियों का उल्लेख पाया जाता है, उनमें से प्रथम लालदास 'अवधविलास' के रचयिता हैं तथा उन्हें अयोध्यावासी कहा गया है एवं इन्हे बरेली का मूल निवासी भी बताया गया है । वस्तुत: हमारे आलोच्य कवि की कृति 'अवधविलास' एक प्रामाणिक कृति है तथा उनके अयोध्या निवास की पुष्टि भी उस ग्रंथ से हो जाती है[2] । साथ ही जिस बरेली निवास की बात ना०प्र०खो० रिपोर्ट में कही गयी है, वह भी 'अवधविलास' ग्रंथ के सम्पादक डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित' की लालदास के जन्म- स्थान विषयक मान्यताओं से मेल खाती है[3] । अत: प्रथम लालदास स्पष्टत: आलोच्य लालदास ही है।

ना०प्र०खो० रिपोर्ट प्रथम भाग में उल्लिखित द्वितीय लालदास का रचनाकाल सं० 1643 के आसपास बताया गया है तथा 'अवधविलास' के रचयिता लालदास का रचनाकाल सं० 1732 प्रमाणित है।अत: ये दोनों कवि भिन्न प्रतीत होते हैं । इसके अतिरिक्त द्वितीय लालदास को अकबर बादशाह का समकालीन बताया गया है, जब कि

1- ह० लि० हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, प्रथम भाग (ना०प्र०स० काशी) पृ०152
2- अवधविलास,लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 9
3- उपरिवत्, पृ० प्राक्कथन, जीवन वृत्त विषयक विवरण के अन्तर्गत

`अवधविलास` के रचयिता औरंगजेब कालीन ठहरते हैं । द्वितीय लालदास को वैश्य जाति का बताया गया है तथा उनके तीन ग्रंथों , इतिहास भाषा, वलिवामन की कथा, एवं तीर्थ माहात्म्य का उल्लेख किया गया है किन्तु ये तीनों ग्रंथ `अवधविलास` के रचनाकार लालदास के ग्रंथों से भिन्न है । जातिगत समानता व ग्रंथों के वर्ण्य विषय को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि यह लालदास`अवधविलास` के रचयिता से अभिन्न हो सकते हैं । किन्तु रचनाकाल की भिन्नता एक प्रश्न चिन्ह उठाती है । तृतीय लालदास जिन्हें मालवा निवासी और मनोहरदास का पुत्र कहा गया है तथा जिनके ग्रंथों में उषा कथा और वामन चरित्र का उल्लेख प्राप्त होता है उन लालदास के साथ न तो कोई काल दिया गया है और न ही`अवधविलास` के लालदास के साथ उल्लिखित ग्रंथों की सूची इस सूची के साथ मेल खाती है । अत: इस लालदास को आलोच्य लालदास से भिन्न मानना उचित प्रतीत होता है ।

अन्य वाह्य साक्ष्य -

वाह्य साक्ष्य के अंतर्गत वे ग्रंथ तथा साक्ष्य आते हैं, जो परवर्ती रचनाकारों, इतिहास लेखकों द्वारा दिये गये हैं । इसके अंतर्गत किंवदन्तियों व जनश्रुतियों पर भी विचार अपेक्षित हैं ।

डॉ0 फादर कामिल बुल्के की `रामकथा` तथा राम साहित्य में रसिकोपासना शोध प्रबंध । ﴾डॉ0 भगवती प्रसाद﴿ में लालदास तथा इनके `अवधविलास` का नामोल्लेख मात्र प्राप्त होता है ।[1] लालदास का `हरिचरित[2]` ग्रंथ भी एक बताया गया है, किन्तु यह निश्चित नहीं है कि यह किस लालदास की कृति है ।

`नवभारत टाइम्स` के एक समाचार के अनुसार मानस

1- रामकथा, डॉ0 फादर कामिल बुल्के, पृ0 252

2- अवध की बोली अवधी, डॉ0 जगदीश नारायण पंकज, उ0 प्र0 , अप्रैल 1980, पृ0 75

मर्मज्ञ डॉ० मृत्युंजय उपाध्याय {बिहार} ने रामायण मेले को सम्बोधित करने के क्रम में रामकथा की परम्परा का उल्लेख करते हुए बताया कि तुलसी के मानस के ठीक 101 वर्ष बाद लालदास ने 'अवधविलास' रामायण की रचना की थी जिसकी पाण्डुलिपि डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित' निर्देशक चंददास शोध संस्थान बाँदा द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित की गई है । यह मानसोत्तर रामकाव्य की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है[1] ।

किंवदन्तियों के अनुसार लालदास ने औरंगजेब के काल में तत्कालीन मुगल शासन के अन्यायों का प्रतिरोध किया है । किंवदन्तियों में एक बार 'अवधविलास' के सम्पादक डॉ० दीक्षित एवं श्री गोविन्द प्रसाद सींवल चित्रकूट की यात्रा पर थे, जहाँ उन्हें अयोध्या-वासी एक संत से लालदास की चर्चा करने का अवसर प्राप्त हुआ । इस साधु ने अयोध्या में फैली हुई किंवदन्तियों के आधार पर लालदास के सम्बंध में कुछ सूत्र दिये , जो इस प्रकार हैं -

क- लालदास ने अनेकों मन्दिरों तथा प्राचीन पुस्तकों की सुरक्षा की।

ख- लालदास हनुमान के भी उपासक थे । किंवदन्तियों के अनुसार एक बार शासन के किसी व्यक्ति द्वारा किसी बन्दर के बध कर देने पर सामूहिक रूप से बन्दरों द्वारा उस व्यक्ति को घेर लिया गया तथा उसे अपने प्राण बचाने मुश्किल हो गये । यह सूचना जब लालदास को मिली तो उन्होंने बन्दरों की प्रार्थना की तथा उनको दूयोल आदि देकर तुष्ट किया और उस व्यक्ति की जान बचाई ।

ग- किंवदन्तियों में यह भी बताया जाता है कि उन्हें कुश्ती का शौक था । इसकी पुष्टि उनके काव्य में आये हुये कुश्ती के दाव-पेचों से भी हो जाती है ।

घ- किंवदन्तियों से यह भी संकेतित होता है कि लालदास बड़े गुणी

1- नवभारत टाइम्स {समाचार पत्र} दि० 1 मार्च 1984

थे तथा धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहते थे।

ङ - किंवदन्तियों में उस साधु ने यह भी जानकारी दी कि अयोध्या में कहीं लालदास का कोई अखाड़ा है।

च - अयोध्या का सर्वेक्षण करने पर यह ज्ञात हुआ कि लालदास का अखाड़ा अब भी विद्यमान है तथा इस अखाड़े में कोई न कोई साधु अब तक रहता आया है।

अन्त: साक्ष्य -

लालदास का काल निर्धारण -

'अवधविलास' के रचयिता महाकवि लालदास के काल निर्धारण के सम्बन्ध में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि कवि की जन्मतिथि और मृत्युतिथि दोनों अज्ञात हैं। ग्रन्थ का रचनाकाल सं० 1732 अन्तःसाक्ष्य द्वारा प्रमाणित एवं पुष्ट है। अनुमानत: कवि ने इस कृति की रचना अपने जीवन काल के उत्तरार्द्ध में लगभग 50-60 वर्ष की आयु में की होगी। (इस अनुमान के अन्तःसाक्ष्य भी प्राप्त होते हैं) उदाहरण के लिए कवि ने 34 वर्ष का समय शनि के कुप्रभाव[1] से बचने के लिए तीर्थाटन में व्यतीत किया है। इस प्रकार यदि ये मान लिया जाए कि लगभग 30-40 वर्ष की आयु के बाद ही इस तीर्थाटन का क्रम आरंभ हुआ होगा, तो ग्रंथ की रचना के समय कवि की आयु 50-60 वर्ष की होनी चाहिए। ग्रंथ के अन्तःसाक्ष्य से इस प्रकार की ध्वनि निकलती है कि उन्होंने एक लम्बी आयु तीर्थाटन भ्रमण में व्यतीत की। उनका जन्म सं० 1670 के आस पास निर्धारित किया जा सकता है। उनकी मृत्यु तिथि भले ही अनिश्चित हो किन्तु रचनाकाल से उनका काल निर्धारण 18 वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध होना सिद्ध होता है। इस सम्बन्ध में एक दूसरा तर्क यह है कि-

---

1- तीरथ बारह बरष करि पन्द्रह काशी वास
सात बरष रहि अवध में तब कियो अवध विलास।।
अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिकाप्रसाद दीक्षित, पृ० 28।

लालदास ने 'अवधविलास' में जिन पूर्ववर्ती कवियों का उल्लेख किया है उनमें जयदेव, सूर, तुलसी, विद्यापति, केशव आते हैं। केशव का काल इतिहास ग्रंथों से भलीभांति प्रमाणित है।[1] लालदास का रचनाकाल सं० 1732 ही प्रमाणित है। केशव लालदास से पूर्ववर्ती सिद्ध होते हैं। अत: लालदास का काल 18 वीं शताब्दी ठहरता है।

परिचय-

लालदास रीति कालीन भक्ति धारा के अंतर्गत रसिक धारा के कवि हैं। कवि का जीवन परिचय कहीं भी बाह्यसाक्ष्य से प्रमाणित नहीं है। अत: कवि की ग्रन्थोक्तियों एवं ग्रंथ में दिये गए संकेतों से ही कवि के जीवन परिचय को पुष्ट किया जा सकता है। उदाहरण के लिए -

"लाल भक्त भगवन्त की कृपा कछु जो होइ ।।
सज्जन मनरंजन कथा कहौं सुनैं सब कोइ[2] ।।"

उपर्युक्त दोहे में भगवन्त शब्द श्लेषपरक है। बहुत संभव है कि इस पद से कवि ने अपने समकालीन रामभक्त भगवन्तराय खीची (असोथर नरेश) का संकेत किया हो, जिनके दरबार में हिन्दी के अनेक कवि थे। कहा जाता है कि कविवर भूषण किसी कारण अपने आश्रय दाता से असन्तुष्ट होकर कुछ काल के लिए भगवन्तराय के यहाँ रहे। भगवन्तराय तथा लालदास दोनों रामभक्त हैं, अत: समकालीन हैं। भगवंतराय के निधन की प्रामाणिक तिथि सं० 1792 है।

लालदास के लाल बुझक्कड़ होने की भी संभावना की गयी है -

"लाल बुझि जो देखिए नहीं अकलि की खोज[3] ।।"

इस पंक्ति में नाम के साथ बुझि शब्द का प्रयोग किया गया है जो बुझावँ के पूँछने का संकेत करता है। लाल बुझक्कड़ कवि का अस्तित्व अवध के पूर्वी अंचलों में अब भी बुझौवलों के बुझाने वाले के रूप में गाँव की चौपालों में जनप्रिय है, किन्तु इस लाल बुझक्कड़ के बारे में साहित्येतिहास में कोई भी जानकारी प्राप्त नहीं होती। बहुत संभव है कि 'अवधविलास' महाकाव्य के रचयिता आलोच्य लालदास ही लाल

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० ।

2- उपरिवत्, पृ० 122

3- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास, डॉ० शिवमूर्ति शर्मा, पृ० 248

घुमक्कड़ कवि हों जो अवधी अंचलों में इतने लोक प्रिय रहे हों । कवि दिनेश देवराज ने इस संकेत को पुष्ट करते हुए कहा है कि लालदास अवधी के कवि हैं और लाल घुमक्कड़ भी अवधी अंचलों में जनप्रिय हैं । इसलिए लालदास और लाल बुझक्कड़ अभिन्न प्रतीत होते हैं ।

जाति एवं व्यवसाय -

यद्यपि जाति और व्यवसाय के विषय में भी साहित्येतिहास मौन है फिर भी ग्रन्थगत संकेतों से ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि बहुत संभव है लालदास वणिक् जाति के हैं । उदाहरण के लिए देखिये -

"लाल गुप्त इह प्रगट किय अवध बिलास बखानि ।"[1]

इन शब्दों से कवि के वैश्य होने का प्रमाण मिलता है । वे अपने रूपकों में वैश्य जाति के व्यावसायिक शब्दों का प्रयोग करते हैं-

"अवधविलास समुद्र है साधु साहु तट जाहि ।"[2]

इस दोहे में साधु को साहु कह कर तथा -

"रतन कथा रघुबीर को लाल बहुत ता माँहि ।।"[3]

से रत्नों की जातिगत प्रधानता आदि की ओर संकेत किया गया है । का० - ना० प्र० खो० रिपोर्ट में द्वितीय लालदास के साथ वैश्य जाति का उल्लेख मिलता है । उक्त प्रमाणों के आधार पर लालदास का वैश्य जाति का होना प्रमाणित है। 'अवधविलास' के अध्ययन से ऐसा ज्ञात होता है संभवतः लालदास भंडारी का कार्य भी कुशलता पूर्वक करते थे ।

1- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 2

2- उपरिवत्, पृ० 2

3- उपरिवत्, पृ० 2

भी करते थे। उदाहरण के लिए -

"खुले खजाने राम के लाल हृदय भंडार[1]।"

इस पंक्ति में प्रयुक्त 'भंडार' शब्द से ऐसा प्रतीत होता है कि लालदास अयोध्या के जिस मन्दिर में रहते थे उसमें वे भंडारी का कार्य करते थे। यही कारण है कि जब 'अवधविलास' में भोजन प्रकरण आया तो अनेक प्रकारों के खाद्यान्नों के नाम गिनाये। वस्त्रों का प्रसंग आया तो वस्त्रों की एक लम्बी तालिका प्रस्तुत कर दी। इतना ही नहीं यह भी बताया है कि कौन सी वस्तु किस प्रान्त में अच्छी बनती है।

स्थान-

लालदास के ग्रंथ से निश्चित जन्म स्थान का तो संकेत नहीं मिलता किन्तु इतना स्पष्ट है कि कवि लालदास अयोध्या से भिन्न स्थान के रहने वाले थे तथा 'अवधविलास' की रचना 'अवध' में ही रहकर की। प्राचीन समय में प्रायः साधकों द्वारा प्रसिद्ध तीर्थों में रहकर कल्प आदि करने की परम्परा थी। प्रसिद्ध ग्रंथों की रचना के लिए धार्मिक क्षेत्रों में रहकर उन्हें पूर्णता प्रदान करना मांगलिक माना जाता था। अवध में रहकर रचना करने से यह प्रतीत होता है कि वह एक निश्चित काल के लिए अयोध्या में बसे।

लालदास की जन्मभूमि के सम्बंध में 'अवधविलास' के सम्पादक ने अपने सम्पादकीय प्राक्कथन में जो तर्क दिये हैं, वे महत्वपूर्ण तथा कवि की जन्मभूमि के निर्धारण में सहायक सिद्ध होते हैं -

क- डॉ० ललित दीक्षित का यह कथन है कि लालदास मूलतः बरेली के रहने वाले हैं तथा बाद में तीर्थाटन करते हुए वे अयोध्यावासी हुए।

ख - लालदास के बरेली निवास की पुष्टि ना०प्र० खो० रिपोर्ट में की गई है[2]।

1- अवधविलास,लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 3

2- क- ना०प्र०खोज रिपोर्ट,वाराणसी,भाग -1

ख- उपरिवत्, भाग- 2

ग- `अवधविलास की भाषा पर विचार करते हुए इस ग्रंथ के सम्पादक का कथन है, -"अवधविलास में जिन आंचलिक बोलियों के शब्द मिलते हैं उनमें बरेली मण्डल के शब्द समूह सबसे अधिक हैं । ।" उन्होंने अपने कथन की पुष्टि में जिन शब्दों को उदरण के रूप में दिया है, उनमें बाबू, द्वारे, जिनि, बिगवा आदि हैं ।

घ- सम्पादक डॉ0 दीक्षित ने एक और प्रबल प्रमाण देते हुए कवि की जन्म भूमि बरेली सिद्ध किया है। अपने प्रमाण में तर्क देते हुए उन्होंने लालदास के `अवधविलास` की कुछ पंक्तियों को प्रस्तुत किया है, जिनमें कवि ने असुरों की वंशवृद्धि को तुलना बाँसों के पेड़ों की शाखाओं से की है । डॉ0 दीक्षित का यह तर्क है कि बाँस बरेली में बहुत अधिक होते हैं , अत: बाँसों की उपमा का चयन करना कवि के जन्म भूमि के अनुराग को अभिव्यंजित करता है । उन्होंने प्रसिद्ध लोकोक्ति `उल्टे बाँस बरेली को` दृष्टान्त में रखते हुए कहा कि बरेली बाँसों का ही वन है, अत: अपनी जन्मभूमि की प्रकृति की एक विशेष वन्य सम्पदा बाँसों का बिम्ब विधान स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक है । बरेली जन्मभूमि के प्रमाण में `अवधविलास` के सम्पादक ने जो तर्क दिये हैं, उनमें यह भी बड़ा बलिष्ठ है— है । इसका आधार भाषा विज्ञान पर आधारित है ।

ङ- डॉ0 ललित दीक्षित का यह कथन है कि `अवधविलास` में अधिकांश पद समूह , संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया , विशेषण, कारक ब्रजभाषा से सम्बधित हैं । इस ब्रज भाषा को चुनने का कारण यह है कि कवि की जन्मभूमि बरेली भाषा परिवार की दृष्टि से ब्रज के अंतर्गत आती है । अवध क्षेत्र में रहने के कारण `अवधी` का प्रयोग भी जिस स्वाभाविकता के साथ हुआ है, उसका कारण कवि की बरेली जन्मभूमि होना प्रमाणित होता है ।

लालदास की जन्मभूमि के सम्बंध में एक अन्य प्रमाण उनकी एक अन्य कृति `भरत की बारह मासी` से भी प्राप्त होता है, जिसके

अनुसार लालदास का बरेली निवासी होना सिद्ध होता है-

"नवै साल लौंद को भादों । अगहन गहन पर्‌यो ।
बास बरेली लालदास ने राम नाम को उच्चर्‌यो ।।"

इस प्रकार यह प्रमाणित होता है कि 'भरत को बारहमासी' बास बरेली में लिखी गई है तथा तीर्थाटन, अयोध्या निवास एवं 'अवधविलास' की रचना के पूर्व इस कृति की रचना की गई होगी । 'अवधविलास' का रचना काल सं० 1732 प्रमाणित है तथा उसके पूर्व कवि का 34 वर्ष का तीर्थाटन भी अन्तःसाक्ष्य से प्रमाणित है । अतः यह कृति सं० 1698 के पूर्व की सिद्ध होती है। सं० 1698 के पूर्व जिस समय इस कृति की रचना की गई वह नौ साल बाद पड़ने वाला मलमास का वर्ष था तथा अगहन के ग्रहण का समय था ।

बरेली जन्मभूमि के पक्ष में उपर्युक्त तथ्यों का शोध छात्रा ने परीक्षण किया है और इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि जन्मभूमि के सम्बंध में बरेली के समर्थन में 'अवधविलास' के सम्पादक डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित' ने जो तर्क दिये हैं, वे प्रामाणिकता तथा वैज्ञानिकता की कसौटी पर न्याय संगत प्रतीत होते हैं । अभी तक इस मत के विपक्ष में कोई भी सूत्र हाथ नहीं लगे ।

व्यक्तित्व -

'अवधविलास' के अध्ययन से कवि के व्यक्तित्व के सम्बंध में जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, उनके आधार पर लालदास का व्यक्तित्व एक श्रेष्ठ रसिक भक्त, प्रतिभाशाली कवि, बहुज्ञ एवं आचार्यत्व से संयुक्त एक श्रेष्ठ साधक का व्यक्तित्व है । दानशीलता, तीर्थाटन प्रियता, अध्ययन शीलता, भावुकता, विनम्रता और विलक्षणता उनके व्यक्तित्व के प्रमुख तत्व प्रतीत होते हैं । वे रसिक धारा की भक्ति परम्परा में दीक्षित

1- भरत की बारहमासी, लालदास

थे । अत: तुलसीमाला, द्वादश चंदन एवं रसिक सम्प्रदाय के अंतर्गत निहित पट- परिधान धारण करते रहे होंगे । उनके कवि व्यक्तित्व में प्रखरता है किन्तु वह भक्त व्यक्तित्व को बाधित नहीं करता । काव्य, आचार्यत्व में भक्ति की रसिकता ही प्रमुख दिखाई पड़ती है । धार्मिक और सांस्कृतिक संस्कारों से युक्त लालदास का व्यक्तित्व एक सांस्कृतिक चिंतक का व्यक्तित्व लिए हुए है । कुल मिलाकर उनका व्यक्तित्व बहुआयामी एवं सम्पूर्ण प्रतीत होता है ।

प्रकृति एवं जीवन दर्शन -

प्रकृति से लालदास निष्कपट सन्त कवि प्रतीत होते हैं तथा उन्हें अपने जीवन में कीर्ति बहुत प्रिय थी । इसी कारण यह 'जीवत अजस मुए गति नाहीं' कह कर अपयशी जीवन को धिक्कारते हैं । इन्होंने नि:सन्देह अपनी रचनाओं के माध्यम से कीर्ति को प्राप्त भी किया।

लालदास जीवन में कार्यों के प्रति विश्वास रखते हैं । 'किसी भी उद्यम की सफलता ही धन को बढ़ाती है,' कवि का यह कथन सिद्ध करता है कि लालदास सम्पन्न जीवन को ही श्रेष्ठता प्रदान करते हैं । लालदास उन्हीं लोगों को श्रेष्ठ मानते हैं जो ब्याज और कर्ज से मुक्त जीवन जीते हैं -

"ब्याज करज की चरचा नाहीं । उद्यम सफल बढ़त धन जाही[1] ।।"

लालदास के जीवन -दर्शन से यह स्पष्ट होता है कि वे उन्हीं युवकों की प्रशंसा करते हैं, जिनकी वाणी में गाम्भीर्य हो। अत: सिद्ध है कि वे अपने युवाकाल में गम्भीर वाणी वाले व्यक्ति रहे होंगे । वाणी का ये गाम्भीर्य यदि युवाकाल से न होता तो प्रौढ़काल तक ऐसी 'अवधविलास' जैसी परिपक्व रचना कैसे दे पाते । इसी प्रकार वे उसी यौवन को श्रेष्ठ मानते हैं जो तपस्या द्वारा क्षीण काया वाला हो गया हो । इससे सिद्ध होता है कि वे यौवन काल से ही क्षीण शरीर वाले रहे होंगे ।

1- अवधविलास, लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 40

वंददास ने भी 'शिवसाराङ्गध्यावली' ह०लि० ग्रंथ में तपस्वियों के शरीर की चर्चा करते हुए 'काया छिन्न पीत तन भयउ' का संकेत किया है तथा कालान्तर में शरीर के पीलेपन के स्थान में -

'निर्मल विमल शरीर छवि, यथा हेम रवि रासि ।'

से कान्तिमान शरीर का संकेत किया है ।

लालदास तीर्थाटन प्रिय तथा प्रकृति प्रेमी प्रतीत होते हैं । तीर्थों के भ्रमण आदि के कारण प्रकृति के प्रति प्रेम होना स्वाभाविक है । भक्त होने के कारण आस्तिक वृत्ति तथा रसिक भक्त होने के कारण नृत्य, संगीत, गायन आदि की अभिरुचि स्वाभाविक है । उनके ग्रंथ से यह भी प्रमाणित है कि वे भक्ति के प्रसंगों में नृत्य गीतादि का प्रयोग अवश्य करते हैं, कहीं नारद नृत्य करते हैं तो कहीं शिव और कहीं लालदास । कैसी अद्भुत रसिक भक्ति है जिसमें साधक अपने इष्ट के ध्यान में इतना तन्मय हो जाता है, यही तन्मयता ही एक प्रकार का नृत्य है ।

कवि के अन्तःसाक्ष्य से प्रमाणित होता है कि कवि ने पर्याप्त तीर्थाटन किया । तीर्थाटनों का कारण शनि का दुष्प्रभाव बताया गया है।कवि ने 12 वर्ष विभिन्न तीर्थों में 15 वर्ष काशी में व्यतीत कर , सात वर्ष अवध में रहकर विभिन्न प्रकार के अनुभवों को प्राप्त किया, जिसका प्रमाण स्वयं कवि ने दिया है -

"तीरथ बारह बरष करि (पन्द्रह) काशी बास ।
सात बरष रहि अवध में तब कियो अवध बिलास ।।"[1]

शिक्षा-

लालदास ने किसी गुरुकुल अथवा किसी गुरु विशेष की शिक्षा प्राप्त की हो ऐसा प्रमाण तो नहीं मिलता किन्तु इन्होंने अपने ग्रंथ में एक स्थान पर बुद्धि विस्तार के पाँच कारकों में एक ऋषि कुल भी बताया है,इससे संभावना की जाती है कि आपने किसी ऋषि कुल अथवा गुरुकुल में शिक्षा-दीक्षा

1- अवधविलास , लालदास,सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 28।

प्राप्त की होगी -

"ऋषि कुल पुनि गुरु ग्रन्थ औ संगति देस प्रमान।
लाल बुद्धि बिस्तार के कारन पंच प्रमान ।।"[1]

लालदास के गुरु स्वामी ऊधौदास हो सकते हैं। ना0प्र0 स0खो0 रिपोर्ट में लालदास को स्वामी ऊधौदास का पुत्र कहा गया है, किन्तु खोज रिपोर्ट मे अन्यत्र लालदास को मनोहरदास का पुत्र कहा गया है। अस्तु हमारा अनुमान यह है कि लालदास के पिता मनोहरदास तथा उनके गुरु स्वामी ऊधौदास रहे होंगे। ऊधौदास के साथ स्वामी विशेषण का प्रयोग तथा 'अवधविलास' काव्य में श्लेष से ऊधौ को 'भगवान' संज्ञा प्रदान करना सिद्ध करता है कि स्वामी ऊधौदास लालदास के गुरु रहे होंगे। अन्य कोई विवरण इस सम्बंध में नहीं उपलब्ध होता। अत: प्रामाणिकता के अनिश्चय में कुछ और कहना संभव नहीं है।

इसके अतिरिक्त गुरुमाहात्म्य से पता चलता है कि कवि के जीवन में गुरु की महती कृपा रही तथा गुरु की कृपा से ही इन्होंने जीवन में सफलता को प्राप्त किया -

"विद्या गुन साधन कछु भावै। गुरु उपदेस बिना नहिं पावै।"[2]

ग्रंथ से प्रमाणित होता है कि इन्होंने ज्योतिष, व्याकरण, वैद्यक, संगीत, आदि का ज्ञान प्राप्त किया था। उदाहरण के लिए सीता को शिक्षित करते समय व्याकरण विषयक जानकारी देते हुए -

"पंच हैं सन्धि आठ है वर्गा। संज्ञा स्वर हल प्रकृति विसर्गा।

x x x

सप्त विभक्ति कहुँ सुनि स्वादिहि। एक अमादि टादि ङे आदिहि।।"[3]

लालदास के सम्बंध में ग्रंथगत जो अन्य जानकारियाँ प्राप्त होती हैं, वह इस

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 119

2- उपरिवत्, पृ0 327

3- उपरिवत्, पृ0 293

प्रकार है -

भक्ति-

लालदास सगुण रसिक भक्त हैं। वे स्पष्ट रूप से सगुणोपासना की स्वीकृति देते हैं तथा निर्गुण साधनाको रूप रंग विहीन कहकर दुर्बोध या दुर्गम बताते हैं -

"निर्गुण रूप कहा कहि गाई। रूप रेष कछु जानि न जाई[1]।"

भक्त होने के साथ लालदास की प्रवृत्ति दानशीलता की भी है, क्योंकि दानशीलता भी भक्ति का एक अंग है। उन्होंने अपने ग्रंथ में दान महिमा का वृहत् यशोगान किया है। रामजन्म के अवसर पर दशरथ द्वारा अवर्णनीय दान का वर्णन किया है -

" अश्वरथ पनहीं सेज गौ क्षत्र जल तरु दिप धान।
लाल चलत महा पंथ महं पावत हैं नर दान[2]।।"

लालदास एक भक्त कवि हैं और भक्त हृदय भावनाओं से व्याप्त होता है। 'अवधविलास' में लालदास ने राम की लीलाओं में प्रत्यक्ष सम्मिलित होकर अपनी उच्च स्तरीय भक्तिभावना को व्यक्त किया है। इससे सिद्ध होता है कि लालदास रसिक साधना के कितने ऊँचे सोपान तक पहुँच चुके थे। उनके भाव जगत में न तो देशकाल की सीमाएँ बाधक बनती हैं और न ही वे इस अन्तराय को स्वीकार करते हैं। आप सिद्ध भक्त सन्तहैं-

"रघुवर लीला बाल भ्रात भ्रात संग तात के।
सदा बसहु हिए लाल मन भावन पावन पतित[3]।।"

रुचि-

ग्रन्थ के मध्य से लालदास की रुचियाँ प्रकाशित होती हैं।

1- अवधविलास,लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 240

2- उपरिवद्, ,पृ० 245

3- उपरिवद्, पृ० 300

लालदास को रुचि चौपड़ और चौगान में जान पड़ती है । यदि उसमें उनकी रुचि न होती तो वे रानियों के द्वारा चौपर खेलने का वर्णन न करते । प्राय: कविजन अपनी रुचियों को कथा के प्रसंगों से ही व्यक्त करते हैं-

"चौपर चारु करहिं कछु लीला । जीतति रानि सदा कौसिल्या[1] ।।"

सामान्यतया चौपड़ न तो महिलाओं की कोई अंत: क्रीड़ा है और न राम काव्यों में इस प्रकार का कोई उल्लेख मिलता है । ये प्रसंग जो कि कवि द्वारा सर्वथा नूतन रूप में गढ़े गये हैं, उनमें कवि को स्वतन्त्रता होती है कि वह अपनी रुचियों और संस्कारों आदि को प्रक्षेपित करें । इसीलिए जान पड़ता है कि लालदास संत जीवन के पूर्व चौपड़ आदि खेलते थे ।

लालदास ने अपने ग्रंथ में मल्लयुद्ध एवं कुश्ती के विभिन्न दाँव-पेंचों का वर्णन किया है, जिससे प्रमाणित होता है कि आप कुश्ती और दाँव पेंचों में रुचि रखते थे । ऐसा प्रतीत होता है कि लालदास को कथा प्रसंग में भी रुचि थी क्यों कि एक स्थान पर वह रोते हुए राम को कथा सुना कर चुप कराना चाहते हैं ।

लालदास का दर्शन -

लालदास का दर्शन सामाजिकता एवं लोक व्यवहार को लेकर चलता है । वे नारी शिक्षा पर बल देते हैं मुनियों के आश्रम में नारियों को पढ़ाते हुए चित्रित करते हैं तथा स्वयं सीता को विद्याध्ययन में रत चित्रित करते हैं । मध्ययुग में में नारी शिक्षा प्रचलन इतना अधिक नहीं था । नारी शिक्षा के प्रति एक रूढ़ि थी , इसी रूढ़ि को तोड़ने के लिए लालदास ने विद्या अध्ययन के महत्व और विशेष रूप से नारी शिक्षा पर बल दिया है-

"प्रथमहिं बाला व्याकरण साधनिका करै लागि ।
सुमिरि सरस्वति लै चारी । लिखन लगी अनुरागि[2] ।।"

1- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०24।

2- उपरिवत्, पृ० 293

कवि का नारी विषयक दृष्टिकोण अन्य संतों से भिन्न है । वह नारी को भुजंगनी या विष बेल नहीं कहते । कवि ने बड़े स्पष्ट स्वरों में व्यंजना के आश्रय से एक स्थल पर नारी जाति की निन्दा को उचित नहीं कहा है।कवि के अनुसार -

"गुन को निंदै निर्गुनी, जोगाहि जुवती जाति ।
धन को निंदै मद्यपा चोर चांदनी राति ।।"[1]

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि गुण निंद्य नहीं है, निर्गुणी निंद्य है । युवती जाति निंद्य नहीं है, धन निंद्य नहीं है, मद्यप ही निंद्य है, चाँदनी रात निंद्य नहीं है, चोर ही निंद्य है । इस प्रकार कवि ने नारी जाति के प्रति जैसी सद्भावना व्यक्त की है, वह भक्ति साहित्य में अत्यन्त उपादेयपूर्ण है । वह नारी को प्राण शक्ति मानते हैं , नारी के छूटने पर नाड़ी छूट जाने की बात करते हैं -

"नारी के न्यारे भये नारी छुटि ही जात ।"[2]

दाम्पत्य जीवन के गहरे प्रेम सूत्रों पर लालदास की गहन आस्था है तथा स्वकीयत्व प्रेम को महत्व देते हुए पातिव्रत की सुन्दर पुष्टि करते हैं -

"तिय के प्रान प्रान नहिं होई । प्रान पीय कहियै तिय सोई ।।"[3]

लालदास एक दार्शनिक संत की भाँति धन और यौवन को अस्थिर मानते हैं-

"धन काकैं स्थिर रह्यौ जौबन काकैं थीत ।
बनिता काकैं बस भई जोगी काकैं मीत ।।"[4]

1- अवधविलास, लालदास , सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० ।।

2- उपरिवत्, पृ० 139

3- उपरिवत्, पृ० 137

4- उपरिवत्, पृ० 150

लालदास के जीवन की प्रमुख घटनाएँ -

'अवधविलास' से कवि के जीवन की जिन प्रमुख घटनाओं का संकेत मिलता है, उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं -

अ - शनि की दशा का योग -

लालदास ने इस बात का उल्लेख किया है कि शनि के कुप्रभाव के कारण उन्हें तीर्थाटन जाना पड़ा तथा गृह का परित्याग करना पड़ा । यह घटना प्रमाणित करती है कि लालदास गृहत्याग के पूर्व गृहस्थ जीवन में रहे होंगे । कवि ने शनि के भयंकर परिणाम की ओर भी संकेत किया है । कवि का यह कथन कि यदि शनि के दुष्प्रभाव से चित्त में विक्षेप न होता तो वह ग्रन्थ को अधिक विस्तार से लिखते -

"ग्रह के गुण भयो चित्त विक्षेपा । तातें ग्रन्थ यह कीन्ह संक्षेपा ।।"[1]

ब - विभिन्न तीर्थों में भ्रमण -

'अवधविलास' से यह भी भली भाँति प्रमाणित है कि उन्होंने विभिन्न तीर्थों में भ्रमण किया । कवि के अनुसार उन्होंने बारह वर्ष विभिन्न तीर्थों में, पन्द्रह वर्ष काशी में तथा सात वर्ष अवध में निवास किया। कवि ने इसकी प्रामाणिकता का संकेत किया है । कवि ने तीर्थों की महिमा बताई है, इससे भी तीर्थों के प्रति आस्था व्यक्त होती है । उदाहरण के लिए -

"जपै नाम तीरथ व्रत साधैं । पित्र अतीत देव आराधैं ।।

x x x

इह सब मैं अपने मन जाना । तीरथ सेवत होत है ज्ञाना ।।"[2]

स - अवध में निवास -

अवध निवास की पुष्टि भी 'अवधविलास' से होती

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 280

2- उपरिवत्, पृ0 280

है तथा इससे यह भी संकेत मिलता है कि वे मूलत: अवध क्षेत्र से अन्यत्र क्षेत्र के निवासी थे। 'अवध' को उन्होंने तीर्थाटन के मध्य निवास के लिए चुना तथा आराध्य राम की क्रीड़ा स्थली होने के नाते अपनी साधना भूमि के रूपमें भी स्वीकृत किया।

द - रसिक सम्प्रदाय में दीक्षा -

अवध में रहकर उन्होंने किस धार्मिक गुरु से दीक्षा ली इसका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता, किन्तु वह रसिक सम्प्रदाय में दीक्षित थे, इसका संकेत कवि ने किया है। रसिक सिद्धान्तों का अनुपालन भी ग्रन्थ में मिलता है। रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय के लेखक डॉ० भगवती प्रसाद सिंह ने बिहरक गद्दी (मिथला) की परम्परा में लालदास का नामोल्लेख किया है।[1] यह लालदास रसिक भक्त हैं जो आलोच्य लालदास से अभिन्न प्रतीत होते हैं।

य - अवधविलास के रचना की प्रेरणा -

'अवधविलास' की रचना किसी सामन्तीय शासक के संकेतों पर नहीं की गई। कवि ने यह स्वीकार किया है कि सात वर्ष अवध में रहने तथा जानबूझ कर कोई पाप न करने के बाद उसके हृदय में जो दिव्य वाणी प्रगट हुई उसे 'अवधविलास' में व्यक्त किया गया है। इस प्रकार दैवी प्रेरणा को कवि ने स्वीकार किया है -

"सात बरष रह्यो अवधहिमाहीं। जानि पाप कीए कछु नाहीं।।
तब मम हृदय भई इह बानी। राम धाम की कथा बषानी।।"[2]

इस प्रकार लालदास सच्चे अर्थों में एक ध्याता, संगीतज्ञ, रसिक भक्त एवं संत कवि थे। उनका जीवन साधना परक सिद्ध होता है। निश्छल, निर्मल, एवं साधु जीवन के संकेत उनके काव्य में प्राप्त होते हैं जो उनके व्यक्तित्व के निर्धारक हैं। उन्होंने तपस्या को यौवन की श्रेष्ठता की

1- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० 35।

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 280

कसौटी बतायी है तथा भक्तों की भाव विह्वलता एवं उनकी अपरिमित निष्ठा का चित्रण किया है । यह चित्रण अप्रतिम है तथा कवि के व्यक्तित्व का सूचन भी करता है । भक्त कवि में आचार्यत्व का ,रसिक साधक में संगीत आराधक का , लोक में वेद का अद्भुत समन्वय लालदास के काव्य में प्रतिफलित हुआ है । सचमुच वे सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं 18 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के एक ऐसे श्रेष्ठ रसिक संत कवि के रूप में सामने आते हैं जिनसे अभी तक साहित्य का इतिहास भलीभाँति परिचित नहीं था और न ही उनकी रसिक साधना का यह समुद्र जो 'अवधविलास' के रूप में प्रवाहित हुआ था , अभी तक जन-जीवन तक प्रवाहित ही हो सका किन्तु अब यह आशा की जा सकती है कि 'अवधविलास' रामचरितमानस की अपेक्षा अधिक सरल और सहज होने के कारण गाँव के चौपालों तक पहुँचने में समर्थ होगा और महाकवि का यह स्वप्न " रामनाम ज्यों जगतमहिं ग्रन्थ चले सब ठौर "[1] साकार हो सकेगा । रामचरितमानस की उत्तरवर्ती काव्य कृति के रूप में इसकी व्यापक जन स्वीकृति मिल सकेगी, ऐसी आलोकमयी आस्थाएं की जा सकती हैं ।

1-अवधविलास,लालदास,सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 7

तृतीय प्रकरण

कृतियाँ, परिचय एवं अवधविलास का महाकाव्यत्व

लालदास की कृतियाँ, परिचय एवं प्रामाणिकता -

ना०प्र०खो० रिपोर्ट के अनुसार लालदास की तीन कृतियों का विवरण प्राप्त है -

1- अवधविलास

2- बारह मासो

3- भरत की बारह मासी

अवधविलास -

'अवधविलास' का रचनाकाल सं० 1732 है, जो कि कवि के ग्रंथ द्वारा प्रमाणित है । 'अवधविलास' की एक सम्पूर्ण प्रति टिकार [हरदोई] से प्राप्त हुई है । प्रति सम्पूर्ण तथा देवनागिरी लिपि में है । कुल पृष्ठ संख्या 184 है । प्रति का आकार 12•3×6•3 है । यह प्रति काली स्याही से प्राचीन कागज पर लिखी गई है । सम्प्रति चंददास साहित्य शोध संस्थान, बाँदा के हस्तलिखित संग्रहालय में सुरक्षित है ।

अवधविलास ग्रंथ की प्रामाणिकता -

लालदास के 'अवधविलास' की प्रामाणिकता को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है -

1- प्रमुख प्रामाणिकता तो यह है कि 'अवधविलास' एक ग्रंथ है जिस पर शोध कार्य हो रहा है, साथ ही न केवल एक प्रति बल्कि दो-तीन प्रतियाँ उपलब्ध हैं ।

2- 'अवधविलास' महाकाव्य का संपादन कार्य भी डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित निर्देशक चंददास साहित्य शोध संस्थान, बाँदा द्वारा किया गया है। इसके अतिरिक्त 'अवधविलास' महाकाव्य की हस्तलिखित पाण्डुलिपि की फोटो कापी भी संलग्न है ।

'अवधविलास' की प्रामाणिकता के संबंध में अन्त: साक्ष्य और ~~वहिंसाक्ष्य~~ बाह्यसाक्ष्य इस प्रकार है -

अन्त: साक्ष्य-

किसी भी कृति की प्रामाणिकता का सबसे बड़ा साक्ष्य

अन्त: साक्ष्य होता है । कवि लालदास ने स्वयं स्वीकार किया है कि उन्होंने `अवधविलास` काव्य की रचना की -

§अ§ "अद्भुद अवधविलास इह कहत जथा मति लाल ।
जामिहिं सीता राम की सुन्दर कथा रसाल ।।"[1]

§ब§ "लाल गुप्त इह प्रगट किय अवधविलास बषानि ।"[2]

§स§ "लाल अवध मधि रहि रच्यौ अवधविलास रसाल ।।"[3]

उक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि `अवधविलास` के रचनाकार लालदास ही है तथा उन्होंनें अयोध्या में `अवधविलास` की रचना की। अन्त: साक्ष्य प्रमाण निर्विवाद रूप से सिद्ध करता है कि `अवधविलास` लालदास की प्रामाणिक कृति है । कवि ने ग्रन्थ में स्थान- स्थान पर लालदास नाम की छाप दी है । कृति के भीतर कृतिकार के नाम का पाया जाना कृति और कृतिकार के सम्बंध को प्रमाणित करता है ।

बाह्यसाक्ष्य -

§अ§ बाह्यसाक्ष्य के अंतर्गत ना0प्र0खो0 रिपोर्ट, हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में लालदास कृत `अवधविलास` का उल्लेख एवं चंददास साहित्य शोध संस्थान, बाँदा की हस्तलिखित ग्रंथों की खोज की आख्या से भली भाँति प्रमाणित होता है कि `अवधविलास` लालदास की कृति है ।

§ब§ `अवधविलास` की हस्तलिखित प्रतियों का पाया जाना तथा उनमें `अवधविलास` की लालदास कृत रचना के रूप में मान्यता दिया जाना भी इस ग्रंथ की प्रामाणिकता का समायोजन करता है ।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 1

2- उपरिवत्, पृ0 2

3- उपरिवत्, पृ0 9

(स) विभिन्न हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर लालदास कृत 'अवधविलास' का पाठ सम्पादन एवं प्रकाशन चंददास साहित्य शोध संस्थान के तत्वाधान में डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित द्वारा किया जा चुका है, जिसमें 'अवधविलास' को लालदास की प्रामाणिक कृति के रूप में स्वीकार किया गया है[1]।

उपर्युक्त अन्त: साक्ष्य एवं बाह्यसाक्ष्य से यह भलीभाँति प्रमाणित है कि 'अवधविलास' लालदास की रचना है।

बारह मासी -

कवि ने ऋतु वर्णन की बारहमासा शैली का अनुगमन करते हुए इस काव्य की रचना की है। बारहमासी काव्य प्राय: श्रृंगार पर आधारित है किन्तु यह काव्य भक्ति श्रृंगार को भी लेकर चलता है। आकार-प्रकार की दृष्टि से यह लघु कृति है।

भरत की बारह मासी -

कवि ने राम की प्रतीक्षा में बैठे हुये भरत की व्याकुलता तथा भाव्य भक्ति का आधार बना कर इस कृति की रचना की है। कवि ने इसमें चैत्र मास से फाल्गुन मास तक का चित्रण किया है। यह कवि की प्रारम्भिक कृति प्रतीत होती है। किन्तु कवि ने इसके रचना - काल का कोई संकेत नहीं किया है। यद्यपि भरत की विरहानुभूतियों को अन्य कवियों ने भी चित्रित किया है किन्तु बारहमासी शैली में किया गया यह वर्णन नवीन है।

ग्रंथ परिचय-

'अवधविलास' की रचना कवि लालदास ने अठारहवीं शताब्दी में

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० प्राक्कथन

की थी। प्रमुख रूप से यह दोहा, चौपाई, गौड़ रूप से सोरठा और अरिल्ल आदि छंदों में, बीस वर्गों में लिखा गया रसिक परम्परा का प्रतिनिधि प्रबंध काव्य है । कवि ने ग्रंथ निर्माण तिथि का उल्लेख इस प्रकार किया है-

"संवत सत्रह सय अतिस सुदि बैशाष सुकाल ।
लाल अवध मधि रहि रच्यो अवधबिलास रसाल ।।[1]

लालदास ने रसिक परम्परा के अनुसार इस कथा में परम्परागत रामकथा से भिन्नता की है । तथा उस भिन्नता के संकेत भी किये हैं । इस प्रकार कवि ने इसे नवीन रूप को प्रस्तुत किया है । उदाहरण के लिए लालदास के राम ने वनगमन ही नहीं किया -

"मम मत राम गये नहिं कतहूँ और कविन्ह को कहो कहत हूँ ।।[2]

लालदास ने 'अवधविलास' का प्रणयन तुलसी के रामचरित मानस से भिन्न भाव भूमि पर किया है । साथ ही कवि का यह दावा है कि इस ग्रंथ में कौन सो ऐसी बात है जो नहीं कही गई । कवि ने संगीत, ज्योतिष, आयुर्वेद, व्याकरण , दर्शन आदि विषयों का भरपूर उपयोग किया है । रस, अलंकार , गुण ,ध्वनि,शब्द शक्ति आदि दृष्टियों से भी यह काव्य उत्तम श्रेणी का सिद्ध होता है ।

वस्तु संगठन -

'अवधविलास' का कवि रामकथा के घटनाक्रम को परिचित कराने वाला कवि नहीं है, न ही रामचरितमानस या अन्य परम्परागत रामकथा की प्रबंध काव्यों की शैली से बंधा हुआ है । उसकी कविता शाखाओं पर नई शाखाएँ लगाती हुई कविता के क्षेत्र में एक नयी प्रबंध वानस्पत्य विधि का प्रयोग करती चलती है ।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 9
2- उपरिवत्, पृ० 222

'अवधविलास' की कथावस्तु परम्परागत न होकर विभिन्न घटनाओं और भावों पर आधारित है।कवि ने वेदोक्तियों, निजी अनुभूतियों के अन्य स्रोतों तथा गुप्त साधना के रहस्यों को 'अवधविलास' में अविर्णित करने का संकेत किया है। 'भिन्नरुचिर्हि लोके' के सिद्धान्त के परिपोषक लालदास एक ओर रसवादी हैं, दूसरी ओर अपने महाकाव्य को ज्ञान का उन्मुक्त कोषागार कहते हैं -

"अद्भुत कथा बहु ग्रंथ को उक्ति अनूठ अनंत ।।"[1]

कथावस्तु में नाना प्रकार की प्रचलित तथा पुरा कथाओं का तथा अनेक ग्रंथों का प्रभाव कवि ने स्वीकार किया है।कवि के ही शब्दों में-

"ग्रन्थ ग्रन्थ परस्त करत लेत ग्रंथ को छाँह ।।"[2]

लालदास ने 'अवधविलास' महाकाव्य के कथा नियोजन में अनेक पुराणों, संस्कृत हिन्दी रामकथाओं, वैदिक सिद्धान्तों, श्रुतियों, स्मृतियों को कहीं कथात्मक विकास के लिए और कहीं विविध विषयों (संगीत, योग, ज्योतिष, आदि) को जानकारी देने के लिए आधार ग्रंथों के रूप में ग्रहण किया है। इस दृष्टि से यदि 'अवधविलास' का अवलोकन किया जाए तो आधार ग्रंथो की एक लम्बी तालिका प्रस्तुत की जा सकती है -

श्रीमद्भगवद् गीता, श्रीमद्भागवत पुराण, स्कन्द पुराण हरिवंश पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, पद्मपुराण, महाभारत, शिवपुराण, अग्नि पुराण, भविष्य पुराण, देवी भागवत पुराण, विष्णु पुराण, लिंग पुराण, तैत्तरीय उपनिषद्, मनुस्मृति, वशिष्ठ संहिता, सांख्यकारिका, वेदान्त सार, अगस्त्य संहिता, श्वेताश्वतरोपनिषद्, वृहद् वशिष्ठ,योग वशिष्ठ रामायण, लोमश रामायण, तत्व संग्रह रामायण, आनन्द रामायण, नृत्य निर्णय, संगीत रत्नाकर, पारिजात दर्पण, संगीतार्णव, माधव निदान,

---

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 3

2- उपरिवद्, पृ० 5

भानुदत्तकृत रस मंजरी आदि ।

प्राय: कथानक घटनापरक होते हैं और वे क्रमश: विकास को प्राप्त करते हैं । किन्तु लालदास उन मौलिक कवियों में हैं जो लीक छोड़ कर एकनवीन तकनीक के निर्माता जान पड़ते हैं । काव्य का विकास घटना-परक न होकर प्रसंग-परक है और प्रसंग में कहीं शब्द, कहीं भाव, कहीं शब्द कोष शैलियों का प्रयोग किया गया है । कवि को अद्वितीय प्रतिभा ने प्रसंगों को ही पोषित किया है, भले ही पूर्वापर के सम्बंध टूट गये हों अथवा रामजन्म के प्रकरण के पूर्व ही सेतुबन्ध की कथा का संकेत आ गया हो।

'अवधविलास' का कवि कथावस्तु के संगठन के प्रति पूर्ण सचेष्ट है। इसलिए यह आरोप कि कथावस्तु में विश्रृंखलन है, सुचिन्त्य नहीं है । कवि ने अदृष्ट, अपठित, अश्रुत, आख्यात प्रसंगों को कथावस्तु में पिरोया है और प्रबंध को इस नयी प्रविधि से अपरिचित लोगों के लिए इसे अटपट लगने वाला भी कहा है । इससे स्पष्ट है कि कवि ने पूरी सचेतनता के साथ वस्तु संगठन का निर्वाह किया है । वस्तु संगठन के सम्बंध में एक बात और विशेष दृष्टव्य है कि लालदास परम्परागत रामकाव्य के कथानक का उपयोग कम करते हैं । इसीलिए वे रामकाव्य में महाभारत के प्रसंगों व कृष्ण कथा संदर्भों का पूराउपयोग करते हैं । पौराणिक कथाओं के इतने संकेत कथावस्तु में पाये जाते हैं कि उन्हें देखते हुए कहीं- कहीं आश्चर्य लगने लगता है और प्रबन्ध से सम्बद्ध कथा से प्राप्त होने वाले रस की अनुभूति में भी बाधा पड़ने लगती है, किन्तु एक कदम आगे चलने पर अप्रासंगिक सी जान पड़ने वाली कथा को कवि इस प्रकार सम्बद्ध कर देता है कि उसकी प्रतिभा के सामने नत होना पड़ता है ।

वस्तु संगठन के सम्बंध में लालदास की यह मौलिक उद्भावना है कि वे घटनाओं के घटित होने के पूर्व ही अग्रिम घटनाओं का संकेत दे देते हैं । ऐसा किसी अन्य रामकथा में उपलब्ध नहीं होता है -

"पिता वचन वन को गमन रावन बंस नसान ।

करे राम बैठे अवधि लाल लोग गए जानि ।।"[1]

कवि ने प्रबंध के निर्वाह के लिए विविध शैलियों का उपयोग किया है। कहीं- कहीं लोकाश्रय को भी कथा संगठन के सूत्र के रूप में लिया गया है । उदाहरण के लिए सप्तम विश्राम का आरम्भ इसी शैली के अंतर्गत किया गया है -

"कहन लगे जे लोग सयाने । श्रृंगी रिषि जेहि भांतिन्ह आने ।।"[2]

चूंकि ~~कवि को~~ श्रृंगी ऋषि की कथा काकोई सूत्र पूर्व सर्ग में नहीं मिलता, अत: नये सर्ग काप्रारम्भ कवि ने इसी रूप में किया है ।

कवि ने कथा संगठन के अंतर्गत सूक्तियों तथा लोकोपदेशों को स्थान दिया है । कथा प्रसंगों में लालदास का कौशल विशेष उल्लेखनीय है । उदाहरण के लिए 'अवधविलास' की कथा में केवट प्रसंग को नहीं लिया गयाहै किन्तु प्रकारान्तर से केवट प्रसंग के उपमा विधान से उस प्रासंगिक कथा का भी संकेत कर दिया गया है । इस प्रकार प्रासंगिक कथाओं को एक नयी शैली से विकसित किया गया है । उदाहरणार्थ -

"पशुप समुद्र तरन हम जाना । केवट विप्र नाउ गउ दाना ।।"[3]

केवट विप्र से कवि ने विप्र को केवट के रूप में चित्रित करके एक रूपक के संकेत से मानस के केवट प्रसंग को संकेतित कर दिया है । कवि ने कुछ प्रसंगों को अपनी कथा में नहीं ग्रहण किया, चाहे पुनरावृत्ति से बचने के लिए हो अथवा अति प्रख्यात होने के कारण हो । ऐसे स्थलों का उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं और रूपकों द्वारा मात्र संकेत देकर कवि ने प्रबन्ध कौशल का परिचय दिया है ।

कथावस्तु -

'अवधविलास' के बीस विश्रामों की संक्षिप्त कथावस्तु

1- अवधविलास, लालदास , सं0 डॉ0 चन्द्रिकाप्रसाद दिक्षित, पृ0 388
2- उपरिवत्, पृ0 175
3- उपरिवत्, पृ0 233

इस प्रकार है -

प्रथम विश्राम -

विष्णु वन्दना §पृ० 1§, ग्रन्थ महिमा §1-9§, ग्रंथ रचनाकाल §9§,वन्दना प्रकरण §9-11§, कवि प्रकार §11-12§, दशावतार वर्णन §12-13§, नवधा भक्ति § 13-15§, आत्मलाघव§15-16§, गुण विस्तार §16-19§, नाम महिमा§पृ0 21§, सत्संगति महिमा§21-26§, राम का अभेद स्वरूप §27-28§.

द्वितीय विश्राम-

अयोध्या उत्पत्ति कथा §पृ0 28§, स्वायंभु तथा सतरूपा उत्पत्ति कथा §28§, अष्ट अशुभ वर्णन §30§, वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत कर्म विभाजन §30-31§, सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत त्रिवृत्ति वर्णन §30§, वर्णाश्रम धर्म § 31-33§, वशिष्ठ द्वारा स्वायंभु को कर्म प्रेरणा देने का उल्लेख §33-34§, कर्म प्रकार §34-35§, अयोध्या का स्थान निर्माण §35-36§, अवध की सामाजिक व्यवस्था का वर्णन §37-40§ सरयू उत्पत्ति कथा §42-63§, संगीत विषयक विवेचन §43-59§,काल चक्र का विनाश § 66§ कल्प भेद की चर्चा §64-68§ ।

तृतीय विश्राम -

राम अवतार का कारण §पृ0 69-70§, प्रेम महिमा§70§, रावण जन्म कथा §71-84§, गृहणी महत्व§75§ , पुत्र महिमा §76§, खरदूषण,सूर्पणखा ,कुम्भकर्ण की जन्म कथा §79§ , प्रसंगों से कथा का विस्तार §80§, रावण के जन्म कालिक प्राकृतिक अरिष्टों का वर्णन §80-82§, रावण की शैशव कालीन प्रवृत्तियों का वर्णन §81-82§, लंका का स्थान निर्धारण §82§, लंका की स्थिति वर्णन §87§, रोगों की नाम गणना§89-90§

रामनाम महिमा §90§, रावण का शासन वर्णन §88-93§ ।

चतुर्थ विश्राम -

असुरों का अत्याचार § पृ0 94§, ईश्वर का भक्त के प्रति प्रेम वर्णन §94-97§, राम भक्ति की महिमा§ 96§, राम कृष्ण नरसिंह उपासना का संकेत §97§, भक्तों के प्रकार §98-99§, विष्णु के स्वरूप का वर्णन §99§, विष्णु द्वारा भक्तों का महत्व वर्णन § 100§, देवताओं द्वारा रक्षा हेतु विष्णु को पुकारना §101-102§, मुर दैत्य के आतंक का वर्णन § 102-104§, राक्षसों के संहार का वर्णन §105-109§, एकादशी व्रत माहात्म्य §110§, त्रिपुर राक्षस की कथा § 110-112§, शिव द्वारा राक्षस संहार §112-115§, त्रिपुरारि नाम के कारण की विवेचना §115§, मधु कैटभ की उत्पत्ति कथा § 116§, मधु कैटभ वध §116§, मूर्खों के लक्षण §118§, दर्शन निरूपण §118-119§, विभिन्न देशों की नाम गणना § 120-121§, कवि प्रकार §126§ जालंधर का देवताओं से संग्राम §127§ जालंधर वध § 137§, विष्णु द्वारा वृन्दा के पातिव्रत भंग की कथा §138§ , वृन्दा का सती होना §139§, विष्णु विलाप §140-142§, तुलसी उत्पत्ति कथा § 143§ ।

पंचम विश्राम -

रघुकुल वंशावली का क्रमिक उल्लेख §पृ0 144§, विद्या माहात्म्य §145-146§, कौत्स का गुरुदक्षिणा वर्णन §147-154§,रघु की उदारता वर्णन §156-157§।

षष्ठ विश्राम -

सुमंत्र द्वारा दशरथ को पुत्रेष्टि यज्ञ की सलाह देने का वर्णन §158§, संस्कारों का उल्लेख § 159-160§, अवस्थाओं का उल्लेख §160§, षड् दर्शन विवेचन §161§, शान्ता का उल्लेख §161§, पुत्र महिमा§162§,

श्रृंगी उत्पत्ति कथा § 163§, साधना प्रणालियों का विवेचन § 164-166§, नीतिकथन §167-168§, दार्शनिक व्यवस्था विवेचन § 168-169§, दशरथ का श्रृंगी ऋषि के दर्शनार्थ प्रयाग प्रस्थान § 170§, शकुन विचार § 171-172§, शान्ता कौशिल्या मिलन § 172-173§, प्रेम महिमा §173-174§ ।

सप्तम विश्राम -

गणिका प्रसंग § श्रृंगी ऋषि को लाने हेतु § §पृ0 176§, श्रृंगारिक चेष्टाओं का उल्लेख §178-179§, भोज्य पदार्थों का विवरण §182-183§ श्रृंगारी चेष्टाएँ §183-185§, प्रकृति चित्रण §186-188§, श्रृंगी ऋषि का नगर आगमन §188-189§, नारिकेल की उत्पत्ति कथा §189§, उद्दालक कथा § 190§।

अष्टम विश्राम -

सांख्य वेदांत सम्बंधी दार्शनिक विवेचन §पृ0 192-195§, पिंगल के आधार पर छंद नाम गणना §197-202§, विभिन्न देवताओं के वाहनों का उल्लेख §203§, अमरकोष के आधार पर पर्यायवाची §203-219§, नाग के आठ कुलों का वर्णन §219§, रानियों के श्रृंगार ,वस्त्र तथा आभूषण वर्णन §221-224§, नायिका भेद §224-228§, सोलह श्रृंगार का वर्णन §229§,

नवम विश्राम -

पुत्रेष्टि यज्ञ का आरम्भ §पृ0 231§, साढ़े सात सौ रानियों का उल्लेख §231§, यज्ञ की अग्नि से यज्ञ पुरुष की उत्पत्ति वर्णन §232§, विप्र महिमा §233-236§, पार्वती का आत्मदाह §235§, हाटकेश्वर का उल्लेख §236§, काकभुशुंडि की कथा §236§, पायस का विभाजन §238§, राम का गर्भ आगमन §238§।

दशम विश्राम -

रामजन्म स्थान वर्णन §पृ0 240§, राम का अलौकिक -

रूप वर्णन §242§,जीव की उत्पत्ति वर्णन §242-243§, कर्मफल वर्णन - §243-244§, स्वर्ग पथ वर्णन §245§, रामजन्म तिथि का उल्लेख §248§, ज्योतिष वर्णन § 249-252§, राम जन्मोत्सव वर्णन § 253§।

एकादश विश्राम -

दशरथ को पुत्र जन्म बधाई § पृ0 254§, जात कर्म संस्कार विवेचन §255§, दशरथ की दानशीलता §255-258§, राम जन्म उल्लास वर्णन §258§, नायिका भेद § 258§, कवि का स्वयं बधाई देने जाने का उल्लेख § 259§, रामादिका नामकरण संस्कार वर्णन §260-261§, तुलादान उल्लेख § 262§, राम परिवार का अवतार रूप में निरूपण § 262§, राम के विराट् रूप का वर्णन § 263-265§, वात्सल्य की अनुभूतियों एवं चेष्टाओं का बिम्ब विधान §266§, दशरथ के धर्मार्थ कार्यों का उल्लेख §267§, राम जन्म स्थान की भौगोलिक स्थिति का वर्णन §268 §।

द्वादश विश्राम -

विभिन्न प्रासंगिक कथाओं का उल्लेख §पृ0 270-272§, दशरथ द्वारा ज्योतिषी से पुत्र भविष्यफल की जानकारी का उल्लेख §273§, राम का बाल्य सौन्दर्य वर्णन §275-276§, द्वादश सूर्य कथा § 276§, ग्यारह रूद्र उत्पत्ति प्रसंग § 277§, काक भुशुंडि की कथा §277§, रामजन्म तिथि पर तीर्थों का समागम §277-280§, कवि का परिचय विषयक संकेत §280-281§, लक्ष्मी का विरह वर्णन §281-282§, सीता उत्पत्ति प्रसंग §284-288§, कन्या महिमा §288-289§, सीता के लक्षणों का उल्लेख §289-290§, सीता के रूप सौन्दर्य व बाल क्रीड़ाओं का उल्लेख §291-292§, सीता की शिक्षा प्रसंग में व्याकरण सम्बंधी विवेचन § 293-294§, जनक की §सीता विवाह§ चिंता §294-295§ ।

त्रयोदश विश्राम -

आयु क्रम विभाजन §पृ0 296§, राम का रूप सौन्दर्य-

वर्णन §296-298§, बाल्य क्रीड़ा वर्णन §298-300§, वात्सल्य प्रेम निरूपण §299-300§, लोक रीति विषयक वर्णन §301-302§, राम शिक्षा संदर्भ में संस्कृत ग्रंथों का उल्लेख § 303§, राम का युद्ध कौशल, मल्ल युद्ध व कुश्ती वर्णन §303-306§, राम के विविध खेलों का उल्लेख §308§, रसिक भक्ति § 309§, वैद्यक विवेचन §309 §, भोज्य पदार्थों की नामगणना §310§, राम की लीलाओं का वर्णन § 311-312§।

चतुर्दश विश्राम -

राम राज्य वर्णन में प्रकारान्तर से युगीन देशकाल की व्यंजना § पृ० 313§, राम का ऐश्वर्य वर्णन §313-316§।

पंचदश विश्राम-

दर्शन विषयक निरूपण §पृ० 317-319§, मातृ हृदय का चित्रण §319-320§, अष्टांग योग साधना §321-327§, गुरु महिमा §327-328§, अष्टादश सिद्धियों का वर्णन § §329-330§।

षोडश विश्राम -

दार्शनिक निरूपण §पृ० 331-333§, संस्कृत सम्बन्धी ज्ञान प्रदर्शन §333-340§।

सप्तदश विश्राम -

सीता के मन में रामवरण की आकांक्षा वर्णन §पृ० 341§, परम्परित कथाओं §विश्वामित्र ,राजा वेनु,ताड़िका वध, अहिल्या उद्धार आदि§कथाओं का संकेत § 342-347§, जनक की धनुष भंग प्रतिज्ञा §348-349§, सीता की रामवरण की प्रतिज्ञा §351-352§, राम का रूप सौन्दर्य वर्णन §353§, सीता स्वयम्बर §354-356§, लोक संस्कृति का निरूपण §357-358§।

अष्टादश विश्राम -

रामसीता जन्माष्टम मिलन का उल्लेख (पृ० 359), लोकरीति रिवाजों का वर्णन (359-370), आभूषणों के नाम की तालिका का उल्लेख (365-366), वैवाहिक प्रकारों का उल्लेख (369), दहेज वर्णन (370-373)।

एकोनविंशति विश्राम -

जनकपुर से सीता का आगमन (पृ0 374), अतिथि महत्व (374-376), सुदर्शन की दानशीलता (374-378), राजा शिवि की कथा (378-380), ईश्वरीय महिमा गायन (380-381), राम वचन (381-382), नारद वचन (382), राम की वन गमन की इच्छा (382-384), राम द्वारा कैकेई को भविष्य के घटनाचक्रों की जानकारी देने का वर्णन (383-384), दशरथ की राज्य त्याग की इच्छा वर्णन (384), राम राज्याभिषेक से देवताओं की चिंता का उल्लेख (384), सरस्वती का मंथरा के कण्ठ में बैठना एवं मंथरा द्वारा कैकेई को राम वन गमन हेतु प्रेरित करना (385-386), कैकेई कोप (386), कैकेई का वरदान मांगना (387), दशरथ द्वारा राम वनगमन की आज्ञा (387), प्रीति की महत्ता (388-389), राम वन गमन के समय का कारुणिक दृश्य (389-390), सीता द्वारा पातिव्रत महिमा वर्णन (390) ।

विंशति विश्राम -

केवट संवाद व भारद्वाज की कहानी का संकेत (पृ0 391), सुमंत्र द्वारा राम को वन गमन हेतु छोड़ना (392), राम द्वारा भरत को चित्रकूट से विदा करने का उल्लेख (394), शूर्पणखा का नासिका विरूपण (396), राम का दण्डकारण्य में प्रवेश (396), राम का सीता के प्रति प्रेम निरूपण (396), मारीचि वध व सीता हरण की तिथि का उल्लेख (397), हनुमान द्वारा सीता की सूचना लाने का उल्लेख (397), राक्षसों के संहार का संकेत (397) अवधविलास की महिमा गायन (398) ।

कथा वस्तु की समीक्षा -

'अवधविलास' की कथा वस्तु परम्परित राम काव्यों से भिन्न प्रकार की है । कवि का उद्देश्य केवल परम्परित राम कथा कहना नहीं रहा , राम कथा तो व्याज मात्र था । ऐसा प्रतीत होता है कि कवि का मन्तव्य रामकथा को केन्द्र बिन्दु मानकर अन्यान्य प्रसंगगत पौराणिक आख्यानों, वेद वेदाङ्गों, अनेक दार्शनिक सिद्धान्तों तथा विविध विषयगत पारंगतता को प्रदर्शित करना रहा है । लालदास रसिक परम्परा के कवि हैं । अतः रसिकोपासक व माधुर्योपासक कवि सदैव माधुर्य और आनन्द के रस में निमग्न रहना चाहता है । यही कारण है कि कवि ने सम्पूर्ण महाकाव्य में राम के संघर्षमय अथवा लोक रक्षक व्यक्तित्व का प्रत्यक्षीकरण नहीं कराया, उनका लक्ष्य तो राम के बाल्य चरित्र व लालित्यपूर्ण लीलाओं का गायन करना है -

"बाल चरित लीला ललित कहूँ राम के गाइ ।
लाल भक्त भगवंत की आज्ञा होइ सहाइ ।।"[1]

कथावस्तु का प्रारंभ राक्षसी अत्याचारों से संपीड़ित गायरूप पृथ्वी की कारुणिक पुकार सुनकर विष्णु के द्वारा किये गये सम्पूर्ण राक्षसों के संहार के संकल्प से होता है, । (सीधे राम के द्वारा राक्षसों का संहार नहीं दिखाया जाता, राक्षसों के संहार का संकेत मात्र कर दिया गया है) तथा राम के वनवास एवं वनवास अवधि में प्रयाग तक पहुँच कर पुनः राम सीता के अवध में वास के साथ कथावस्तु समाप्त हो जाती है । सीता हरण, रावण संहार आदि की घटनाएँ अघटित होकर ही संकेतित हो जाती हैं । लालदास के अनुसार इसका एक कारण तो यह है कि ये सर्व विदित घटनाएँ हैं, अतः पिष्टपेषण मात्र उचित नहीं है । इसके अतिरिक्त इसका एक प्रमुख कारण यह भी हो सकता है कि लालदास माधुर्योपासक लीला में रमने वाले

1- अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0296

कवि हैं। अतः ऐसी कथाओं को छोड़कर जाना उनके लिए उचित ही है। उन्होंने स्वयं कहा है -

"अवध बिलासहिं नाम महिं भनो नहीं बनवास।

x x x

बनोबास सीताहरण लंक दहन नृप काल।
ए माया के ख्याल हैं राम हैं लाल निराल।।"

'अवधविलास' में मुख्य कथा के पूर्व ही प्रासंगिक कथाएं प्रारंभ हो जाती हैं। उदाहरण के लिए मधु कैटभ की कथा, जालंधर की कथा, वृन्दा के सती होने की कथा आदि इसी प्रकार की हैं। प्रारंभ के चार-पाँच विश्राम तक मूल कथा का संकेत या प्रारंभ ही नहीं मिलता यथा सम्पूर्ण दूसरा विश्राम अयोध्या और सरयू की उत्पत्ति वर्णन से पूर्ण है, तो तीसरा विश्राम रावण उत्पत्ति वर्णन, चौथा मधु कैटभ, वृन्दा आदि वृतान्त से तथा पंचम राम की वंशावली के उल्लेख व रघु कौत्स के आख्यान से पूर्ण है। मूल कथा का संकेत सूत्र छठे विश्राम से प्रारंभ होता है। पूर्व से पाँच विश्राम रामजन्म की प्रस्तावना का काम करते हैं। कहीं-कहीं ~~है~~ कथावस्तु का क्रम टूट साजाता है, जैसे छठे विश्राम में राम जन्म के लिए दशरथ द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पन्न करने का संकेत तो कर देते हैं, किन्तु राम का जन्म दशम विश्राम में दिखाते हैं। मध्य के एक दो विश्राम इस प्रकार से जोड़ दिये हैं जहाँ कथावस्तु का कोई तारतम्य नहीं दिखाई देता यथा ~~अक~~ आठवाँ विश्राम योग साधना, सांख्य, वेदांत मीमांसा के दार्शनिक विवेचनों से भरा हुआ है और ऐसा प्रतीत होने लगता है कि कवि का उद्देश्य ही इन्हीं का विवेचन करना रहा है। 'अवधविलास' महाकाव्य के पूर्व के दस विश्राम रामजन्म की प्रस्तावना के रूप में हैं और अन्तिम दस विश्राम राम की बाल क्रीड़ाओं, सौन्दर्य वर्णन, ऐश्वर्य वर्णन व उनके विविध लीलापरक कार्यों के विवेचन से पूर्ण है। प्रबन्ध काव्य के मध्यभाग दसवें विश्राम में रामजन्म होता है। लालदास को सम्पूर्ण राम कथा से क्या प्रयोजन ?

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०290

वे तो राम के लीला विलास को ही अपना लक्ष्य मानते हैं । यहाँ तक को रामजन्म के बाद चारों भाइयों के जन्म समाचार तथा उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप हर्षोल्लास में ही एक सर्ग की रचना कर डाली है । इसी प्रकार अगले सर्ग में रोते हुए राम को चुप कराने के लिए नाना प्रकार की कथाओं का समायोजन कर दिया हैं । कथा तो मात्र बहाना है , लालदास भक्त का काम राम को रिझाना है । रोते हुए राम को लालदास का भक्त हृदय कैसे देख सकता है । तेरहवां सर्ग राम की बालक्रीडाओं का है, तो चौदहवां ईश्वर होने के कारण राम के ऐश्वर्यपूर्ण वर्णन का है।क्यों कि राम योगेश्वर हैं,अतः राम के योगनिष्ठ व्यक्तित्व को दिखाने के लिए प्न्द्रहवां विश्राम संसार की असारता, जीव की अज्ञानता तथा योग की विस्तृत आख्या से भरा हुआ है । सोलहवां विश्राम भी जीव जगत और ईश्वर के सूक्ष्म विवेचन से पूर्ण है । पुनः लालदास सत्रहवें विश्राम में कथा-वस्तु का सूत्र राम लक्ष्मण को विश्वामित्र द्वारा यज्ञ की रक्षा के लिए माँगकर ले जाने तथा वहाँ ताड़का वध , अहिल्या उद्धार , सीता स्वयंबर आदि घटनाओं के संकेत से जोड़ देते हैं । महाकवि लालदास राम लक्ष्मण को विश्वामित्र के द्वारा ले जाने का कारण सीता के मन में राम को प्राप्त करने की आकांक्षा मानते हैं, जो कवि की नवीन उद्भावना है । सत्रहवें से बीसवें विश्राम में कथावस्तु का पूर्ण उत्कर्ष दिखा कर कथावस्तु को समाप्त कर दिया है । सत्रहवें विश्राम में सीता स्वयम्बर ,अट्ठारहवें में वैवाहिक रीति रिवाजों व अन्य तीन पुत्रों का विवाह , उन्नीसवें में पुनः राक्षसों के विनाश के लिए राम के मन में वनवास जाने की इच्छा, परिणाम स्वरूप कैकेई द्वारा वरदान रूप में राम का चौदह वर्ष का वनवास माँगना तथा बीसवें विश्राम में राम का वनगमन दिखाकर सीताहरण, रावण संहार का संकेत कर अवध में राम को सीता के साथ पहुँचा कर कथावस्तु को समाप्त कर दिया है । कवि ने सीताहरण, राम-रावण युद्ध, पुनः राम की विजय , राम को राजगद्दी आदि के भी वृत्तान्त अपनी कथावस्तु में नहीं लिए । ऐसा लगता है कि लालदास का उद्देश्य राम के चरित्र या राम कथा को

केन्द्र बिन्दु मानकर महाकाव्य की रचना करना नहीं था और न ही परम्परित रामकथा सम्बंधी घटनाओं के अनुगमन की ही बाध्यता थी। उन्हें जो प्रसंग रोचक लगे उनको ग्रहण कर लिया, शेष का संकेत मात्र कर दिया है।

लालदास ने अधिकतर प्राप्त प्रसंगों का ही पल्लवन किया है; आधिकारिक कथावस्तु का नहीं। यदि कवि के दृष्टिकोण से कथा-वस्तु का विवेचन किया जाये तो कथावस्तु पूर्णतया संगठित व पूर्वापर सम्बंधों से युक्त है। यह सत्य है कि लालदास ने किसी एक प्रसंग को पाकर उससे जुड़ी अनेक प्रासंगिक कथाओं का संयोजन कर डाला है। यथा कवि को राम की लीला स्थली अयोध्या का वर्णन करना है, अतः पहले कवि ने जितने प्रकार के अयोध्या की उत्पत्ति सम्बन्धी विवरण पुराणों में मिलते हैं, उन्हें विवेचित कर दिया है। इसी प्रकार दशवें विश्राम में राम का जन्म बताते हैं और जन्म के संदर्भ में जीव की रचना, उसकी उत्पत्ति, कन्या और पुत्र के गर्भ के अनेक विधानों तथा गर्भ कालीन कन्या पुत्र के चिन्ह आदि सम्पूर्ण प्रसूति विज्ञान को विवेचित कर डाला है। इतना ही नहीं पंचदश विश्राम में राम के मन में वैराग्य उत्पन्न होता है, अतः राम के मुख द्वारा जीवन जगत् की निस्सारता, योग, दर्शन, सिद्धियों का वर्णन, गुरु माहात्म्य, तीर्थ महात्म्य आदि विषयों की विवेचना करना ही है, जिससे एक ओर तो कवि अपनी विविध विषय गत पारंगतता की पुष्टि कर देता है और दूसरी ओर गौण रूप में कथा-वस्तु का सूत्र चलता ही रहता है।

इस प्रकार 'अवधविलास' की कथावस्तु बहुविध प्रसंग सम्पुष्ट कथावस्तु है, जो परम्परित कथाओं की पल्लवन शैली से भिन्न है और कवि कथावस्तु संयोजन में अपनी दृष्टि से पूर्ण सफल रहा है। कहा जा सकता है कि कथावस्तु का विकास घटनापरक न होकर प्रसंगपरक है और प्रसंग में भी कहीं शब्द, कहीं भाव, कहीं शब्द कोष शैलियों का प्रयोग किया गया है। कवि की अद्वितीय प्रतिभा ने प्रसंगों को ही

पोषित किया है ।

'अवधविलास' की कथावस्तु प्रबन्धात्मकता के बीच में मुक्तक वर्णन का आनन्द प्रदान करते हुए रसिक जनों को तथा पंडितों को रस और पाण्डित्य से तृप्ति प्रदान करती हैं ।

कथावस्तु की मौलिकता-

'अवधविलास' महाकाव्य परम्परागत रामकथा का काव्य होते हुए भी अनेक मौलिक उद्भावनाओं एवं नवीनताओं से सम्पन्न है -

1- ग्रन्थारम्भ हरि अवतार की वन्दना तथा विष्णु भक्ति की प्रस्तावना से होता है । अन्य कवियों ने मंगलाचरण के क्रम में विभिन्न देवी-देवताओं की वन्दना की है किन्तु लालदास ने सीधे विष्णु की वन्दना की है, जो उनके वैष्णव होने तथा विष्णु भक्त होने का द्योतक है ।

2- 'अवधविलास' की महिमा के गायन सम्बंधी प्रकरण में भी कवि ने मौलिकता का निर्वाह किया है । 'अवधविलास' की महिमा मात्र ग्रंथ की महिमा नहीं है,। 'अवध' रसिकोपासना के तीर्थ का वैशिष्ट्य भी है । रसिक सिद्धान्तों के अनुसार अवध के विलास का विस्तार से वर्णन कवि की मौलिकता है ।

3- वन्दना प्रकरण के अंतर्गत वैदिक इन्द्र की, वैष्णवी भक्तों की तथा कृष्ण भक्ति के पात्रों की वन्दना की गई है, जो कवि की साम्प्रदायिक सहानुभूतियों का परिचायक है ।

4- काव्यशास्त्र से प्रभावित होने के कारण कवि ने कवियों के प्रकार भेद में कवि , सुकवि, कुकवि नामक वर्गीकरण किया है, जो राजशेखर से प्रभावित प्रतीत होता है ।

5- दशावतार प्रकरण के अंतर्गत वैष्णव धर्म की मान्यताओं के अतिरिक्त बुद्ध एवं जैन धर्म के प्रवर्तकों को दशावतार में परिगणित करना कवि की मौलिकता है ।

6- अयोध्या की उत्पत्ति के प्रसंग में कवि का यह कथन, कि अयोध्या को अयोधन राजा ने बसाया है, नवीन है । अयोध्या का क्षेत्रफल तथा उसकी जनसंख्या का सर्वेक्षण भी मौलिक है । श्री अयोध्या की महिमा गायन के पीछे कवि की रसिकोपासना के सिद्धान्त व्यक्त हुये हैं । रसिक साधना में अयोध्या को सर्वोच्च महत्त्व दिया गया है । कवि इसीलिए इस प्रसंग को विस्तार प्रदान करता है ।

7- वशिष्ठ ऋषि ने स्वायंभु को मात्र तप छोड़ कर परोपकार तथा राज्य कार्यों की प्रेरणा दी है, यह प्रसंग सर्वथा मौलिक है तथा कवि के जीवन-दर्शन को प्रगट करता है । प्राय: संतों और भक्तों ने ऐसे स्थलों पर तप को वरेण्य कहा है, किन्तु लालदास ने तप साधक को राजनीति में रहकर काम करने को भी प्रेरित किया है ।

8- वस्तु -वर्णन के अंतर्गत प्राय: कवियों ने नगरों का उल्लेख किया है तथा उसकी वास्तुकला एवं भव्यता का भी वर्णन किया है। लालदास ने अयोध्या प्रसंग में अयोध्या की विशिष्टताओं के अतिरिक्त उसकी सामाजिक व्यवस्था का निर्देश किया है जो कवि की मौलिक उद्भावना का परिचायक है ।

9- सरयू की उत्पत्ति का विस्तार पूर्वक वर्णन भी कवि की मौलिकता है । रसिक साधना में सरयू को विशेष महत्त्व दिया गया है । अत: यह प्रसंग भी रसिकोपासना के अनुकूल तथा रामकाव्य परम्परा में सरयू वर्णन की दृष्टि से नवीन है ।

10- सरयू की उत्पत्ति की कथा के मध्य कवि ने संगीत में गायन, वादन तथा नृत्य का विस्तृत वर्णन किया है, जो रामकाव्य परम्परा में नवीन है ।

11- रावण की जय यात्रा प्रसंग में कवि ने उसकी पराजयों का भी संकेत किया है । कवि ने बालि द्वारा रावण को खिलौने के रूप में रखने का उल्लेख किया है, जो सर्वथा मौलिक है ।

12- श्वेत द्वीप की नारियों द्वारा रावण को नाच-नचाने का प्रसंग भी नवीन है ।

13- रावण के आधीनस्थ रोगों का वर्णन कवि ने नये ढंग से किया है तथा आयुर्वेदीय शैली में रोगों के नाम गिनाये हैं एवं आयुर्वेद के ग्रंथों के नाम गिनाये हैं, जो कि राम काव्य परम्परा में मौलिक है ।

14- भक्तों की महिमा के अंतर्गत कवि ने भक्त जीवन की सरलता, निश्छलता का जो वर्णन किया है, वह हृदय -द्रावक है तथा कृषकों के ग्रामीण जीवन का बोध कराता है ।

15- राम कथा के अंतर्गत एकादशी की कथा का संयोजन नवीन है ।

16- शैव दर्शन की त्रिपुर कथा को कवि ने रामकथा के अंतर्गत संयुक्त किया है, जो कवि की प्रतिभा का परिचायक है ।

17- विभिन्न देशों के नामों तथा देश के अंतर्गत आने वाले प्रान्तों का नामोल्लेख पुराणों में पाया जाता है, किन्तु रामकथा के संदर्भ में इस प्रकार का संयोजन नवीन है ।

18- वृन्दा के प्रसंग में कवि ने कई मौलिक बातों का समाहार किया है। विष्णु का विलाप, वृन्दा के सतीत्व का वृत्तान्त तथा तुलसी की उत्पत्ति आदि के विभिन्न पौराणिक वृतों को लिया है ।

19- रघुवंश के वंश विस्तार के उल्लेख के साथ रघुवंश महाकाव्य पर आधारित वरतन्तु और कौत्स की कथा का रामकथा में समायोजन नवीन ढंग से किया है ।

20- विद्या महात्म्य के अंतर्गत कवि ने विद्या के वैशिष्ट्य को रेखांकित किया है । इसका प्रमुख कारण यह प्रतीत होता है कि कवि स्वयं विद्या प्रेमी रहा है ।

21- षड् दर्शन के सिद्धान्तों का प्रतिपादन दार्शनिक ग्रंथों में पाया जाता है । रामकथा के प्रसंग में इस प्रकार का विवेचन मौलिक है।

22- श्रृंगी ऋषि की उत्पत्ति का प्रसंग राम काव्य में मौलिक है ।

23- श्रृंगी ऋषि आश्रम के वर्णन के अंतर्गत विविध प्रकार की साधना पद्धतियों तथा भक्ति मार्गों का वर्णन कवि की समन्वयी वृत्ति का परिणाम प्रतीत होता है तथा कवि ने अपने समय तक की साधना पद्धतियों को समन्वित रूप में लिया है । इस प्रकार का वर्णन नवीन तथा मौलिक है ।

24- कवि ने नीतिकथन के मध्य में सामाजिक व्यवस्था तथा तत्कालीन शासन के प्रतिरोधों का भी संकेत किया है, जोकवि को मौलिक उद्भावना का परिचायक है ।

25- शान्ता और कौशिल्या के मिलन का प्रसंग कवि की सर्वथा नूतन उद्भावना है । इस प्रसंग के द्वारा वात्सल्य की रसात्मक अभि-व्यक्ति कवि ने की है ।

26- श्रृंगी ऋषि के अयोध्या लाने के प्रसंग में कवि ने सर्वथा मौलिक उद्भावनाएँ की हैं । इस अवसर पर एक गणिका के हाव विलास का चित्रण भी नवीन है ।

27- श्रृंगी ऋषि के प्रकरण में भोज्य पदार्थों का इस प्रकार वर्णन कि लौकिक आस्वादन योगियों के व्यंजनों के समान प्रतीत हो, यह नवीन है ।

28- पिंगल के आधार पर छंदों के नाम गिनाये हैं जो रामकथा प्रसंग में मौलिक हैं ।

29- पुत्रेष्टि यज्ञ के प्रसंग में अग्नि से यज्ञ पुरूष के प्रगट होने का कवि ने जो संकेत दिया है वह भी नवीन है ।

30- शिव के महत्व को स्थापित करने के लिए कवि ने हाटकेश्वर का वर्णन किया है । इसका कारण यह है कि हाटकेश्वर का प्रसिद्ध शिवलिङ्ग सोमनाथ के रूप में इतिहास में प्रसिद्ध है तथा मंदिर को मुस्लिम आक्रान्ताओं ने विध्वंस किया । बहुत संभव है इसी पीड़ा को व्यक्त करने के लिए कवि ने प्रकारान्तर से हाटकेश्वर की महिमा का वर्णन करके अपनी मौलिकता का परिचय दिया हो ।

31- कवि ने रामजन्म स्थान क्षीर सागर के यज्ञ स्थल को बताया है, जो सर्वथा नवीन है, क्यों कि रामजन्म के ऐसे स्थान का वर्णन अन्यत्र नहीं मिलता है । अत: यह कवि की मौलिक प्रतिभा का परिचायक है ।

32- लालदास ने शरीर के रक्त, वर्ण आदि के आधार पर गर्भ के विविध

विधानों का परिचय दिया है, जो नवीन है ।

33- रामजन्म की बधाई के अवसर पर कवि का स्वत: सखी के रूप में प्रस्तुत होना सर्वथा नवीन तथा भक्ति परम्परा के अनुकूल है।

34- नामकरण संस्कार के अवसर पर रानियों (माताओं) द्वारा पुत्रों को आँगन में लेकर बैठने का उल्लेख कवि की मौलिक उद्भावना का परिचायक है ।

35- रामजन्म के अवसर पर बालकों के तुलादान का उल्लेख मौलिक है।

36- राम का बाल्यवर्णन मनोवैज्ञानिक, रसात्मक तथा नूतन शैली में लिखा गया है ।

37- पुत्रों की मंगल कामना के लिए दशरथ ने दान के अतिरिक्त तीर्थों, तड़ागों व शिवलिङ्गों की स्थापना का उल्लेख नवीनता तथा मौलिकता के आधार पर किया है ।

38- लालदास ने ज्योतिष् नक्षत्रों के आधार पर राम के नामकरण का संकेत किया है, जो मौलिक है ।

39- लालदास ने रोते हुये राम को चुप कराने के लिए बलि-वामन की कथा का उल्लेख किया है, जो सर्वथा नवीन है ।

40- दशरथ द्वारा ज्योतिषी से पुत्रों के भविष्य के सम्बंध में पूंछना व ज्योतिषी द्वारा भविष्य के घटनाचक्रों का संकेत भी मौलिकता से परिपूर्ण है ।

41- रामकथा में द्वादश सूर्य का प्रसंग जोड़ना भी नवीन है ।

42- रामजन्म के अवसर पर तीर्थों का समागम, तीर्थों के माहात्म्य को प्रगट करता है, जो मौलिक है ।

43- लक्ष्मी का विरह वर्णन कवि की मौलिक उद्भावना है ।

44- सीता का बाल्य वर्णन तथा बाल्य विकास व सौन्दर्य वर्णन की भंगिमाएँ भी नवीन है ।

45- सीता की शिक्षा के प्रसंग में व्याकरण सम्बंधी ज्ञान का प्रदर्शन भी नवीन है ।

46- अवस्थाओं का वर्गीकरण तथा उनके वय क्रम में अन्तर का संकेत भी मौलिक है ।

47- राम की बाल्य क्रीड़ा के प्रसंग में उनका मल्लयुद्ध तथा विभिन्न प्रकार से सैन्य संगठन का प्रसंग भी नवीन है ।

48- रामराज्य वर्णन के प्रसंग में औरंगजेब कालीन देशकाल की व्यंजना भी कवि की मौलिक देन है ।

49- रामराज्य का रूपक विस्तार से वर्णित है, जिसमें तत्कालीन शासन की झलकियाँ प्रस्तुत की गई हैं, जो नवीन है ।

50- राम का तीर्थाटन का आग्रह तथा माता के द्वारा कारुणिक निषेध तत्कालीन राजनैतिक निषेधाज्ञाओं को व्यक्त करता है, जो मौलिक तथा नवीन है ।

51- सीता की शिक्षा के प्रसंग में संस्कृत अनुवादों का वर्णन नवीन है।

52- सीता के मन में राम को वरण करने की आकांक्षा का वर्णन कवि की मौलिकता का परिचायक है ।

53- सीता द्वारा यह कथन कि धनुष भंग किये बिना ही वह विवाह राम से ही करेगी, नवीनता से परिपूर्ण है ।

54- स्वयम्बर के अवसर पर सीता का यह विचार करना कि यदि स्वतः राम का चुनाव कर लूँगी तो पिता की प्रतिज्ञाभंग हो जायेगी तथा धर्म एवं मर्यादा भी नष्ट होगी, ~~सीता का आत्म~~ चिंतन कवि की मौलिक उद्भावना है ।

55- राम विवाह के अवसर पर लोक संस्कृति व लोक संस्कारों का विस्तृत वर्णन नवीन है ।

56- सुदर्शन वैश्य की दानशीलता की अद्भुत कथा का जो समायोजन लालदास ने किया है, वह उनकी मौलिक देन है ।

57- कैकेई का राम से यह कहना कि यदि मुझे दोष न दिया जाय तो मैं वही करूँगी जो तुम्हें प्रिय होगा, कैकेई की अपराध सम्बन्धी चिंता नितान्त कवि की मौलिक उद्भावना की परिचायक है ।

58- नारद द्वारा राम को राक्षसों के संहार की प्रेरणा देने का प्रकरण

भी नवीन है ।

59- वनगमन , रावण का विध्वंस आदि घटनाओं का सूत्रपात राम ने अयोध्या में रहकर ही किया । वस्तुत: यह घटनाएँ आध्यात्मिक जगत में महत्व नहीं रखती । लौकिक व्यवहार तथा अन्य कवियों द्वारा वर्णित रामकाव्य परम्परा के निर्वाह के लिए ही कवि ने इनका समायोजन किया है ।

60- लालदास के अनुसार राम अवध को नित्य लीला को छोड़ कर कहीं- नहीं जाते । कवि ने इस मान्यता पर बल दिया है । इस मान्यता के पीछे कवि का साधनापरक दृष्टिकोण प्रमुख है ।

61- रामकथा की प्रमुख घटनाओं का तिथिवार वर्णन नवीन तथा मौलिक है ।

62- राम के वन्य जीवन का वैभव प्रकृति के माध्यम से व्यक्त किया गया है तथा प्रकृति का मानवीकरण राज्य एवं शासन के रूप में मौलिक है ।

शास्त्रीय दृष्टि से कथावस्तु की समीक्षा -

कथावस्तु का प्रकार -

आचार्यों ने स्वरूप के आधार पर कथावस्तु के तीन भेद माने हैं - प्रख्यात, काल्पनिक और मिश्र ।¹ जब इतिवृत्त ऐतिहासिक होता है तब उसे 'प्रख्यात' कहते हैं , जब कल्पना प्रसूत होता है तब उसे 'उत्पाद्य' तथा जब दोनों प्रकार के तत्वों का सम्मिश्रण रहता है तब उसे मिश्र कहते हैं ।

'अवधविलास' की कथा प्रख्यात कथावस्तु के अंतर्गत आती है, क्यों कि कथावस्तु में उल्लिखित सम्पूर्ण कथाएँ अनेकानेक पुराणों

1- "प्रख्यातोत्पाद्य मिश्रत्व भेदात्त्रिधापि तत्त्रिधा" ।, दशरूपक, 1/15

से ली गयी हैं । कवि ने जो प्रसंग गत अन्तर्कथाओं का संकेत किया है,वे भी पुराणों आदि से पुष्ट हैं । परम्परित कथाओं में आंशिक काल्पनिक उपयोग तो किया है, किन्तु इस मात्रा में कल्पना का उपयोग नहीं है कि सम्पूर्ण कथा ही कल्पना प्रसूत जान पड़े । अतः कथावस्तु को काल्पनिक नहीं कहा जा सकता, अतः इसे प्रख्यात ही कहना चाहिए ।

विषय वस्तु की दृष्टि से आचार्यों ने कथावस्तु के दो भेद किये है - आधिकारिक और प्रासंगिक । मुख्य कथा आधिकारिक कहलाती है तथा मुख्य कथा की सहायक कथा प्रासंगिक कहलाती है[1] ।पुनः प्रासंगिक कथा के भी दो भेद होते हैं - प्रकरी और पताका । मुख्य कथा के साथ दूर तक चलने वाली गौण कथा पताका और थोड़ी देर तक चलने वाली प्रकरी कही जाती है[2] । 'अवधविलास' में राम के द्वारा अवध का विलास ही आधिकारिक है क्यों कि राम ही फल के अधिकारी है । विष्णु (राम) द्वारा ही राक्षसों के संहार का संकल्प किया जाता है तथा अनेक प्रकार की आनन्दमूलक लीलाओं का संयोजन किया जाता है । ये समस्त लीलाएँ राम(विष्णु) की लीलाएँ हैं और उनका लीला केन्द्र अवध है। अस्तु अवध में संगठित होने वाली लीलाएँ तथा उनसे सम्बंधित कथाएँ ही आधिकारिक कथा है ।

प्रासंगिक कथाओं में महाकाव्य में आयी हुयी सारी कथाएं प्रकरी के अंतर्गत ही आती है । कोई भी ऐसी प्रासंगिक कथा नहीं है जो मध्य में प्रारंभ होकर मुख्य कथा के साथ अन्त तक चली हो । अतः कहा जा सकता है कि पताका के स्थान पर कवि ने प्रकरी प्रासंगिक कथाओं की संयोजना की है । एक कथा से दूसरी, तीसरी इस प्रकार कथा पर कथा की योजना करते गये हैं । लालदास ने प्रासंगिक कथाओं की बहुलता

1- "तत्राधिकारिकं मुख्यमङ्गं प्रासङ्गिकं विदुः ।"
दशरूपक, 1/11

2- "सानुबन्धं पताकाख्यं प्रकरी च प्रदेशभाक् ।"
उपरिवत्, 1/13

का संकेत किया है -

"आइ मिलत हैं बहुत जहँ लाल बात पर बात ।"[1]

उदाहरण के लिए अयोध्या उत्पत्ति , सरयू उत्पत्ति, रावण जन्म, श्रृंगी-ऋषि उत्पत्ति कथा, वृन्दा वृत्तान्त, अगस्त्य कथा आदि सभी ऐसी प्रासंगिक कथाएँ हैं,जो मूल कथा से सम्बंध तो रखती है, क्यों कि हर एक कथा को कह कर कवि ने पर्यवसान रूप में राम से जोड़ दिया है, किन्तु ये आधिकारिक कथा के साथ अन्त तक नहीं चलती।अत: पताका नहीं कही जा सकती ।

अर्थ प्रकृतियाँ -

आधिकारिक कथावस्तु के निर्वाह में प्रयोजन की सिद्धि में जो कारण भूत तत्व होते हैं उन्हें शास्त्रीय अभिधा में अर्थ प्रकृतियाँ कहा जाता है । ये पाँच प्रकार की होती हैं यथा - बीज, बिन्दु,पताका, प्रकरी तथा कार्य[2] । कार्य की सिद्धि में सहायक जो हेतु प्रारम्भ में अत्यन्त स्वल्प रीति से निर्दिष्ट किया गया होता है, वह 'बीज' कहलाता है। जहाँ पर अवान्तर अर्थ के कारण विच्छेद हो गया हो, वहाँ जो हेतु विछिन्न मुख्य कथा सूत्र को आगे बढ़ाता है, वह 'बिन्दु' कहा जाता है । पताका एवं प्रकरी के विनियोग से प्रधान कथा का उपकार किया जाता है, आधिकारिक कथा का उपसंहार 'कार्य' कहलाता है[3] ।

'अवधविलास' में इन अर्थ प्रकृतियों की खोज इस प्रकार की जा सकती है । अयोध्या की उत्पत्ति 'बीज' है, राम का जन्म 'बिन्दु' है । किसी लम्बी प्रासंगिक कथा न होने से पताका का

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 4

2- "बीज बिन्दु पताकाख्य प्रकरी कार्यलक्षणा: ।
अर्थ प्रकृतय: पञ्चैता एता: परिकीर्तिता: ।"

दशरूपक, 1/18

3- "स्वल्पोद्दिष्टस्तु तद्हेतुर्बीजं विस्तार्यनेकधा ।
अवान्तरार्थ विच्छेदे बिन्दुरच्छेद कारणम् ।।"

उपरिवद्, 1/17

अस्तित्व नहीं है । प्रकरी के अंतर्गत अनेक कथाएं आती हैं तथा अवध में विलास करना ही कार्य है ।

कार्यावस्थाएं -

उद्दिष्ट फल की अभिलाषा करने वाले व्यक्तियों के द्वारा आरंभ किये जाने वाले कार्य की पांच अवस्थाएं बताई गयी हैं । यथा-आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति, तथा फलागम ।[1]

पांच अर्थ प्रकृतियों के समान ही पांच कार्यावस्थाएं निर्दिष्ट की गयी हैं, अन्तर केवल इतना है कि अर्थ प्रकृतियां जिस चीज को मानसिक धरातल पर प्रगट या संकेतित करती हैं, उसे ही कार्यावस्थाएं स्थूल रूप से प्रदर्शित करती हैं[2] ।

'अवधविलास' में अवध की उत्पत्ति इसका 'आरम्भ' प्रतीत होता है, राम का जन्म 'प्रयत्न' है, सीता का जन्म 'प्राप्त्याशा' है, रावण का जन्म 'नियताप्ति' है और अवध लौट आना 'फलागम है ।

नाटकीय संधियां -

एक मुख्य प्रयोजन से अन्वित कथाओं का अवान्तर अर्थों (कथाओं, प्रयोजनों इत्यादि) से सम्बन्ध 'सन्धि' कहलाता है[3] ।

1- "अवस्थाः पञ्चकार्यस्य प्रारब्धस्य फलार्थिभिः ।
आरम्भ यत्न प्राप्त्याशानियताप्ति फलागमाः ।। "
दशरूपक , 1/19

2 - The Laws and Practice of Sanskrit Drama, Vol. I, P. 83

3- "अन्तरैकार्थसम्बन्धः संधिरेकान्वये सति ।
एकेन प्रयोजनेनान्वितानां कथांशानामवान्तरैक प्रयोजन संबन्धः संधिः।।"
साहित्यदर्पण, 6/75

एक मुख्य प्रयोजन की सिद्धि के लिए कथानक का प्रवाह चलता है उसमें अवान्तर कथाएँ , घटनाएँ तथा प्रयोजन प्रवेश कर जाते हैं । नाटककार अथवा प्रबंध रचयिता इन अवान्तर अर्थों को कुशलतापूर्वक मुख्य प्रयोजन की सिद्धि के साथ जोड़ता चलता है, जिसमें नाट्य वस्तु के स्पष्ट संघटक विभाग बन जाते हैं । इन्हीं विभागों को शास्त्रीय भाषा में संधि कहा गया है । पांच कार्यावस्थाओं की अनुरूपता में पांच प्रकार की संधियां बताई गयी हैं[1]। 'मुख संधि' वह संधि है जो बीज का उद्भव दिखाती है तथा अनेक अर्थों एवं रसों (भावों) को भी गुम्फित कर देती है और मुख्य पात्रों को प्रधान प्रयोजन की सिद्धि की दिशा में कुछ न कुछ कार्य करने में प्रवृत्त कर देती है[2]।

'प्रतिमुख संधि' में बीज विकासोन्मुख होता है तथा उद्भव के पश्चात् अंकुरण की स्थिति में चला आता है, लेकिन वह केवल अंशतः दिखाई पड़ता है क्यों कि उसका अस्तित्व क्षीण ही रहता है[3]।

'गर्भ संधि' वह संधि होती है जहाँ अंकुरित बीज और भी विकसित होता है,किन्तु उसमें बार- बार बाधाएं पड़ती हैं और उसे जीवित रखने के लिए अन्यान्य प्रयत्न करने पड़ते हैं तथा नई खोज करनी पड़ती है[4]।

'विमर्श संधि' में बीज, जो अतीत में कुछ विकास प्राप्त कर चुका होता है, शाप या अपहरण (नायिका या प्रेमिका का

1- "यथासंख्यमवस्थाभिराभिर्योगात्तु पञ्चभिः ।
पञ्चधैवेतिवृत्तस्य भागाः स्युः पञ्चसंधयः ।।"
साहित्यदर्पण, 6/74

2- The laws and Practice of Sanskrit Drama, Vol. I, P. 94.

3- उपरिवत्, पृ0 95

4- उपरिवत् , पृ0 95

अवरण [जैसी किसी विपत्ति के कारण ह्रास ग्रस्त होने तथा परिणाम स्वरूप विनष्ट हो जाने की तीव्रतर भावनाओं से आक्रान्त हो जाता है। तथापि अपरिहार्यतः यह संधि फलागम की संभावना से ही समाप्त होती है।[1]

'निर्वहण संधि' इतिवृत्त के प्रवाह की अंतिम अवस्था होती है, जब बीज पूर्णतः विकसित होकर फल सिद्धि के रूप में परिणति लाभ करता है। यह संधि वैसी कड़ी है जो यह प्रदर्शित करती है कि बीज का उसके समस्त उत्थान-पतन के बावजूद सम्यक् परिपोष हुआ है और उसकी जड़ें इस प्रकार केन्द्रित रही हैं कि मुख्य पात्र के द्वारा चिर- अभीष्ट प्रयोजन की स्वभावतः सिद्धि हो सके[2]।

उपर्युक्त लक्षणों के आधार पर 'अवधविलास' में संधियों की खोज इस प्रकार की जा सकती है -

'अवधविलास' में अवध का उद्भव मुख संधि है, राम का जन्म प्रतिमुख संधि है, सीता की राम को वरण करने की चेष्टाएं गर्भ संधि है, सीता का राम को वरण करना ही विमर्श संधि है और 'अवध' में विलास ही निर्वहण संधि है।

'अवधविलास' प्रबंध काव्यों के शास्त्रीय ढांचे में नहीं ढाला गया और न ही कथानक को दृष्टि में रखकर इसकी कथावस्तु का निर्वाह किया गया है। सम्पूर्ण काव्य अवध के विलास के रूप में लीला और आनन्द की वस्तु है। इस लीला और आनंद को व्यक्त करने के लिए कोई लौकिक घटना कवि को स्वीकार नहीं है। लालदास के राम, लोक से निराले हैं, किन्तु लीलाओं के हेतु अवतार ग्रहण करते हैं। इसी लीला विलास के लिए अनेक प्रकार की प्रासंगिक कथाओं को लिया गया है। किसी एक मुख्य अथवा आधिकारिक कथा का संगठन नहीं दिखाई पड़ता और न ही राम जन्म से लेकर उनके क्रमिक जीवन को कवि ने अपने वर्णन का विषय बनाया है। ऐसी स्थिति में इस प्रबंध का संयोजन पूर्ववर्ती प्रबन्धों से भिन्न कोटि का है। इसलिए शास्त्रीय दृष्टि से कथानक को कसौटी में कसना बहुत अधिक

---

1 - The laws and practice of Sanskrit Drama, Vol.I, P. 95
2 - Ibid, P. 95 -96.

औचित्यपूर्ण नहीं है ।

एक सुनिश्चित आधिकारिक कथा न होने से अर्थ प्रकृतियों, कार्यावस्थाओं और संधियों के समायोजन का प्रश्न भी प्रमुख नहीं है।यों बंधे बंधाये शास्त्रीय लक्षणों को आधार मानकर चलने में निराशा ही परिणामस्वरूप प्रतीत होती है ।

प्रबंध काव्य की दृष्टि से 'अवधविलास' का परीक्षण -

महाकाव्य साहित्येतिहास के एक विशिष्ट काव्य रूप का अभिव्यंजक है । दिनकर का कथन है कि विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति के मार्ग में मील के पत्थर के समान होते हैं और अभिव्यंजित करते हैं कि मनुष्य किस युग में कहाँ तक प्रगति कर सका है[1] । कहा जा सकता है कि महाकाव्य मानवीय सभ्यता के संघर्षित जीवन तथा स्वस्थ सांस्कृतिक विकास का प्राणवान् रसोद्रेक पूर्ण विशालकाय दर्पण है, जिसमें अपना प्रतिबिम्ब देख कर मानवता अपने को पहचानने में समर्थवती होती है । अतः महाकाव्य अन्य काव्य रूपों की तुलना में अधिक महार्घता को प्राप्त है, क्यों कि उसका दायित्व मानवीय प्रगति के सांस्कृतिक चरणों से सुसम्बद्ध प्रतीत होता है।

भारतीय आचार्यों में भामह, दण्डी, रुद्रट, हेमचन्द्र, इत्यादि ने महाकाव्य के लक्षणों का शास्त्रीय निरूपण किया है[2] । इन्होंने प्रायः समान लक्षणों का निरूपण किया है । ईशा की चौदहवीं शताब्दी में

1- 'अर्द्धनारीश्वर', पृ० 46, दिनकर

2- 'काव्यालंकार', 1/19-22, भामह

'काव्यादर्श', 1/14-20, दण्डी

'काव्यालंकार', 16/7-19, रुद्रट

'काव्यानुशासन', 8-9, हेमचन्द्र

कविराज विश्वनाथ ने इन सभी लक्षणों का समाहार करते हुए साहित्य-दर्पण में महाकाव्य के स्वरूप का विशद प्रतिपादन किया है। उनके अनुसार महाकाव्य के लक्षण इस प्रकार हैं-

महाकाव्य सर्गबद्ध होता है अर्थात् उसमें सर्गों की योजना रहती है। उसका नायक कोई देवता अथवा उच्च कुलीन वंश में उत्पन्न क्षत्रिय होता है। श्रृंगार, वीर, शान्त में से कोई एक रस प्रबन्ध का अंगी रस होता है, अन्य रस गौण या अंग रूप में आते हैं। समस्त नाटकीय संधियां विद्यमान होती हैं। कथा इतिहास अथवा लोक में प्रसिद्ध सज्जन से सम्बन्ध रखती हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के चार पुरूषार्थ में से कोई एक उसका फल होता है। काव्य के आरंभ में आशीर्वचन, नमस्कार या वर्ण्य वस्तु का निर्देश होता है। खलों की निंदा और सज्जनों का गुण कीर्तन उसमें रहता है। न अधिक बड़े और न अधिक छोटे आठ से अधिक सर्ग होते हैं। प्रत्येक सर्ग में एक ही छंद रहता है, किन्तु उसका अंतिम पद भिन्न छंद से रचित होता है। सर्ग के अंत में अगली कथा की सूचना रहनी चाहिए। संध्या, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रातः-काल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, समुद्र, संयोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, संग्राम, यात्रा, विवाह, मन्त्र, पुत्र, अभ्युदय इत्यादि का यथासंभव सांगोपांग वर्णन भी होना चाहिए। काव्य का नामकरण कवि के नाम अथवा नायक के नाम पर होना चाहिए। कहीं इसके अतिरिक्त भी नामकरण होता है। सर्ग की वर्णनीय कथा से सर्ग का नाम रखा जाता है। संधियों के अंग यथासंभव होने चाहिए। एक या दो भिन्न वृत्त भी रह सकते हैं।[1]

यह ध्यातव्य है कि आचार्यों ने अपने काल तक वर्तमान काव्यों के अनुशीलन के आधार पर ही इन लक्षणों का निर्माण किया है। इन पर विचार करने से ज्ञात होता है कि जीवन और प्रकृति का संश्लिष्ट चित्रण प्रबंध में आद्यान्त है। प्रधान रस, इतिवृत्त की ऐतिहासिकता,

---

1- साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, 6/315-325

अथवा लोक प्रसिद्धता , नायक या नायकों की कुलीनता एवं धीरोदात्तता के साथ ही साथ जीवन में साध्य पुरुषार्थ की सिद्धि में प्रेरकत्व गुणों का समावेश महाकाव्य में आवश्यक माना गया है । इन्हीं की प्रतिष्ठा के लिए रचना के आकार को भी रेखांकित किया गया है, क्योंकि अन्य आकार में इन तत्वों का समीकरण साधरणतः कठिन है । देवता या किसी कुलीन राजा को नायक बनाने की आवश्यकता पर ऐसी घटनाओं अथवा प्रसंगों का समावेश हो सकता है,जो पाठक अथवा भावक की मनोभूमि को उन्नत,परिष्कृत एवं रसाप्लुत बना सके । कथानक के सदाश्रयत्व अथवा सज्जनाश्रयत्व का उल्लेख भी इसी दृष्टि से किया गया समझना चाहिए । सर्ग रचना, नाट्य सन्धियों का अनुप्रवेश , नामकरण इत्यादि से सम्बंधित विधान काव्य के वस्तु पक्ष के महत्व को अभिव्यंजित करते हैं ।

पाश्चात्य काव्य चिन्तन में भी महाकाव्य का जो लक्षण दिया गया है,वह अधिकांशतः भारतीय मत से साम्य रखता है । एक अन्तर अवश्य है कि वहाँ महाकाव्य को मुख्यतः वीरकाव्य माना गया है । आक्सफोर्ड कम्पैनियन टू इंग्लिश लिट्रेचर में महाकाव्य की परिभाषा इस प्रकार दी गई है - " एपिक वह काव्य कृति है जो इतिहास अथवा लोक परम्परा में प्रसिद्ध एक या एक से अधिक वीर पुरुषों की उपलब्धियों का श्रृंखलित आख्यान के रूप में वर्णन करती है[1] ।" वर्तमान काल के सुप्रसिद्ध समालोचक सी०एम० बैरा ने इस विषय में अपना अभिमत इस प्रकार दिया है-

"एपिक रचना, सर्व सम्मत्या, कुछ विशिष्ट आकार वाली कथात्मक काव्य-विधा है और ऐसी घटनाओं का वर्णन करती है, जो एक निश्चित गरिमा और महत्व रखती है एवं युद्ध जैसे हिंसापूर्ण कृत्यों वाले जीवन से प्रसूत होती है । यह रचना हमें विशिष्ट आनन्द प्रदान करती है क्यों कि इसमें वर्णित घटनाएं तथा व्यक्ति मानवीय उपलब्धियों के महत्व में हमारा विश्वास

1- The Oxford companion to English Literature. P. 273.

बढ़ाती है[1]।"

प्रसिद्ध पूर्ववर्ती समालोचक एबरक्राम्बी ने महाकाव्य के लिए आकार के महत्व का निषेध करके कृतिकार को "समग्रकल्पना शैली को महत्व दिया है जिसके अवलम्बन से वह प्रबन्ध की मानसिक योजना तैयार करता है तथा रचना के शिल्प को संवारता है।" ऐसी रचनाएँ हमें उस लोक में ले जाती हैं जहाँ वैसी कोई घटना नहीं घटित होती, जिसकी गम्भीर अर्थवत्ता न हो। इन रचनाओं में एक शक्तिशाली प्रतीकात्मक उद्देश्य गर्भित होता है, जो उसे मोड़ता तथा स्थापित करता है और उनमें आद्योपान्त परिव्याप्त होता है[2]।

एक स्थान पर टिलयार्ड ने कहा है कि महाकाव्यकार को प्रत्येक वस्तु का ज्ञान होना चाहिए तभी वह एक बहुसंख्यक जन-समूह की तरफ से बोल सकने का दावा कर सकता है। उसे तदस्थ भावों एवं भावनाओं की विस्तीर्ण परिधि की भी योजना करनी चाहिए, जिसमें सरलतम ऐन्द्रिय वासनाओं तथा ईश्वर अथवा धर्म के प्रति भयमिश्रित आकर्षण का युगपत् ही सन्निवेश हो। परन्तु जहाँ जीवन के विस्तीर्ण क्षेत्र में वह सामान्य ही समझा जायेगा, वहाँ उसे दुष्टता को सज्जनता से नापना चाहिए और उस पवित्रता को उद्धृत करना चाहिए जो सच्ची प्रतिभा का गुण बताया गया है। केवल इसी शर्त पर जनसमुदाय उसपर विश्वास करेगा और उसे अपनी तरफ से बोलने की अनुमति देगा[3]"।

अब प्राच्य और प्रतीच्य मान्यताओं के प्रकाश में महाकाव्य के विषय में कतिपय सर्वमान्य तथ्य निरूपित किये जा सकते हैं यथा-

1- महाकाव्य की कुछ आकार होना ही चाहिए। यद्यपि वृहदाकार

1- From vergil to MILTON, P. 1

2- Lascelles Abercrombie, The Epic, P. 41-42

3- The Epicstrain in English.
E.M.W. Novel, P. 16

हो उसे महाकाव्य नहीं बनाता ।

2- महाकाव्य में घटनाओं का ऐसा चयन और वर्णन होना चाहिए जिससे जीवन और प्रकृति के सर्वांगीण संश्लिष्ट चित्र उपस्थित हो सकें ।

3- महाकाव्य की वस्तु-योजना के गर्भ में किसी प्रतीकात्मक उद्देश्य की व्याप्ति आवश्यक है, जो हमें गहराई से स्पर्श करती हो ।

4- महाकाव्य का नायक ऐसे मानसिक संगठन से संयुक्त हो जो अखण्ड धैर्य, शौर्य, प्रणय, भोग, अथवा विरक्तिमूलक अखण्ड शान्ति की अन्तर्वृत्तियों को प्रश्रय दे सके ।

5- महाकाव्य में समसामयिक जीवन तथा बहुसंख्यक जनसमूह की भावनाओं एवं विश्वासों का प्रतिफलन होना चाहिए, यद्यपि उसका संदेश देशकाल की सीमाओं का अतिक्रमण भी कर जाता है।

6- महाकाव्य का रचनाशिल्प सुगठित, मनोहर तथाप्रभावशाली होना चाहिए ।

इन बिन्दुओं को केन्द्र में रख कर 'अवधविलास' महाकाव्य के प्रबन्धकत्व पर विचार किया जा सकता है ।

'अवधविलास' का महाकाव्यत्व

(क) सर्ग योजना -

'अवधविलास' की कथावस्तु सर्गों, काण्डों में न होकर विश्रामों में है । यह 20 विश्राम का एक वृहदाकार महाकाव्य है, जिसका नामकरण कवि ने वर्ण्य वस्तु के आधार पर किया है । भारतीय महाकाव्यों में संख्या सम्बंधी प्रतिबन्ध का पालन नहीं हुआ । रामायण में सात काण्ड, महाभारत में 18 पर्व, रघुवंश में 19 सर्ग, बुद्धचरित में 28 सर्ग उपनिबद्ध हैं । 'अवधविलास' की विश्राम संख्या सन्तोषजनक है । 20 विश्रामों का नामकरण कवि ने इस प्रकार किया है -

प्रथम विश्राम - ग्रन्थारम्भ

द्वितीय विश्राम	-	अवध सरयू उत्पत्ति वर्णन नाम
तृतीय विश्राम	-	रावण जन्म विजय नाम
चतुर्थ विश्राम	-	पृथ्वी हरि के गुण कथन नाम
पंचम विश्राम	-	रघुदान कोरति सोनपर तीरथ प्रकाश नाम
षष्ठ विश्राम	-	राजा प्रयाग प्रवेश लोमपाद समागम नाम
सप्तम विश्राम	-	रिषि श्रृंगी लोमपाद दर्शन नाम
अष्टमविश्राम	-	रिषि श्रृंगी अवध आगमन नाम
नवम् विश्राम	-	रामगर्भ प्रकाशक
दशम विश्राम	-	रामजन्मदेव उत्सव नाम
एकादश विश्राम	-	रामजन्म उत्सव नाम
द्वादश विश्राम	-	सीता जन्म प्रकाश नाम
त्रयोदश विश्राम	-	बाल लीला वर्णन नाम
चतुर्दश विश्राम	-	ईश्वर ऐश्वर्य वर्णन नाम
पंचदश विश्राम	-	अष्टांग् योग साधना नाम
षोडश विश्राम	-	शास्त्र संवाद संस्कृत भाषा वर्णन नाम
सप्तदश विश्राम	-	धनुषविभंजन नाम
अष्टादश विश्राम	-	राम विवाह वर्णनो नाम
एकोनविंशतिविश्राम	-	पिता वचनात् रामवनगमन नाम
विंशति विश्राम	-	राम अवध आगमन

(ख) **छंद योजना -**

सम्पूर्ण महाकाव्य में प्राय: कवि ने दोहा, चौपाई , सोरठा आदि छंदों का ही प्रयोग किया है । कवित्त और अरिल्ल छंद तथा मोतीदाम छंद का भी प्रयोग किया है , किन्तु कवि ने यह परिपाटी नहीं अपनायी कि प्रत्येक विश्राम की समाप्ति में नया छंद बदला है। दोहा, सोरठा, चौपाई के अतिरिक्त उपर्युक्त तीन छंदों का प्रयोग परम्परागत न करके स्वतंत्र शैली में किया है वह भी कई स्थानों पर इन छंदों का प्रयोग नहीं है, यत्र तत्र ही है । यद्यपि कवि ने अपने ग्रंथ

में छन्दों के नामों की एक लम्बी तालिका प्रस्तुत कर दी है, जिससे प्रतीत होता है कि कवि को छन्दों का ज्ञान है । कवि के अनुसार छंदों की तालिका -

"छंद सुगीतक रमनक हीरा । सोमराज मधु द्वन्द अभीरा ।।
मरहट्टा कुंडलिया सोहा । गाहा प्रिया सोरठा दोहा ।।
छप्पय नाम स्वरूपी रोला । पदमावती नाराच अमोला ।।
द्वन्द तरनिजा षट्पद धूला । तोमर कुलका स्वागत तुला ।।
x x x
मनोरमा मनसिज अनकूला । अमृत गति तारक सुख मूला ।।
पंकज वाटिका प्रमिताक्षरा । मधु मारा अमृत गति मदिरा ।।"[1]

(ग) पात्र-

'अवधविलास' की कथा के पात्र राम-सीता ही हो सकते हैं, क्यों कि राम सीता का ललित विलास ही 'अवधविलास' है । लालदास के राम-सीता वाल्मीकि और तुलसी के राम-सीता से सर्वथा भिन्न है, क्यों कि लालदास का लक्ष्य ही इन महाकवियों से भिन्न है । वे तो सज्जन मनरंजन कथा के रूप में राम-सीता के विलास से विलसित 'अवधविलास' की रचना करते है । भले ही कवि ने राम के द्वारा ताड़का वध, अहिल्या उद्धार , रावण संहार आदि वीरतापूर्ण कार्यों का संकेत कर दिया हो, किन्तु कवि का अभीष्ट तो इष्ट का विलास ही रहा है । इसी कारण राम की लीलाओं की पृष्ठभूमि से काव्य का प्रारंभ करते हैं । अयोध्या , सरयू का वर्णन करते हैं । क्यों राम-सीता के जन्म तथा अनेक ललित क्रीड़ाओं का वर्णन कर वनवास तथासीता हरण जैसी लीला माधुर्य में बाधक घटनाओं का संकेत कर पुनः राम-सीता को अवध में विराजमान दिखा देते हैं। यथा -

"वनचर अनुचर करि चमू बैठि अवध जस जुक्त ।"[2]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 198-199

2- उपरिवत्, पृ० 398

गौण रूप में तो रावण, वृन्दा-जालंधर, श्रृंगी ऋषि, दशरथ आदि अनेक पात्र कथावस्तु को आधार प्रदान करते हैं, किन्तु इन पात्रों का विलास कवि का अभीष्ट नहीं है। भले ही प्रसंगवश कवि ने इन पात्रों को विस्तृत रूप में ले लिया हो। माधुर्योपासक लालदास के अवध के विलास के आधार पर -राम-लीला ही है, जिसकी विलास लीलाओं के लिए ही अनेक अन्तःकथाओं, उपकथाओं व उपपात्रों का संयोजन किया है।
प्रबंध की कथात्मक योजना अनेक शिथिलताओं के उपरान्त भी सुगठित कही जायेगी। भले ही उसमें रामचरित-मानस, राम चन्द्रिका, कामायनी जैसे महाकाव्यों की भाँति आधिकारिक और प्रासंगिक कथाएँ शास्त्रीयता के अनुसार न मिलती हों तथा नाटकीय अर्थ प्रकृतियां, कार्यावस्थाएं व सन्धियों का समुचित पालन न किया गया हो, किन्तु राम के अवध विलास को केन्द्र मानकर मूल्यांकन किया जाये तो सारी कथा सुगठित दिखाई देती है क्यों कि राम की अनेक लीलाओं का उद्घाटन करने के लिए अनेक छुट-पुट कथाओं की व पौराणिक कथाओं की योजना की गई है।
'अवधविलास' की प्रबन्धात्मकता का गठन विचित्र अनुबन्ध के साथ हुआ है। कवि प्रबन्धात्मकता के बीच में 'मुक्तक वर्णन का आनन्द भी प्रदान करता चलता है।

मंगलाचरण -

महाकाव्य की परम्परा के अनुसार कवि ने अभीष्ट की सिद्धि और अनिष्ट के निवारण के लिए मंगलाचरण भी किया है। मंगलाचरण के रूप में सर्वप्रथम भूभार उतारन हेतु अवतार ग्रहण करने वाले विष्णु की वन्दना की है -

"बंदौ हरि अवतार भक्त काज जे बपु धरे।
दूरि कियौ भू भार असुर मार सुर सुष दये।।
x x x
श्वेतबसनधर चन्द्र सम बदन प्रसन भुज चारि।

विघ्न हरन मंगल करन लाल विष्णु उर धारि ।"[1]

लालदास ने विष्णु की वन्दना के बाद गुरु, गणपति, हरिहर, सरस्वती, ब्रह्मा, महामाया, सनातन, पारषद्(हनुमान) इन्द्र, नारद , व्यास , वशिष्ठ, शुकदेव, भारद्वाज , वाल्मीकि, कश्यप, विश्वामित्र , गौतम , दुर्वासा, भृगु, च्यवन, प्रह्लाद, अर्जुन , ऊधो, गोप-गोपिका आदि की वन्दना उनके नामोल्लेख के साथ की गयी है ।

मंगलाचरण के क्रम में जहाँ अन्य कवियों ने संतों, भक्तों की वन्दनाएँ की हैं, लालदास ने एक लम्बी तालिका देकर अपने ज्ञान के प्रारंभिक स्रोतों की ओर संकेत किया है ।

वन्दना की इस श्रृंखला में जहाँ एक ओर वैदिक देवता हैं, वहीं दूसरी ओर पौराणिक, एक ओर जहाँ भक्त हैं, वही दूसरी ओर संत, जहाँ रसिक हैं, वहीं आचार्य , जहाँ रामकथा के पात्र हैं, वहीं भागवत की गोपगोपिकाएँ । इतने व्यापक क्षेत्र में अपनी वन्दना निवेदित करने के पीछे कवि का यही भाव प्रमुख रहा होगा कि उन्होंने जिन-जिन क्षेत्रों से ज्ञान का स्पर्श किया है, उनका भी कृतज्ञतापूर्ण उल्लेख हो जाए । इस प्रकार कवि का मंगलाचरण पूर्ववर्ती रामकवियों की अपेक्षा विस्तृत क्षेत्र को लेकर चला है ।

विविध वर्ण्य विषय -

महाकाव्य के वर्ण्य विषयों में शास्त्रीय व्यवस्थानुसार संध्या, रजनी, प्रातः , मृगया, पर्वत, सागर, स्वर्ग, यात्रा, संयोग-वियोग पुत्रोत्पत्ति, निर्वाण आवश्यक बताया गया है ।

'अवधविलास' महाकाव्य में संध्या, रजनी का वर्णन नहीं मिलता, यदि है भी तो इस स्तर का नहीं जिसे महाकाव्य

1- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०।

के वर्ण्य- विषय के रूप में रखा जाए ।

इसी प्रकार नदी, सागर, पर्वतों का वर्णन महाकाव्य की गरिमा के अनुसार नहीं किया। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि महाकाव्य के इस शास्त्रीय लक्षण की पूर्ति के लिए नदियों पर्वतों, तीर्थस्थलों की नाम -गणना करा दी है । उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है -

"गंगा सरस्वती जमुना रेवा। चंद्रभागा सतद्रू पुनि एवा ।
शिवा देविका और विपासा । ऐरावती सरजू हि सकासा ।।

x x x

कावेरी गोदावरी बेना । कुंकनावति सीता सुष देना ।।
सुक्त मती तमसा बैतरनी । पुहुप बाहनी तामस परनी ।।

x x x

तीरथ और सुधाम बषानौं । तिन्ह के नाम ध्यान हिए आनौं ।।

x x x

मथुरा माया द्वारा वंती । काशी कांची अंत्य कामंती ।।

x x x

चित्रकूट विंध्याचल आवत । सेतबंध रामेश्वर धावत ।।"[1]

मात्र नामकरण महाकाव्य का लक्षण नहीं है । यहाँ भी यही कहा जा सकता है कि कवि ने उन्हीं विषयों का अवगाहन किया है, जो लीला विलास के साधक हैं । शास्त्रीय लक्षणों की प्रतिबद्धता कवि के साथ नहीं है।

इसी प्रकार यात्रा , मृगया आदि का वर्णन लालदास ने नहीं किया । महाकाव्यों के लक्षणों के अनुसार नगर वर्णन भी किया जाता है । लालदास ने केवल अयोध्या का वर्णन ही नहीं किया अपितु अयोध्या के उद्भव और जन्म की अद्भुत कहानियाँ रच डाली हैं । महाकाव्य का वर्ण्य- विषय युद्ध वर्णन भी होना चाहिए । 'अवधविलास'

1- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 278-279

में मल्लयुद्ध और कुश्ती के दाँव-पेंचों का इतना सजीव वर्णन है कि एक-एक दाँव-पेंच अपनी पूरी भंगिमा के साथ मूर्त बिम्ब लेकर खड़ा हो जाता है तथा भारतीय कुश्तियों का वर्णन करके एवं उनके प्रकारों की मुद्राओं का अंकन करके लालदास ने एक ओर भारतीय कुश्ती के प्रति अपनी रुचि का परिचय दिया है, वहीं दूसरी ओर अपनी भाषा सामर्थ्य को भी प्रमाणित किया है। सरयू तट पर राम की विविध क्रीड़ाओं के अंतर्गत कुश्ती के दाँव-पेंचों का वर्णन उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है -

"लत्ती लपेटा चलावैं चपेटा ।

x x x

मारैं उलत्था रहैं भार भत्था ।
नवै अंग तोरैं औ जाघैं मरोरैं ।

x x x

झटकैं लटकैं पग हाँथ धरैं ।
अटकैं पटकैं फटकैं न डरैं ।

x x x

पसरैं पछरैं उछरैं दबरैं ।

x x x

छिटका छटकैं पटुका तरकैं ।
गाड़ि डार झिलारि कला लरकैं ।
गज ज्यों झगा ज्यों मल्ल मार थकैं ।
लरतैं अरतै नहिं काल थकैं[1] ।"

इस प्रकार कुश्ती के दाँव-पेचों का वर्णन सर्वथा महाकाव्य के अनुकूल ही है।

महाकाव्य में लोक जीवन के विश्वास, शकुन, लोकरीतियों और लोक विश्वासों का भी प्रतिनिधित्व होता है। 'अवधविलास' में इस प्रकार के लोक विश्वास पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए पंचक लगने

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 306-307

पर पाँच वस्तुओं का निषेध बताया है । लालदास के शब्दों में -

"पातक पंच होत नित जनहीं । सुना पंच कहत बुध तिन्हहीं ।
ऊषरि जाति बढ़नि अरु चुल्ही । गागरि पानि रहत तेहि मुलो ।।"[1]

'अवधविलास' में वियोग वर्णन तो अत्यन्त कारुणिक एवं संवेदक बन गया है । चतुर्थ विश्राम में वृन्दा के वियोग में विष्णु का विलाप कारुणिक एवं हृदय द्रावक है -

"हा वृन्दा हा वृन्दा वृन्दा । मोहि तज गई कहाँ मुष चन्दा ।।
अधर मधुर मृदु बिंब रसाला । को मोहिं पान कराइ है बाला ।।

x x x

वृथा सबै जिन्ह के गुन मानी । पिय की प्रकृति नहीं जिन्ह जानी ।
आज्ञा भंग कबहुं नहिं कीना । वृन्दा बिछुरि बहुत दुष दीना ।।[2]

'अवधविलास' में रामलक्ष्मण के विश्वामित्र के साथ चले जाने पर दशरथ व रानी का क्षोभभरा पुत्र वियोग भी अत्यधिक करुण बन पड़ा है । उदाहरण के लिए -

"देषहु कुमति भई दुष दाते । मैं हूं न संग गयो जहां जाते ।
विश्वामित्र नाम जग पायो । मो कंह तो विषहा होइ आयो ।
आयो जटा झुलावत दाढ़ी । लै गयोजीव प्रान तै काढ़ी ।
ठग ज्यों मोहि ठग्यो अचकाई । लै गयो पूत दूत की नाई ।।"[3]

महाकाव्य के वर्ण्य- विषय के अनुसार पुत्रोत्पत्ति का वर्णन 'अवधविलास' में विस्तार के साथ प्राप्त होता है । पूरा एक विश्राम रामजन्म के ह हर्षोल्लास की प्रतिक्रिया वश रचा गया है । उदाहरण के लिए रामजन्म पर हर्षोल्लास व्यंजक कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

" विप्र मंगल वेद गावत गीत गावत कामिनी ।।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ031
2- उपरिवत्, पृ0 140
3- उपरिवत्, पृ0 344

देव नभ करि कर्म गावत सुनत भावत नृप मनो ।।

x x x

देव हरषे पुष्प बरसे भयो हित मन जानि कै ।।
राम जू को जन्म मंगल लहेउ लाल बखानि कै ।।"[1]

नामकरण –

महाकाव्य का नामकरण या जो नायक-नायिका के नाम पर होता है अथवा महाकाव्य की किसी प्रमुख घटना के आधार पर, लालदास ने महाकाव्य का नामकरण काव्य के प्रमुख विषय अवध में राम के विलास के आधार पर 'अवधविलास' किया है, जो सर्वथा युक्ति संगत है, क्यों कि किसी कृति का नाम उसकी सम्पूर्ण वस्तु का व्यंजक होता है । 'अवधविलास' नामकरण भी इसी प्रकार है । नाम से ही प्रतीत होने लगता है कि कवि ने इस कृति में राम के लीला विलास का वर्णन किया है ।

उपर्युक्त विवेचन के प्रकाश में यह कहना युक्ति युक्त होगा कि 'अवधविलास' में महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों का पूर्ण पालन नहीं किया गया । इसका कारण यह है कि कवि का उद्देश्य राम के 'अवधविलास' का वर्णन करना रहा है, न कि अनेकानेक शास्त्रीय अनुबन्धों में बंधना । फिर भी महाकाव्यत्व एवं प्रबन्धकत्व के अधिकाधिक शास्त्रीय लक्षण उपलब्ध हो जाते हैं और एक महाकवि से यह अपेक्षा भी की जाती है।

पुरुषार्थ चतुष्टय में से किसी एक की सिद्धि –

पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) में से किसी एक या अनेक की सिद्धि आवश्यक मानी गई है, किन्तु यह पहले ही कहा जा चुका है कि कवि का लक्ष्य शास्त्रीयता का अनुपालन नहीं था, अतः लालदास ने 'अवधविलास' में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष किसी की भी सिद्धि नहीं की । लालदास एक रसिक भक्त कवि

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 257

हैं, भक्त कभी भी मोक्ष नहीं चाहता, निस्पृह होता है, अतः अर्थ भी उन्हें काम्य नहीं है । काम भी उनका अभीष्ट नहीं है । धर्म उनका लक्ष्य माना जा सकता है । लालदास सदैव लीला में रमने वाले कवि हैं। अतः राम का नित्य विलास ही इनका काम्य है -

"कृष्न जथा बृज माहिं सदा करत बिहार प्रकास ।
तैसे सीताराम को नित ही अवधबिलास ।।"[1]

अंगीरस-

भारतीय दृष्टि से महाकाव्य में नाना रसों के निबन्धन के साथ एक प्रधान रस की व्याप्ति होनी चाहिए , जिसे अंगी रस कहा गया है । आचार्यों की मान्यता है कि अंगीरस श्रृंगार , वीर अथवा शान्त होना चाहिए । वस्तुतः अंगीरस अथवा मूलरस वही होता है जो काव्य के आरम्भ में प्रगट होकर अन्त तक व्याप्त रहता है तथा जिसे प्रबन्ध के भीतर पुनः खोजा या पाया जा सके ।

रस की दृष्टि से यदि 'अवधविलास' को देखा जाये तो यही कहना पड़ेगा कि 'अवधविलास' का अंगीरस न श्रृंगार है, न वीर है, न शान्त । 'अवधविलास' का अंगी रस भक्ति रस रस कहना चाहिए क्यों कि भक्तिभाव के प्राधान्य का प्रतिपन्न ही 'अवधविलास' है । प्रारंभ से अंत तक भक्ति रस का विलास ही विलसित होता है । अंग रूप में तो शान्त, करुण , वात्सल्य आदि रसों की व्यंजना हुई है किन्तु अंगीरस भक्ति रस है ।

इस प्रकार 'अवधविलास' में अंगीरस की स्पष्ट व्यंजना है, जो शास्त्रीय व्यवस्था से मेल न खाते हुये भी प्रबन्ध में एक अंगी-रस की सर्वातिशयी व्याप्ति की व्यवस्था की पूर्ति करती है ।

चरित्र-चित्रण -

पात्रों का चरित्र चित्रांकन भी महाकाव्यत्व का

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० ।

लक्षण है । लालदास ने पात्रों का चारित्रिक विकास तुलसी , वाल्मीकि के पात्रों अथवा अन्य रामकथा के पात्रों के समान नहीं किया , फिर भी जिस रूप में चरित्रांकन किया गया है, उसकी विवेचना आवश्यक है । लालदास ने जिन पात्रों की चारित्रिक व्यंजना की है, उनमें राम, सीता, रावण तो है ही, इनके साथ कुछ छुट-पुट पात्रों यथा दशरथ , श्रृंगी ऋषि, विष्णु आदि को भी चरित्र के अन्तर्गत स्वीकृत किया है ।

राम -

'अवधविलास' के नायक राम हैं, वह धीर ललित कोटि में आते हैं । राम के चरित्रांकन में सबसे प्रमुख बात यह आती है कि लालदास ने राम का चरित्रांकन वाल्मीकि , तुलसी के राम के चारित्रिक विकास की तरह नहीं किया, क्यों कि लालदास के राम परम्परित राम से भिन्न हैं । वह वनगमन करने वाले, संघर्षमय व्यक्तित्व के राम नहीं हैं, वह तो लीला विलास के निराले राम हैं । लालदास ने स्वयं लिखा है-

"बनोबास सीता हरण लंक दहन नृप काल ।
ए माया के ष्याल हैं राम हैं लाल निराल ।।"[1]

इससे स्पष्ट होता है कि लालदास ने राम के चरित्र को जिन विशिष्टताओं को उद्घाटित किया है, उनमें उनका माधुर्यपरक रूप ही प्रमुख है । लालदास के राम ईश्वर है अत: ईश्वर के रूप सौन्दर्य व ऐश्वर्य का वर्णन किया है। लालदास ने राम के विराट् स्वरूप को काल के काल (महाकाल) के रूप में स्थापित किया है -

"राम काल के काल हैं माता जानति नाहिं ।"[2]

इसी प्रकार -

"तब दषरथ मुष चुंबन चाहै । विश्वरूप तब दरसहि पाए ।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 290

2- उपरिवद्, पृ० 299

3- उपरिवद्, पृ० 272

इससे स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने राम का विराट् रूप दिखाया है।

राम के राजसी वैभव एवं ऐश्वर्य सम्पन्न चरित्र को कवि ने एक रूपक द्वारा प्रस्तुत किया है,जिसमें यमराज को कोतवाल , शंकर को फौजदार , ब्रह्मा को दीवान तथा गणेश को मंत्री बताया है -

"ब्रम्हा से दीवान हैं जाके । स्वायंभू मनु मंत्री ताके ।।
फौजदार शंकर सिर दारा । जाके इंद्र जली शिकदारा ।।
कोतवाल जमराज हैं जोरा । भैरव ताको फिरत करोरा ।।
धर्मराज पुनि रहल अमीना । ग्राम देव कानूनगो कीना ।।

इस प्रकार लालदास ने योग निष्ठ व्यक्तित्व के रूप में राम को चित्रित करने का प्रयास किया है । ताड़का वध, अहिल्याउद्धार, राक्षसों के संहार से सम्बंधित वीरता पूर्ण गुणों का संकेत किया है ,किन्तु उन्हें राम का लीलापरक रूप ही अभीष्ट है ।

सीता -

सीता भी काव्य की प्रमुख पात्रा है, क्यों कि राम का लीला विलास सीता के साथ ही होता है लालदास ने सीता के रूप सौन्दर्य का वर्णन बड़े मनोयोग से कियाहै । सीता का रूप सौन्दर्य चन्द्र की कला के समान दिन पर दिन बढ़ता है । उदाहरण के लिए -

"बालक बढ़त एक दिन जाहीं । सीता बढ़त घरी इक माहीं ।

x x x

तनु छवि बढ़त होत सुखदाई । जैसे चंद्र कला अधिकाई ।
रूपशील गुण लाज सु अंगा । जनु दिन बढ़त ब्याज धन संगा ।
फिरत बढ़त सखिन्ह में बाला । मनु शशि द्वोज गगन उड़माला ।।"[2]

लालदास सीता को रूप सौन्दर्य एवं यौवन सम्पन्न बताना चाहते थे,किन्तु सीता जगत की माता है,अत: उनका नख-शिख

1- अवधविलास, लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ0293
2- उपरिवद्, पृ0 29।

श्रृंगार लालदास की वाणी से प्रसुत नहीं हो सका -

"नख सिख शोभा देह को लाल अनूपम जाहि ।
सीता माता जगत की कैसे बरणौं ताहि[1] ।।"

लालदास ने सीता को अनेक प्रकार की शिक्षायें दिलाकर सुशिक्षिता के रूप में चित्रित किया है । व्याकरण आदि का वृहत् ज्ञान करवाया है -

"प्रथमहिं बाला व्याकरण साधनिका करै लागि ।
सुमिरि सरस्वती लै षरी लिषन लगी अनुरागि[2] ।।"

लालदास की सीता मर्यादावादी होकर भी अनुरागमयी है । वे राम को अपना वर स्वीकार करती हैं, यहाँ तक की धनुषभंग की शर्त को भी शिथिल कर देती हैं -

"सिय प्रन कीन्ह मनहिं मन भारी । रामहिं बरब कि रहब कुमारी।
काहे न धनुष चढ़ावहु कोई । मेरे तो वर राम भयोई[3] ।।"

इस प्रकार सीता का चरित्र नवीन रसिक भावभूमि पर चित्रित किया गया है । लालदास की सीता तुलसी की सीता की भाँति वनवास में राम के संग रहना चाहती है । लालदास की सीता प्रिय के साथ वनवास में श्रम- शीत भी सहने को तैयार है । तथा प्रिय के बिना इस लोक के वैभव को भी नहीं स्वीकार करना चाहती हैं । कवि के शब्दों में -

"प्रीतम संग बनबास भल सहब सीत अरु घाम ।
लाल पियारे पीय बिनु इन्द्रलोक केहि काम[4] ।।"

इस प्रकार सीता के चरित्र से अनुराग और प्रेम का आदर्श उपस्थित किया गया है ।

रावण -

रावण का चरित्र एक खलनायक के रूप में देखा जा

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 292
2- उपरिवत्, पृ0 293
3- उपरिवत्, पृ0 351
4- उपरिवत्, पृ0 390

सकता है । लालदास ने रावण का चरित्रांकन भिन्न तरह से किया है । अन्य राम कथाओं में सीधे रावण के अत्याचारों का वर्णन किया गया है। लालदास ने चरित्र के मनोवैज्ञानिक विकास क्रम को ध्यान में रखते हुए चरित्र को स्वाभाविकता से युक्त किया है ।

लालदास ने रावण उत्पत्ति के कई प्रकार के वर्णन दिये हैं, जो ब्रम्ह पुराण, ब्रम्ह वैवर्त, अगस्त्य संहिता आदि ग्रंथों में वर्णित है ।

लालदास ने रावण के जन्म काल के उथल-पुथल पूर्ण वातावरण को चित्रित करके रावण के आतंक एवं उसकी अराजकता के चारित्रिक अंशों को उद्घाटित कर दिया है । रावण के जन्म के समय के अनेक प्रकार के अरिष्ट प्रारंभ हो गये जैसे, बिना बादल ही आकाश घरघराने लगे, बिजली चमकने लगी, आँधी चलने लगी, देव मंदिर भहराने लगे आदि -

"रावन जन्म भयौ जेहि बारा । उठे अरिष्ट अनेक प्रकारा ।।
टूटे लूक धूरि उधिरानी । बरषे रूधिर भूमि थहरानी ।।
x x x
गऊ रूदन मुनि बदन मलीना । देव विमान भए गति हीना ।।
तीरथ जल तहँहि झुराने । ठौर- ठौर देवल भहराने ।।
घर घर भए कलह बिस्तारा । बोले बौस सियार बिकारा ।।
x x x
जनमेउ असुर अशुभ भय आगम । चले धर्म भये पाप समागम ।।"[1]

इतना ही नहीं विप्र के गोद लेने पर वह (रावण) तिलक मिटा देता है, जनेऊ तोड़ देता है, तुलसी का पौधा बढ़ने नहीं पाता, खोदकर फेंक देता है । किसी भी धार्मिक पुस्तक को फाड़कर फेंक देता है । घंटा शंख और देव मूर्तियों का भंजन कर देता है । इस प्रकार का चरित्र वर्णन युगीन

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ080-81

प्रभावों को परिलक्षित करने के साथ-साथ कई स्थान पर हास्य रस को उत्पत्ति करने लगता है - क्योंकि वह दशमुख, बीस भुजा वाला है। अतः किसी का प्रत्युत्तर दस गुने और बीस गुने में देता है -

"एक गारि कोउ देइ पुकारो । एकहीं बेर दई दश गारो ।।"[1]

रावण की अराजकता एवं भयंकरता का एक उदाहरण दृष्टव्य है -

"जो कछु करै सहै सब कोई । फेरि ताहि कछु उतर न देई ।।"[2]

लालदास ने रावण को अहंकारी एवं दर्पी व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया है । माता के द्वारा उत्तेजित करने पर रावण का अहं बोलने लगता है-

"रावन हाथ मुँछ पर फेरा । देखहु मात ख्याल अब मेरा ।।
एक लंक को कौन बड़ाई । तीन लोक जो राज्य न पाई ।।
सब संसार करौं अब मेरो । तौ मोहि जान दूध पियो तेरो ।।"[3]

लालदास ने रावण को इतने शक्तिशाली रूप में चित्रित किया है कि उसने चन्द्र, सूर्य को सेवक बना रखा था । इन्द्र आदि देवताओं को बन्दी बना रखा था तथा समस्त सांसारिक रोग उसके यहाँ घसियारे का कार्य करते थे -

"पानी पवन अगनि सब नाषे । चन्द सूर सेवक करि राषे ।।
इन्द्रादिक जु देवता जेते । बल करि बँदि कीन्ह सब लेते ।।
ईधन बीनत फिरहिं बिचारे । रोगन करि राषे घसियारे ।।
ज्वर, सब सूल प्रमेह हैं जेते । परे बँदि रावन का तेते।।"[4]

इस प्रकार के विवेचन से जहाँ एक ओर रावण की शक्ति और वैभव की व्यंजना होती है, वहीं प्रकारान्तर से कवि यह भी व्यंजित करना चाहता

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 82

2- उपरिवत्, पृ० 82

3- उपरिवत्, पृ० 83

4- उपरिवत्, पृ० 88

है कि समस्त रोगों का आगार रावण है । अर्थात् समस्त सांसारिक रोगों का प्रतीक रावण है, क्यों कि रावण को असद् वृत्तियों का प्रतीक माना ही गया है, इसके अतिरिक्त इस तथ्य की भी व्यंजना हो जाती है -

"दैहिक दैविक भौतिक तापा रामराज नहिं काहुहिं व्यापा ।।"[1]

अर्थात् राम के समय में रावण ही रुग्ण प्रधान व्यक्तित्व था । इस प्रकार रावण को खलनायक चरित्र का विषय बन सका है । इन पात्रों के अतिरिक्त अन्य सहायक पात्रों का चारित्रिक विकास नहीं कियागया है, थोड़ा बहुत विवेचन कर दिया गया है वह पृथक् बात है, किन्तु गौण चरित्र- चित्रांकन में कवि विशेष रुचि नहीं रखता है ।

कथा सृष्टि -

'अवधविलास' की कथा सृष्टि विशिष्ट व विचित्र है, जो अवध को परम्परित रामकाव्यों से भिन्न स्थान प्रदान करती है। कथावस्तु के विषय में विस्तृत विवेचन पहले की जा चुकी है, अतः उसका पिष्ट पेषण उचित नहीं है । इतना कहना ही पर्याप्त है कि 'अवधविलास' की कथावस्तु मात्र परम्परित राम-सीता के घटनात्मक या चारित्रिक विकास से पल्लवित कथा नहीं है, वह पुराण सम्मत बहुविधि प्रसंग सम्पृष्ट कथा है, जो अपना पृथक् अस्तित्व रखती है ।

शैली-

'अवधविलास' की शैली के विषय में भी विवेचन हो चुका है। यहाँ यही कहा जा सकता है कि 'अवधविलास' महाकाव्य की शैली परम्परित महाकाव्यों से भिन्न है । 'अवधविलास' की शैली प्रसंग से प्रसंग जोड़कर कथावस्तु को पल्लवित करने वाली है ।

अंत में कहना पड़ेगा कि यदि शास्त्रीय लक्षणों व महाकाव्य गत वर्ण्य विविधा को केन्द्र में रखा जाये तो 'अवधविलास' को महाकाव्य कहने में संकोच होगा, किन्तु यदि 'अवधविलास' को एक स्वतंत्र

1- रामचरितमानस, तुलसीदास

महाकाव्यत्व की दृष्टि से, भावव्यंजना की दृष्टि से देखा जाए तो
वह महाकाव्यत्व के गौरव को पूर्ण रूपेण वहन करता है ।
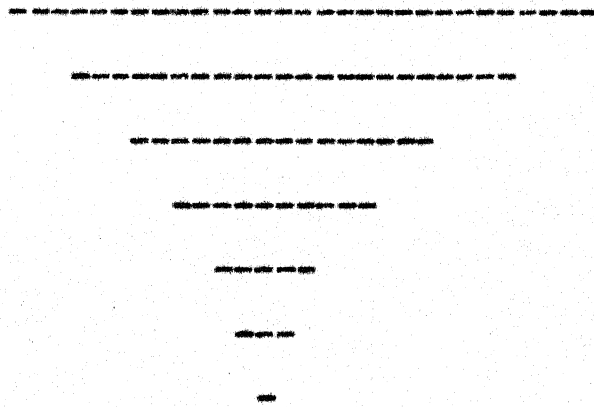
चतुर्थ प्रकरण

भाव व्यंजना

भाव - व्यंजना

सौन्दर्य -चित्रण:-

" सौन्दर्य सृष्टि की आदिम और मूल मनोवृत्ति है । यह वृत्ति चेतन और अचेतन के स्तरों पर सम्पूर्ण क्रिया कलाप की प्रेरक है।" [1]
सौन्दर्य को सत्य और शिव भी कहा गया है । छायावाद के प्रमुख कवि पंत ने भी सौन्दर्य का विश्लेषण इस प्रकार किया है-

"वही प्रज्ञा का सत्य स्वरूप,
हृदय में बनता प्रणय अनूप,
लोचनों में लावण्य अपार
लोक सेवा में शिव अविकार।" [2]

बिहारी सौन्दर्य को आत्मनिष्ठ मानते है:-

"समै -समै सुन्दर सबै, रूप कुरूप न कोय ।
मन की रूचि जेती जितै, तित तेती रूचि होय ।।" [3]

इस प्रकार सौन्दर्य मन की रूचि पर आधारित है ।
डॉ० हरद्वारी लाल शर्मा भाव और वस्तु के समन्वय में ही सौन्दर्य की पूर्णता का अनुभव करते हैं । [4]

1- "यह सौन्दर्य शिवत्व सृष्टि का मूल राग है,
सत्य यही चेतन का मन के अवचेतन का
और सृष्टि सेचन का यह मधुमय पराग है ।"

अभिशाप्त शिला, डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 88

2- परिवर्तन , सुमित्रानंदन पंत

3- सम्पा० और टीकाकार , जगन्नाथ रत्नाकर,बिहारी रत्नाकर, दो० 432

4- सौन्दर्य शास्त्र,डा० हरिद्वारी लाल शर्मा, पृ० 80

डॉ० राम विलास शर्मा का सौन्दर्य के सम्बन्ध में मत इस प्रकार है –
"प्रकृति, मानव जीवन तथा ललित कलाओं के आनंद दायक गुण का नाम सौन्दर्य है।[1]"

सौन्दर्य चिंतन की परम्परा में कालिदास, माघ,[2] भारवि,[3] दण्डी , भर्तृहरि जयदेव, शूद्रक और हाल का महत्वपूर्ण स्थान है ।

आई०ए० रिचर्ड्स, हडर, मोड, जेरोटैड आदि विद्वानों ने सौन्दर्य को मूल्य परक व्याख्या की है । उनके अनुसार जो मूल्यवान् है वही सौन्दर्य है। पाश्चात्य सौन्दर्य चिंतना के कतिपय विचारकों, जिनमें बोसाके, हीगल,टालस्टाय आदि प्रमुख हैं, की मान्यता है कि सौन्दर्य की सत्ता रूप और मानस दोनों में होती है ।

लालदास के सौन्दर्य को प्रमाणित करने वाले स्रोतों में रसिक भक्ति की प्रेरणा मूल प्रतीत होती है । कवि राम और सीता के सौन्दर्य की विविध छवियों को देखकर मुग्ध होता है । राम के तोतरे बचन उन्हें मुग्ध करते हैं । बाल्यरूप में राम का श्रृंगार चित्रित किया गया है । कवि के शब्दों में –

"देषि सुन्दर ललचि ललकें बदन चुंबत जूथही
बैठि कोमल केश शिर के ललित हाथन्ह गूथही[4] ।"

लालदास ने न केवल राम के सौन्दर्य का ही चित्रण किया है, अपितु सौन्दर्य के अलंकारिक पक्ष को भी उद्घाटित किया है । कवि के शब्दों में-

"कठुला कंठ भरे छवि झूले , कानन्ह नागफनी रबि भूले ।
सुन्दर बदन कमल की शोभा, कुंचित केश भ्रमर जनु लोभा[5] ।।

1- भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा, डॉ० राम विलास शर्मा,पृ० 508

2- क्षणे- क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः।।
शिशुपालवध, 4/17

3- किरातार्जुनीय, 7/5

4- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 266

5- उपरिवत्, पृ०275

राम के सौन्दर्य को देखकर युवतियाँ मुग्ध होती है । कोई स्त्री कामना करती है कि यह मुझे पतिरूप में मिलते, किन्तु विवाहित स्त्रियाँ इस अवसर से वंचित हो गई है। अतः उनकी कामना है कि राम उन्हें पुत्र रूप में प्राप्त हों । कवि ने भक्ति के विविध प्रसंगों से सौन्दर्य की अत्यन्त मनोहारी व्यंजना की है -

"व्याही देखि-देखि पछिताहीं। दइ अलबर हम कहँ दए नाहीं ।
कन्या कहँ कहा अब करिए। कौन भाँति ऐसे बर बरिए ।

x x x x

जेइ लरकोरि रही कहँ तेई। यइ अस पूत विधाता देई ।।" [1]

सीता के सौन्दर्य की प्रशंसा में कवि का यह कथन है कि विधाता ने इसे सौन्दर्य की अनुपम कृति के रूप में रचा है, कितना अच्छा सुखद संयोग हो कि इसे भर्तार भी इसीप्रकार का मिले । कवि के शब्दों में -

" जस यहि रूप दीन्ह करतारा। दइ अस कहुँ मिलिहैं भरतारा ।" [2]

सीता के सौन्दर्य के सम्बंध में कवि का यह कथन है कि सीता कुँवरि जहाँ-जहाँ प्रकाश फैलाती है, वहीं पृथ्वी स्वर्णमयी हो जाती है । जायसी की पद्मिनी जिस ओर देखती है, उधर कमलों की सृष्टि हो जाती है । किन्तु लालदास ने यहाँ स्वर्णमयी सृष्टि कर दी है । सोने को सुगंध नहीं मिलती और सुगंध को सोना नहीं मिलता । जायसी के सौन्दर्य में गंध है तो लालदास का सौन्दर्य स्वर्णमणि-युक्त है । यथा लालदास के शब्दों में-

" जहँ जहँ कुँवरि फिरत परकासै,। तहँ तहँ अवनि कनकमय भासै ।" [3]

1- अवध-विलास, लालदास, सं० चन्द्रिका प्रसाद, दीक्षित पृ० 349

2- उपरिवत् पृ० 292

3- उपरिवत् पृ० 292

सीता के रूप सौन्दर्य के सम्मुख चंपक और कंचन भी मलिन दिखाई पड़ते हैं । कवि के शब्दों में :-

"मुख पर अलक ललित इहि भावक। जनु शशि पर फेलत अहि शावक ।
गौर अंग कछु बिधि अस कोना। चंपक कंचन लगत मलोना । "[1]

लालदास के रूप सौन्दर्य के अंतर्गत उद्दीपक और सांवेगिक सौन्दर्य वर्णन तथा तापस सौन्दर्य वर्णन भी पाया जाता है । उद्दीपक या सांवेगिक सौन्दर्य के अंतर्गत आंगिक सौन्दर्य,हाव -भाव पूर्ण विलास एवं श्रृंगार के उद्भास्वर नामक अनुभावों को संयुक्त किया है । ऐसे वर्णनों के अंतर्गत रूप का सम्मोहन पक्ष अधिक उद्घाटित हुआ है ।

तापस सौन्दर्य के अंतर्गत कालिदासीय परम्परा का अनुगमन प्रतीत होता है ।

उद्दीपक वर्णन के अन्तर्गत अंगड़ाती हुई,जंभाती हुई, भृकुटि को आकुंचित-विकुंचित करती हुई तथा आरसी लेकर अंजन संवारती हुई नायिका का चित्रण है। इस प्रकार के वर्णनों में रीतिकालीन परम्परा के संकेत मिलते हैं ।सौन्दर्य की सम्पूर्णता में कमनीयता, शुभ्रता एवं मंजुलता का कवि ने विनियोग किया है । कहीं-कहीं इस सौन्दर्य के निर्माण में काम को भी कृतिकार के रूप में रखा है, जिससे विदित होता है कि रूप सौन्दर्य के अंतर्गत ऐन्द्रियता को भी सम्मिलित किया गया है ।

लालदास ने नारी के स्थूल अंगों का उत्तेजक और मादक वर्णन भी किया है । ऐसे वर्णनों में सौन्दर्य के साथ कामशास्त्रीय चेष्टाएं भी परिलक्षित होती हैं। किन्तु कवि का उद्देश्य ऐसे प्रसंगों में मानव मन के संवेगों को उत्तेजित करना ही है। उदाहरण के लिए श्रृंगी ऋषि के प्रसंग में लालदास के सौन्दर्य चित्रण की दो पद्धतियाँ

1- अवधविलास,लालदास,सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०29।

दिखाई पड़ती है:-

1- रूपजन्य सौन्दर्य चित्रण

2- आत्म परक सौन्दर्य चित्रण

रूपपरक चित्रण कवि का उद्देश्य नहीं है, किन्तु विशुद्ध कवि के रूप में वे ऐसे प्रसंगों में रमते हुये दिखाई पड़ते हैं। आत्मपरक चित्रण में वे ऐन्द्रियता से ऊपर उठ जाते हैं और रामसीता के सौन्दर्य को एक पूर्णता और अखण्डता के रूप में देखते हैं।

लालदास रूप और सौन्दर्य के चितेरे कवि हैं, इसलिए ऐसे प्रसंगों में कवि की कल्पना विराम नहीं लेती। कहीं-कहीं ऐन्द्रिय श्रृंगार का चित्रण मनोविकारों को आवेग प्रदान करता है। लालदास सौन्दर्य को समुद्र तथा रूप को जाल मानते हैं। कवि के शब्दों में:-

"अपनो रूप जाल बिथुरावा।"[1]

रूप तथा सौन्दर्य लालदास के शब्दों में दृष्टि का विषय, शब्दों से अवर्णनीय है, वाणी का विषय नहीं :-

"रूप भरी जोबन भरी। भरी प्रेम गुन खानि।
लाल ताहि देखत बनै। कहत न बनै बखानि।"[2]

सौन्दर्य दृश्य और अनुभूति का विषय है, अभिव्यंजना का व्यापार नहीं। लालदास ने सौन्दर्य का अलंकृत वर्णन किया है:-

"मोती माँग सीस पर राजै। मनहुँ नक्षत्र अकास विराजै।
पाटी स्याम सुधारिन्ह कैसी। सारसुता मनु झलकति जैसी।
x x x x
बिंदु सिंदुर भृकुटि बिचराषे। मनु अहि सिखु दोउ चाहत चाषे।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०185

2- उपरिवत् पृ०184

नयन मोन दल कंज नवोने। अंजन देखंजन सम कोने ।
कहु अलकन्ह विव नयन बिराजे ।मनु मथ तुल जाल जब बाढ़े। "[1]

लालदास ने कहीं-कहीं भक्तिभाव से प्रभावित होकर भी सौन्दर्य का चित्रण किया है:-

"ललित नाभि गंभीर सोहानो। मानहुँ रूप बल्न को बानी।
वक्षस्थल आपूर बिशाला। मुक्ता पुहुप तुलसिका माला।। "[2]

लालदास ने पुरुष सौन्दर्य को भी शब्द रूप दिया है। कवि के शब्दों में:-

"गौर श्याम छवि पंक मृदुल मनोहर माधुरी। "[3]

लालदास के सौन्दर्य प्रेमी होने की पुष्टि स्वयं उनकी निम्न पंक्ति से हो जाती है:-

"सुंदरता को देषि कै लाल सबहिं ललचात। "[4]

लोभ और प्रीति निबंध में आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने प्रीति को लोभ से भिन्न बताया है । कवि लालदास ने सौन्दर्य को भी एक प्रकार का लोभ बताया है । सौन्दर्य व्यक्ति के मानसिक रचना संसार में एक प्रकार का लालच पैदा करता है। रसिक साधक लालदास सौन्दर्य से आकंठ आमग्न है । सौन्दर्य उनके लिए साधना की वस्तु है । वे राम और सीता के सौन्दर्य को देखते हुए नहीं अघाते । सर्वत्र सौन्दर्य में आराध्य का आराधन करते चलते हैं ।सौन्दर्य का समुद्र ओर- छोर नहीं जानता, बालवर्णन, वैवाहिक प्रसंग और युगल शोभा के दृश्य चित्र कवि को सौन्दर्य

1- अवधविलास,लालदास,सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ०221-22

2- उपरिवत्,पृ0327

3- उपरिवत्,पृ0353

4- उपरिवत्,पृ0236

साधना के ही परिणाम हैं । लालदास का सौन्दर्य वर्णन तुलसी की भाँति रसान्दोलित करने वाला है ।

लालदास के सौन्दर्य निरूपण की उत्कृष्टता का आधार भक्तिपरक सम्वेदना है । कवि ने सम्वेदन शक्ति, भक्तिभावना, रसिकतातथा सौन्दर्यानुभव को लेकर राम और सीता के सौन्दर्य के गहरे स्तरों तक प्रवेश किया है, जो सौन्दर्य से चलकर भक्ति तक एक उदात्त भूमिका प्रस्तुत करता है ।

श्रृंगार चित्रण

श्रृंगार का शब्दार्थ है कामोद्रेक की गति। श्रृंगार की स्थिति अनुराग सम्पन्न नर-नारियों में होती है । स्त्री-पुरुष की परस्पर नैसर्गिक आसक्ति ही काम (रति) है, और यही श्रृंगार का आलम्बन, आश्रय है । लालदास ने राम-सीता को श्रृंगार रस के नायक, नायिका के रूप में चित्रित किया है । नायक नायिका के सम्बंधों के आधार पर श्रृंगार रस के दो भेद होते है:-

1- संयोग श्रृंगार

2- वियोग श्रृंगार

संयोग का अर्थ है नायक-नायिका का परस्पर मिलन, अनुकूलन, दर्शन, स्पर्शन, आलिंगन, हावचित्रण, क्रीड़ा और विलास आदि ।

लालदास संयोग श्रृंगार के भक्त कवि हैं । वह सर्वत्र राम-सीता की प्रेम माधुरी में निमग्न रहते हैं, रूप माधुरी को चित्रित करते हैं, किन्तु उनके काव्य में काम और रति को एक विशिष्ट रूप दिया गया है और वह लीलाविलास के रूप में व्यक्त किया है ।

लालदास विशुद्ध श्रृंगारी कवि नहीं है । वे भक्ति श्रृंगार के कवि हैं ; इसलिए उनके श्रृंगार में भक्ति के तत्त्व प्रमुख हैं। भक्ति की प्रमुखता के कारण ही वे सीता के नख शिख-वर्णन करने में संकोच की अनुभूति करते हैं । कवि सीता को सुन्दरी रूप में न देखकर माँ के रूप में देखता है । कवि के ही शब्दों में: -

"नख सिख शोभा देह को लाल अनूपम जाहि ।
सीता माता जगत को कैसे बरणों ताहि।।"[1]

रसिक सम्प्रदाय के कवि होने के कारण इन्होंने सीता और राम के संयोग श्रृंगार के विलास वर्णन में रुचि ली है , किन्तु मर्यादा के कारण वे श्रृंगारी विलास का वर्णन उन्मुक्त रूप में नहीं करते । विप्रलम्भ श्रृंगार के अंतर्गत पूर्वराग, मानप्रवास, करूण वियोग की दस दशाएँ कवियों द्वारा स्वीकार की गई है । लालदास राम और सीता का नित्यसंयोग मानते हैं । अत: विप्रलम्भ श्रृंगार के कम अवसर मिले हैं । किन्तु जहाँ कहीं कवि ने विप्रलम्भ- श्रृंगार का वर्णन किया है, वह अत्यन्त हृदयस्पर्शी है । उदाहरण के लिए वृन्दा के वियोग में विष्णु का विलाप कारूणिक तथा मर्मस्पर्शी है । कवि के शब्दों में :-

"हाबृन्दा हा बृन्दा बृन्दा। मोहि तज गई कहाँ मुख चन्दा।।
अधर मधुर मृदु बिंब रसाला। को मोहि पान कराईहै बाला।।
x x x x
मो बिनु नैंकु रहति नहिं न्यारी। अब कहा करत होइगी प्यारी।।"[2]

संयोग श्रृंगार के अंतर्गत नख शिख चित्रण की एक परम्परा पाई जाती है । नख-शिख वर्णन के अंतर्गत कवि ने जिनका उल्लेख किया है, उनमें राम का नख-शिख वर्णन प्रमुख है । राम के जिन अंगों का वर्णन कवि ने किया है,उनमें केशपाश, लोचन , नासिका, वर्ण , कपोल , अधर , दसन, वदन, कण्ठ , वाणी, उदर , नाभि , त्रिवली , तथा चरणांगुली आदि प्रमुख है। कवि के शब्दों में:-

---

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0292
2- उपरिवत्, पृ0140

" वरण अरुण पैजनि जुत नूपुर। रत्न जटित किंकिनि कटि ऊपर।।
अंगुली ब्लक तड़ित दुति हारो। अरुण उदर पर हार बिहारो।।"[1]

राम के केश और मुख की शोभा वर्णन का एक दृश्य :-

"सुन्दर बदन कमल की शोभा। कुंचित केश भ्रमर जनु लोभा।।
भृकुटी निकटति तिलक दिठौना। मात दीन्ह मति लागै टौना।।
सोहत सीस क्रीट सुखदाई। लोभा सकल उदय भई आई।।"[2]

श्रृंगार के अंतर्गत विशेष रूप से नायिकाओं के श्रृंगार वर्णन में प्रक्षेप वस्त्रों में कंचुकी आदि का वर्णन सभी कवियों ने किया है। इस प्रसंग में लालदास ने चित्र विचित्र कंचुकियों का वर्णन किया है । ऐसा प्रतीत होता है कि भ्रमण के कारण उन्होंने विभिन्न प्रान्तों की रमणियों को देखा होगा, इसलिए उनकी विभिन्न कंचुकियों का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है :-

"केउ केसरि केउ चन्दन केरी । अंगिआ चित्र विचित्र रचेरी।।"[3]

केसर और चन्दन से सुगन्धित कंचुकियों के वर्णन में मध्ययुगीन श्रृंगार की झलक दिखाई पड़ती है । इसी प्रकार चित्र-विचित्र कंचुकियों के वर्णन में विभिन्न प्रदेशों की नायिकाओं की अभिरुचियों का भी परिचय दिया है। अवरोप्य वस्त्रों के अंतर्गत ओढ़नी का भी वर्णन मिलता है :-

"रंग रंग के चीर अनेका। ओढ़ति पहिरति विविध विवेका।।"[4]

वैसे तो कवि का लक्ष्य सामान्य श्रृंगार का वर्णन करना नहीं प्रतीत होता। वह श्रृंगार के समुज्जवल पक्ष पर राम और सीता के दिव्य श्रृंगारी रूप पर

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 275
2- उपरिवत्, पृ0 275
3- उपरिवत्, पृ0 223
4- उपरिवत्, पृ0 223

मुग्ध है और उसी का वर्णन करना कवि का लक्ष्य है किन्तु लौकिक श्रृंगार के वर्णन के अंतर्गत कवि की रुचि वस्त्र और आभूषणों में अधिक दिखाई पड़ती है।

श्रृंगार के आभूषणों के अंतर्गत बाजूबन्द, टाड, कंकन, पहुँची, ककना, गजरा, पछेलिया, छन, चन्द्रहार, कण्ठमाला, मोहन माला, कर्ण फूल, बिवकनियां, टीका, बेंदी, सीसफूल, बेणी फूल, पाइल, मुदरी, गुजरी, क्षुद्रघंटिका, छल्ला, अगुस्ता, आदि आभूषणों का वर्णन कियागया है। इतने विविध प्रकार के आभूषणों का श्रृंगारिक प्रसंग में वर्णन लालदास की श्रृंगारिक मनोवृत्ति को प्रमाणित करता है-

"ककना गजरापहुँचि सलोनि पछेलिया।
मणिन के जगमग जोति बनावै सहेलिया।।
छन टाड बाजूबन्द विराजई। चन्द्रहारधुकधुकी हीये पर राजई।
टीका बेंदी सीस फूल बेंदो बनो। बेणी फूल और मंगल मोतिन्ह सोभावनो

श्रृंगार के विशुद्ध रूप का वर्णन करने के लिए कवि ने बड़ी चतुराई से रानियों का श्रृंगार वर्णन करते समय नायिका के सामान्य श्रृंगार भेदों को व्यक्त करवा दिया है-

भीतर राज लोक महरानी। गतिविनोद होत हरषानी।।

x x x x

केसन बीच फूल रचि काढ़े। मनन्हु जमुन जल फेन सुबाढ़े।।

x x x

गोर कपोल गोल रस भारे। कनक पत्र जनु छोटि सुधारे।।
अधर लाल बरनै नहिं जाई। विद्रुम फूल बन्धूक लजाई।।
अँगिआकसति उरोज रसाला। पहिरे हार मनोहर माला।।"[2]

1- अवध विलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 365-66
2- उपरिवत्, पृ० 221-22-23

श्रृंगार में शरीर शोभा के अंतर्गत तिल और गोदने का भी विवरण कवि परम्परा में पाया जाता है । लालदास ने भी इसका वर्णन किया है-

"कहुँ तिल मुष पर सोहत नीके । कहु गोदना कहु अलक ठौके।।"[1]

श्रृंगार के अंतर्गत वस्त्र, आभूषण ,तिल एवं गोदना का ही वर्णन लालदास ने नहीं किया,वरन् केश राशि तथा श्रृंगारिक प्रसाधनों में मेंहदी और महावर का वर्णन करने में लालदास पीछे नहीं रहे । यथा-

"बेनो रचे विचित्र विसाला। कंचन षंभ चढ़त जनु ब्याला।।"[2]
मेंहदी मंडित हाथ रंगीले। सोहत नष जनु लाल नगीने।।"[3]

मधुर भावों से अनुप्राणित होने के कारण लालदास ने श्रृंगार का विलास वस्तु योजना के भीतर से, चरित्रों के ब्याज से तथा विविध प्रसंगों से व्यक्त किया है| यौवन के उदित होने में शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों के लक्षणों का भी संकेत कवि ने किया है-

"बालक बढ़त एक दिन जाहीं। सीता बढ़त घरी इक माहीं।।
और बरष लगि शिशु तन बढ़ई। सीता एक मास महँ बढ़ई।।
तनु छवि बढ़त होत सुषदाई। जैसे चंद्र कला अधिकाई।।"[4]

1- अवध विलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 224
2- उपरिवत्, पृ० 221
3- उपरिवत्, पृ० 223
4- उपरिवत्, पृ० 291

यौवन के विकास में सौन्दर्य और लज्जा का वर्णन कवियों ने किया है ।लालदास भी इसमें पीछे नहीं रहे। सीता में रूप, गुण, शील और लाज सभी बढ़ते जा रहे हैं। रूप लज्जा और सुकुमारता का भाव व्यक्त करता है, गुण और शील मानवीय नैतिक मूल्यों की ओर संकेत करते हैं--

"तनु छवि बढ़त होत सुखदाई। जैसे चंद्रकला अधिकाई।।
रूप शील गुण लाज सु अंगा। जनु दिन बढ़त ब्याज धन संगा।।"[1]

श्रृंगार रस की चेष्टाओं में अनुभाव और हाव का भी महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। हाव के अंतर्गत नायिका की सहज चेष्टाएँ आती हैं, और अनुभाव के अंतर्गत अनुभावगत चेष्टाएँ आती हैं। लालदास ने हाव तथा अनुभाव दोनों प्रकार के वर्णन किये है-

"अँगिरावति ऊँचे भुज तानै। ऐंठति मानहुँ काम कमानैं।।
राखति एकइ अलक झुकाई। सोहति मुख पर लगति सुहाई ।।
मोहत बदन जँभात अमोला। संपुट कनक रतन जनु खोला।।"[2]

अन्यत्र भी इसी प्रकार की अनुभाव योजना प्राप्त होती है-

कबहुँ कि नैन सों नैन लगाई। चितवत बड़ी देर सुखदाई।।
कबहुँ कि चपल नचावति भौंहे। चितवति मुसकि होई तिरछौंहे।।"[3]

प्रकृति चित्रण-

प्रकृति वर्णन एक नैसर्गिक प्रवृत्ति है । हिन्दी में विविध प्रकार से प्रकृति-चित्रण किए गये है। लालदास का प्रकृति वर्णन परिगणन शैली में अधिक हुआ है।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 29।

2- उपरिवत् , पृ0 178

3- उपरिवत्, पृ0 185

यद्यपि कवि ने प्रकृति पर्यवेक्षण के विशेष अवसर पाये होंगे ,किन्तु उसकी कविता में प्रकृति को व्यापक स्थान न मिलना विचारणीय है। जहाँ कहीं उन्होंने प्रकृति का वर्णन किया है,उसमें उनका पाण्डित्य प्रगट होता है,पर प्रकृति के प्रति प्रेम और पीड़ा का दर्शन नहीं होता। उदाहरण के लिए एक स्थान पर देखें जहाँ प्रकृति के पदार्थों की कैसी लम्बी तालिका दी है-

"पलक्ष पनस पाढोर पुनागा। नूत निग्रोध उदंबर लागा।।
चलदल ताल तमाल विशाला। पाटल चंपक शाल प्रियाला।।
श्रीफल कपित्थ कदंब लगाए। सीसप जंबु निंब सुहाये।।

x x x

नारिकेर कदली दल शोभा। केशरनाग केवला शोभा।।

x x x

रक्तबीज निंबू सपतालू। कुत आत तेंदू जरदालू।। "[1]

केशव की रामचन्द्रिका की भाँति लालदास ने भी विविध प्रकार के वृक्षों, बल्लरियों एवं प्राकृतिक वस्तुओं की तालिका दी है । लालदास केशव की अपेक्षा अधिक रसिक प्रतीत होते हैं,फिर भी उनके प्रकृति के प्रति आत्मीय दृष्टिकोण को नहीं भुलाया जा सकता।

परिगणन शैली के अतिरिक्त लालदास ने प्रकृति का प्रयोग किया है। उदाहरण के लिए बन में प्राकृतिक उपादानों की राम की शय्या के रूप में वर्णित किया है-

"पल्लव पात बिछौना साजे। कोमल गिलम दुलीची राजे।।
तरू तमाल के मूल सुहाए। तकिया देइ बैठे सुख पाए।। "[2]

1- अवधविलास ,लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित पृ० 186

2- उपरिवत्, पृ० 392

सम्पूर्ण प्रकृति ही भगवान राम और सीता की विहार स्थली है। षड् ऋतु वर्णन और बारह मासा शैली का प्रयोग लालदास ने नहीं किया। प्रकृति के उपादानों को कवि ने उपमाविधानादि के लिए चुना है और उसके द्वारा राम-सीता की छवि का वर्णन किया है। स्वतंत्र प्रकृति -चित्रण की प्रवृत्ति कवि में नहीं पाई जाती। कवि ने प्रकृति का उपयोग आलम्बन शैली में नहीं किया है।

विविध भावों की व्यंजना-

भक्ति भाव -

महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज ने रसिक साधकों को रस रूप में ब्रह्म की साधना करने वाला बताया है।[1] डॉ० भगवती प्रसाद सिंह ने रसिक साधना पर विचार करते हुये इसे भाव की अपेक्षा रस पर बल देने वाली साधना कहा है।[2] 'अवधविलास' की सम्पादकीय भूमिका में ग्रंथ के सम्पादक डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित ने रसिक साधना पर अनुचिन्तन करते हुये इसे रहस्य साधना बताया है, तथा भाव तथा रस कोटि से ऊपर साधना के कुंडलिनी योग तथा बिन्दु के महारस के मिलन के रहस(रहस्य) को रसिक साधना की संज्ञा दी है।[3]

उपर्युक्त विचारकों की मान्यताओं को दृष्टि में रखते हुये यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रसिक साधना में रस की प्रधानता होती है। प्राय: रसिक

1- रामभक्ति में रसिक साधना, गोपीनाथ कविराज,(भूमिका)पृ०2

2- रामभक्ति में रसिक साधना, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह ,पृ० 140

3- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, प्राक्कथन,पृ०

साधना को मर्यादावादी साधना से पृथक् समझा जाता है तथा सामान्य आलोचकों की यह धारणा है कि रसिक साधना प्राय: श्रृंगारी साधना है। कविराज गोपीनाथ ने इसे भाव कोटि से ऊपर रस कोटि की साधना कह कर इसके उत्कर्ष को बढ़ाया है।

डॉ० भगवती प्रसाद सिंह ने रामभक्ति में रसिक साधना पर एक महत्वपूर्ण शोध प्रबंध का प्रणयन किया है, जिसमें इस साधना के साम्प्रदायिक रूप का विशद वर्णन किया गया है। इधर रसिक साधना के एक महत्वपूर्ण ग्रंथ 'अवधविलास' के मिल जाने तथा रसिक साधना को भाव तथा रस कोटि से भी रहस्य (लीला) कोटि की ओर ले जाने का संकेत 'अवधविलास' के सम्पादकीय कथन में दिया गया है तथा अपने कथन की पुष्टि में लालदास का एक छंद भी उद्धृत किया गया है—

" राजन्ह के घर को रहसि जानैं आप भुवाल।।
कै कोउ जानैं निकट रहि रीति भाँति गति लाल।। "[1]

डॉ० दीक्षित ने अपनी स्थापना के पक्ष में जो तर्क प्रस्तुत किये हैं, ये नवीन होने के कारण चकाचौंध ही नहीं करते, बल्कि रसिक भक्ति के इतिहास में भक्ति और योग के सूत्रों को जोड़ने का भी काम करते हैं। रसिक साधना के सम्बंध में उनके तर्क इस प्रकार हैं :-

1- रसिक साधना में जिस रस का प्रयोग हुआ है वह भाव तथा काव्य में प्रयुक्त नवरसों से भिन्न है। वह रस देह में स्थित नवद्वारों से प्राप्त होने वाला विशिष्ट रस है, जिसमें ऐन्द्रियता के साथ अतीन्द्रिय रसानुभूति होती है।

2- रसिक भक्ति की धारा में भक्त तथा योगी दोनों आते हैं। इसीलिये रसिक भक्ति से यह आशय निकालना कि यह भाव अथवा रस प्रधान धारा है, एकांगी प्रतीत होता है। इस कथन के समर्थन में डॉ० दीक्षित ने दूसरा तर्क देते हुये कहा है-

---

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 3।

"रसिक साधना अग्रदास से प्रारंभ मानी जाती है । अग्रदास भक्त तथा संत दोनों थे। संत चंददास ने स्वयं अपने को इसी रसिक धारा से सम्पृक्त किया है-

" आवत संत हमारे जबै जब ।
रसना रसिक करी रसियन सी।।
अनरस रासनिवारै जबै जब ।।"

इस प्रकार संतों द्वारा रसिक साधना की दीक्षा सिद्ध करती है कि यह साधना पद्धति योग के विपरीत नहीं है, निर्गुणपंथियों के विपरीत नहीं है।"

3- यदि रसिक साधना का सम्बंध मात्र रस धारा वाले संतों से होता तो लालदास योग आदि के आसनों का वर्णन क्यों करते। योग के विविध अंगों का वर्णन मात्र सूचनात्मक नहीं है । रसिक साधना के अंतर्गत एक अंग के रूप में है, जिसकी ओर अभी अध्येताओं का ध्यान नहीं गया ।

4- रसिक साधना एक सम्प्रदाय मात्र नहीं है, मानवीय चेतना की एक श्रेष्ठतम उपलब्धि है । साधना के क्षेत्र में रसिक भक्तों,ने जिसमें बाल्मीकि, अग्रदास, तुलसीदास, चंददास, बनादास आदि अनेकों साधक हुये हैं।,ने साधना गुरूओं से दीक्षा लेकर जिस रहस्य का साक्षात्कार किया है तथा प्रियतम की सेज विलास का सुख प्राप्त किया है, उसे रसिक साधना की संज्ञा दी है । इस साधना के अंतर्गत विविध साधना पद्धतियों का सहज समन्वय भी किया है। [1]

रसिक भक्त सामान्यतया विष्णु के उपासक होते हैं। राम और सीता इनके इष्ट हैं। अयोध्या, जनकपुरी तथा चित्रकूट उनके साधना स्थल है। आचार्य

1- अवधविलास ,लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, भूमिका,पृ०

द्वारा किसी एक भाव विशेष को लेकर साधना करने का निर्देश दिया गया है। लालदास के 'अवधविलास' से भलीभाँति प्रमाणित होता है कि ये रसिक साधना के भक्त हैं। कवि ने इस ओर संकेत करते हुये कहा है-

अ- "लाल रसिक जे होहिंगे पढ़िहैं अवधविलास।।"[1]

ब- "भक्तन्ह कहँ है भक्ति इह रसिकन्ह कौ रस रूप ।।"[2]

लालदास के 'अवधविलास' में पंचरस लीला का विवरण प्राप्त होता है, जिसका विवेचन इस प्रकार होगा-

1- माधुर्य लीला-

माधुर्य लीला दो प्रकार की बताई गई है-

1- ऐश्वर्य मिश्रित माधुर्य

2- शुद्ध माधुर्य

प्रथम के अंतर्गत अष्टयाम लीला के विविध अंगों का चित्रण पाया जाता है। अष्टयाम भावना के अंतर्गत जिन प्रमुख लीलाओं का उल्लेख कवि ने किया है उनमें राजा के रूप में, आखेटक के रूप में तथा उनके अन्य वैभव संबंधी कार्यों को लिया जा सकता है।

अ- <u>राम अखिल ब्रह्माण्ड के अधिनायक-</u>

राम के ऐश्वर्य का विराट् रूप कवि ने उन्हें सम्पूर्ण सृष्टि के अधिनायक के रूप में चित्रित करके व्यक्त किया है। उनका राज्य प्रबंध लौकिक शासकों की अपेक्षा कहीं अधिक सुव्यवस्थित, वैभवशाली एवं दिव्य गौरव से मण्डित है। कवि ने चतुर्दश विश्राम में राम के ऐश्वर्य मण्डित रूप का विस्तृत चित्रण किया है ।

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 4

2- उपरिवत्, पृ० 3

संक्षिप्त उदाहरण इस प्रकार है-

"जाको राज सकल ब्रम्हंडा। चौदह भुवन प्रथो नव षंडा।।

x x x x

हाथी द्वार बंधे दिगपाला। पानी भरहिं मेघ गन माला।।

x x x x

ब्रम्हा से दीवान हैं जाके । स्वायंभु मनु मंत्री ताके।।

x x x x

कोतवाल जमराज हैं जोरा । भैरव ताको पिअत करोरा।।

x x x x

चित्रगुप्त सब कर्मनि लिषई। मुस्तोफी भर कागद दिषहीं।।

x x x x

हैं गणेश मुंशी बुधमंता। लिषत किताब कि रहत अनंता।।"[1]

अष्टयाम भावना के अंतर्गत लालदास ने भी कहीं सीधे और कहीं प्रकारान्तर से सखी रूप में अपने आराध्य का ध्यान किया है । आराध्य के आचमन करने,पान चबाने, पैर दबाने, बिजना करने, सखियों द्वारा कलगान आदि की लीलाओं का कोमल वर्णन कवि ने किया है-

"अचवन करि करि पान चबाहीं। अब अपनें महलनि सब जाहीं।।
कोमल सेजन्ह सेहिं करौरैं। कोउ बिजना कोउ पाई पलोटैं।।
तब कोउ सषी करे कल गाना। भोजन राम के लाल बषाना।।"[2]

दासियों द्वारा पाद-प्रक्षालन किये जाने तथा अगर और चंदन से सुगंधित पीठिकाओं पर पीठासीन किये जाने का वर्णन भी साधक की दृष्टि से कवि ने किया है-

---

1- अवधविलास ,लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 313

2- उपरिवत्,पृ0 31।

" दासो गोड धोइ मुष दरसैं। कोमल वरण परसि सुष बिलसै।।

पोहा अगर चंदन के देहों । जलधारी आगें करिलेहों ।। "[1]

रसिक साधना के अंतर्गत विग्रहों के पट विशेष निश्चित है। लालदास ने भी उस परम्परा का निर्वाह किया है इन्होंने राम को पीत परिधान तथा लक्ष्मण को नीलपट में चित्रित किया है-

"रामहिं पीत बसन रुचिकारी। लक्ष्मण नील बसन तनधारी ।। "[2]

शुद्ध माधुर्य के अंतर्गत रास लीला के कोई प्रसंग नहीं मिलते, किन्तु जहां कहीं राम और सीता के रूप माधुर्य के चित्र मिलते हैं, उन प्रसंगों में माधुर्य का रूप व्यक्त हुआ है। उदाहरण के लिए निम्न प्रसंगों को माधुर्य के अंतर्गत रखा जा सकता है-

"आभा इंद्र नील मणि को है। कोमल ललित गात मन मोहै।।

x x x

लघु लघु हाथ ललित रत्नारे। पहुँची वलय मुद्रिका डारे।।

x x x

लोल विशाल रसाल सुलोचन । चितवत चितचोरत दुष मोचन।। "[3]

इसी प्रकार सीता के रूप माधुर्य का एक चित्र-

" कर पल्लव पर नष असराजे । कमल दलनि पर नग गण भ्राजे।।

सहज रंग कछु अस रहैं राते। मिंहदी देत बगन सुहाते।। "

x x x

नैन बिशाल सहज कजरारे। काजर कबहुँन देत निहारे।। "[4]

1- अवधविलास , लालदास , सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 309

2- उपरिवत्, पृ0 298

3- उपरिवत्, पृ0 275

4- उपरिवत्, पृ0 291

सख्य लीला -

सख्य लीला सखाओं के साथ होती है । राम अपने सखा मंडल के साथ तथा सीता अपनी सखियों के साथ विविध प्रकार की क्रीडाएं करती हैं । राम की सख्य लीलाओं के कुछ चित्र -

"सीतल कोमल रेतन्ह महियां । लोटत परत उठत गहि बहियां ।।
रेत बटोरि उंच करि डारें । लातन्ह दौरि उछरि तहि मारें ।।"[1]
प्रात उठि सरजू निकट सघन विटप की छांहि ।।
संग सषा रघुबंशमणि सरो करन नित जाहिं ।।"[2]

इसी प्रकार सखियों के साथ सीता की क्रीड़ाओं का एक चित्र -

"कन्या बहुत षेल संग करहीं । गौरी गौरी भौरी भौरी दौरी दौरी फिरहीं
x x x
बैठति नैन मुंदावति बाला । सषि कर लघु सिय नैंन विशाला ।।
x x x
तब रिसाई झहरावति ताही । तौ कंह कौन षिलावति आही ।।"[3]

दास्य लीला -

दास्य लीला के अंतर्गत दासों से सेवायें ली जाती है कवि ने राम के द्वारा गुल्ली दण्डा, चौगान आदि खेलों में दासों द्वारा विविध प्रकार के खेल की सामग्री आदि के प्रदान करने का उल्लेख किया है -

---

1- अवधविलास , लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 312

2- उपरिवत्, पृ० 305

3- उपरिवत्, पृ० 292

"मुली दंडा गेंद चौगाना। दास संग लिए फिरहिं खिलौना।।
कबहुँक फूल गेंद कर धारे। मार परस्पर करहिं दुलारे।।"[1]

वात्सल्य लीला-

वात्सल्य लीला के अंतर्गत राम का भाईयों सहित पिता और माता को प्रणाम करना, माता द्वारा पुत्रों को भोजन कराना ,पिता द्वारा भोजन के लिए पुत्रों को बुलाने आदिके चित्र हैं-

"नमस्कार करि पुत्र निहारा। पिता पिता तब बचन उचारा।।"[2]

पुत्र वत्सल माँ द्वारा पुत्रों को भोजन कराने का एक चित्र-

"हितसों सुत बैठति लै कोरा। भात खिवावति करति निहोरा।।
फैनी दूध कंद जुत मेवा। अपनें कर मुख देति कलेवा।।"[3]

दशरथ द्वारा पुत्रों को भोजन के लिए पुकारना-

" भोजन मात हाथ करैं जाई। नृप जेवहिं तब ल्हैहिं बुलाई।।
आवहु राम भ्रात अउ लछिमन। आवहु जेवन पुत्र शत्रुघ्न।।"[4]

वात्सल्य लीला के अंतर्गत राम को विद्याध्ययन,गुरूओं से प्राप्त ज्ञान तथा स्वत: अनुभूत ज्ञान का उल्लेख कवि ने किया है, तथा राम के विद्या प्राप्ति का स्थल भी बताया है-

---

1- अवधविलास, लालदास, सं0डाँ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 298
2- उपरिवत्, पृ0 263
3- उपरिवत,पृ0299
4- उपरिवत् पृ0 309

"विद्याध्येन क्रिर जहँ आही। विद्या कुंड नाम भयो ताही।।"[1]

x x x x

चौदह विद्या सब कहत पंडितलाल बखानि।

विद्या सोइ हरि पाइए और अविद्या जानि।।"[2]

सीता के विद्याध्ययन का विशेष उल्लेख कवि ने किया है।कवि ने सीता को व्याकरण तथा समस्त विद्याओं को ग्रहण करने में निपुण बताया है-

"जो लिखि देइ सोइ पढ़ि लेही। गुरू कहँ कहुँ अवकास न देही।।

पाठ फेरि पूछन को नाही। विद्या धरी हिए सब माहीं।।"[3]

शान्त लीला-

शान्त लीला के अंतर्गत राम तथा सीता की वे लीलाएँ आती हैं, जिनका आनन्द अवध के नागरिकों द्वारा प्राप्त किया जाता है। पुरवासी दर्शन पाकर कृतार्थ होते हैं तथा माधुर्य देख कर मुग्ध होते हैं-

"तजि तजि धाम काम प्रिय पेखन। धावति राजकुमारन्हि देखन ।।

जोइ देखै सोइ संग रहाई। तजत न बनत रूप अधिकाई।।

देखत बाल ब्याल मनभावैं। लोगन्ह जन्म सफल करि जानैं।।

x x x

जँह तहँ जाहिं तहाँ तहँ सोहैं। देखि देखि नर नारि बिमोहैं।।"[4]

1- अवधविलास ,लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 302

2- उपरिवत्, पृ० 303

3- उपरिवत्, पृ० 294

4- उपरिवत्, पृ० 298

सीता की रूप माधुरी के प्रति आसक्त होती हुई सखियों का एक चित्र-

"देखि रीझि कहैं और कुमारी। अस हम कँह करि देहु दुलारी।। "[1]

रसिक भक्ति का मूलाधार प्रीति है । यही प्रीति भगवत् भक्ति की ओर उन्मुख करती है । प्रीति की जैसी सघनता होगी, भक्त उतना ही अवलम्बन के प्रति तन्मय होता जायेगा। तन्मयता ही रस प्रदान करती है। रसिक भक्त रस की ही तो साधना करता है और रस की अनुभूति तन्मयता में होती है । संत वंददास ने तन्मयता, अखण्डता, और अडोलमन की भाव दशा की तन्मयता साधना का ही रहस्य बताया है-

"अटल अडोल अचिन्त्य मन, मगन लगन रस पाय।।

वंददास हरि भक्ति को अमल न बरनौ जाय।। "[2]

लालदास भी इस अविचल भक्ति को प्राप्त करते हैं-

"लाल ता दिन राम जूको भक्ति अबिचल पाइया।। "[2]

'अवधविलास' में कवि राम सीता के बाल्यवर्णन,उनके विवाह तथा वनवास का वर्णन करता है। वनवास से लौट कर अयोध्या आगमन के पश्चात् दम्पत्ति विलास, भोज कुंज की लीलायें , सरयू जल केलि, आभूषण और अलंकरण, आरती और रासलीलाओं का वर्णन कवि ने नहीं किया। इसके दो कारण प्रतीत होते हैं-

1- कवि मर्यादा से प्रभावित होने के कारण घोर श्रृंगारी प्रसंगों को उचित नहीं समझता तथा संत प्रवृत्ति के अनुसार उन्हीं लीलाओं को काव्य का विषय बनाता है, जो रसिकता के साथ मर्यादा की भी रक्षा करें ।

2- उपर्युक्त विलास लीलाओं के वर्णन न करने का एक कारण यह भी हो सकता है कि शनि की दशा से प्रभावित होने के कारण चित्त में विक्षेप हो या कवि जिन लीलाओं

1- अवधविलास, लालदास,सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ029।

2- उपरिवत् ,पृ0 259

का वर्णन करना चाहता था, उन्हें नहीं लिख सका, जैसा कि कवि ने संकेत किया है-

"जो शनि मोहि विक्षेप न करतो । तौ कछु बहुत बात मैं धरतो।।"[1]

रसिक साधक साकेत (अयोध्या) को साधना की दृष्टि से विशेष महत्व देते हैं। क्योंकि साकेत ही राम-सीता की नित्य क्रीड़ा स्थली है। लालदास ने भी 'अवधविलास' को पढ़ने से अवध जाने का फल बताया है, जिससे पता चलता है कि अवध (साकेत) विशेष फलदाई तीर्थ है-

"जो या अवधबिलास कौं अवधहिं जानै कोइ।
ताकौं सुनतहिं होत है अवध गये फल सोई।।"[2]

रसिकों के अनुसार वास्तव में न तो सीता का हरण हुआ था और न स्वयं ब्रह्म राम ने तुच्छ राक्षस के वध के लिए धनुषबाण ही धारण किया था। यह जगत को दिखाने के लिए एक नाटक मात्र था।"[3] लालदास भी इसी मान्यता को लेकर चलते हैं। वह भी सीता हरण और रावण वध को मान्यता नहीं प्रदान करते। उदाहरण के लिए-

"मो मत राम गये नहिं कतहूँ । और कविन्ह को कहो कहत हौं।।"[4]

तथा-

"सदा राम सीता सहित रहत हैं अवधिहिं माहिं।।
लाल लंक बन बंक महि आए गए कहुँ नाहिं।।"[5]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 280

2- उपरिवत्, पृ० 8

3- रामभक्ति में रसिक साधना, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० 282

4- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 398

5- उपरिवत्, पृ० 290

लालदास का प्रेम शारीरिक न होकर आध्यात्मिक अधिक है। उनका प्रेम भक्ति भाव का भूखा है। भावना के लोक में पहुँच कर वे लीला में प्रवेश कर जाते हैं, तथा लीला में पहुँच कर देशकाल के बन्धन को भूल जाते हैं। कभी बधाई के अवसर पर राजभवन में पहुँचते हैं और कभी राम की जेवनार में व्यंजन परोसने का काम करते हैं, तो कभी बिजना डुलाते हैं। सूर की भाँति वे भी लीला के अधिकारी हैं। कहाँ अट्ठारहवीं शताब्दी का कवि और कहाँ राम का जन्म। वस्तुत: लीला में इसप्रकार का भेद नहीं होता। लीला में अभेद भाव होता है। लालदास ऐसे ही अद्वैतभाव के रसिक साधक हैं। भक्ति की प्रगाढ़ आस्था लालदास में दिखाई पड़ती है, यहाँ तक कि वे सीधे रघुबीर की चितवन के कृपापात्र बन जाते हैं। तुलसी के राम तुलसी के ललाट पर चंदन का आलेपन करते हैं। लालदास के राम उन्हें चितवन से आत्मीय रस प्रदान करते हैं--

"गयो सीत के नीर ज्यों तन को मन को पीर।
कृपा दृष्टि कर लाल पर जब चितए रघुबीर।।"[1]

लालदास ने सखा और सखी भाव से उपासना नहीं की। प्राय: वे दासभाव के उपासक हैं, किन्तु लीला रस में प्रवेश के अवसर पर वे सखी और सहचरी भाव से अपने को प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण के लिए रामजन्म की बधाई के अवसर पर लालदास सखी रूप में स्वयं जाते हैं-

"कोइ एक नारि सयानि रही मनभावती।।
महारानि गइ सकुचि देषि तेहि आवती।।
x x x x
देहु बधाइ हमारि पुत्र तुम्हारे भयो।।
कहहु बात कुसलात कछु जान्यों सही।।"[2]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 259
2- उपरिवत्, पृ० 259

लालदास लीला में प्रवेश के अधिकारी होने के कारण स्वत: बाल लीलाओं में भाग लेते हैं तथा उन सम्पूर्ण क्रीड़ाओं का रसास्वादन करते हैं। लालदास राम की विविध लीलाओं में प्रत्यक्ष सम्मिलित होकर अपनी उच्चस्तरीय भक्ति भावना को व्यक्त करते हैं। इससे सिद्ध होता है कि रसिक साधना में वे कितने ऊँचे सोपान तक पहुँच चुके हैं-

"देखत लाल तमासे ठाढ़े। हँसि हँसि परत प्रेम अति बाढ़े।।"[1]

लालदास की भक्ति में अनन्यता, तन्मयता, साम्प्रदायिक उदारता आदि विशिष्टताएँ पाई जाती हैं। उदाहरण के लिए राम के विविध सम्बंधों से राम को पिता, माता, भ्राता, त्राता आदि रूपों में मानते हुये कवि ने अनन्य भक्ति भावना का परिचय दिया है-

"रामहि पिता राम हो भ्राता। रामहि मात राम हो त्राता।।
रामहि पित्र राम कुल देवा। भक्तन्ह कैं रामहि की सेवा।।

x x x x

केवल एक राम ही जानैं। राम बिना कछु और न मानैं।।"[2]

इसीप्रकार राम के प्रति कवि की तन्मयता का एक चित्र-

"लाल हमार राम भल राजा। मुक्ति देत बिनु ही किए काजा।।
ऐसे प्रभु तजि औरहि धावै। करै कलेस कछु नहिं आवै।।"[3]

लालदास ईश्वर की नित्यता पर बल देते हुए यह स्वीकार करते हैं कि मात्र राम ही

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 300
2- उपरिवत्, पृ0 27
3- उपरिवत्, पृ0 348

सत्य और नित्य है-

"रूप अनित यौवन अनित लाल अनित धन धाम ।।
देह अनित सुख दुख अनित नित्य एक सतराम।। "[1]

लालदास का दृष्टिकोण उदारतावादी है, इसलिए वह अपने अनन्य आराध्य राम के नाम के साथ कृष्ण का नाम भी जोड़ देते हैं यथा-'राम कृष्ण, गोबिन्द, गुपाला' यह भक्ति में किसी प्रकार का ऊँच-नीच स्वीकार नहीं करते हैं-

"ऊँच नीच अन्तर नहिं कोई । हरि कहुँ भजतहरिहि सम होई।। "[2]

तुलसी ने जीव और ईश्वर के सम्बंधों की विवेचना करते हुये 'तुम ठाकुर मैं चेरो' (विनय-पत्रिका) से दास्य भाव व्यक्त किया है। लालदास ने भी ठाकुर और सेवक के सम्बंध से दास्य भाव का प्रकाशन किया है-

"ऐसे तुम ठाकुर जगधारी । हम तो जीव गरीब विकारी।। "[3]

'ध्यान' रसिक साधना का एक अंग है। क्रीड़ा करते समय जनक नंदिनी राम की और अपनी आकृति के अनुसार गुड्डे और गुड़ियों की रचना करती है । खेल ही खेल में राम और सीता की प्रतिमाओं का यह निर्माण संत लालदास की साधना के ध्यान का अंग है-

"खेलत बहुत सखिन्ह में बाला। मनु शशि बीज गगन उजाला।।
गूड़ा गूड़ि करति जब लीला । रामाकृति स्वाकृति गुणशीला।। "[4]

अपने आराध्य राम के बालरूप का ध्यान करते हुये कवि ने उनके छोटे -छोटे हाथों में मोटे-मोटे धनुष, छोटे - छोटे हाथों में छोटी -छोटी कटारियों, तथा उनके हाथों

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 246

2- उपरिवत्, पृ0 14

3- उपरिवत्, पृ0 264

4- उपरिवत्, पृ0 291

में शोभित होने वाली तलवार का वर्णन किया है। वात्सल्य वर्णन में वे एक रस मुग्ध कवि की तरह बाल माधुरी का वर्णन करते हैं-

"छोटे-छोटे हाथनि धनुहिन मोटो। छुटि छुटि कटिन्ह कटारी छोटी।।
छोटे छोटे तीर तरकसी सोही । लघु तरवारि ललित मन मोही।।"[1]

रसिक साधना में नौका विहार तथा जल क्रीड़ा आती है।कवि ने सरयू में जिस जल क्रीड़ा का वर्णन किया है उसमें राम के साथ सीता की जल केलि नहीं वर्णित की गई । कवि ने सामान्य अथवा छिछले श्रृंगार का वर्णन नहीं किया। इस लीला में राम अपने सखाओं के साथ जल केलि करते हैं । वह बाल्य लीलाओं से सम्बंधित है-

"बालू कोट बनाइकै करि बालक संग फौज ।।
खेलत सरजू तीर में भई राम की मौज।।"[2]

लालदास वैष्णव भक्ति के अंतर्गत रसिक भक्ति के उपासक है । रसिक भक्ति लीला प्रधान होती है। वैधी न होकर रागानुगापरक होती है। भक्ति के क्षेत्र में तन्मयता,रसाग्रता, अनन्यता, सखी भावना आदि लालदास की प्रमुख विशेषताएँ है । वे ऊँचे दर्जे के भक्त कवि ठहरते हैं ।

प्रेम एवं विरह-

भक्ति श्रृंगार के प्रधान कवि होने के कारण लालदास के काव्य में प्रेम भावना का उत्कर्ष पाया जाता है । प्रेम के वृत्त पर ही रसिकों की युगल उपासना आधारित है। प्रेम काविकास प्राय: लीला-विलास के रूप में व्यक्त हुआ है। सीता और राम का प्रेम ही अवधविलास है । इस प्रेम में स्वकीयत्व की झलक है। सीता तो यहाँ तक कहती हैं कि धनुष भले ही कोई तोड़े किन्तु मेरे तो वर राम ही हैं। दाम्पत्य प्रेम का विकास सूत्र 'अवधविलास' में विद्यमान है, किन्तु उसके विकास के चित्र कम है।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 298

2- उपरिवत् ,पृ० 312

यदि कथावस्तु का फैलाव और अधिक होता तो कवि को ऐसे अवसर मिलते कि वह विविध रूपों में राम और सीता का प्रेम व्यक्त करता है । किन्तु ऐसे स्थलों की कमी नहीं है, जिनसे प्रेम भावना को रेखांकित किया गया हो ।वे प्रेम की पीड़ा को पहिचानते हैं तभी तो कहते हैं-

"का जोगी भोगी जती देव असुर नर नारि।।
जा घट बिरहा संचरै सो नहिं सकै संभारि।। "[1]

अर्थात् जिस शरीर में विरह का संचार होता है उसे संभालना कठिन है। कवि के अनुसार तीर और तलवार के घाव तो सहे जा सकते हैं पर विरह के बाण जिसके लग जाते हैं उसका जीवन कठिन हो जाता हैं-

"तीर तुपक तरवारि के घाव सहै सब कोइ।।
बिरह बान जाके लगे लाल जिये नहिं सोइ।। "[2]

कवि ने न केवल विरह की दाहकता का ही वर्णन किया है वरन् उसकी मार्मिक अनुभूतियों का भी चित्रण किया है।उदाहरण के लिए विष्णु के वियोग में लक्ष्मी के विरह का एक चित्रण देखिये-

"पीव पीव पल पल रटत नैन बहत जलधार ।।
सपनेहुँ मांहि बिरहनी जिनि सिरजै करतार।। "[3]

विरह की मर्मान्तिक पीड़ा की व्यंजना अत्यन्त कारुणिक है। 'विधाता स्वप्न में भी किसी विरहणी की रचना न करे,' कवि के इस कथन में विरह की विदग्ध व्यंजना है। इसीप्रकार एक और स्थान पर कवि ने इसीप्रकार की व्यंजना की है, जिसमें विरह की लहरों के झकोलों में पड़ी हुयी विरहणी प्रिय की आकुल प्रतीक्षा में अपलक नेत्रों से देखती रही है । आँसू की इस पीड़ा को वाणी द्वारा व्यक्त नहीं करती-

---

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 142

2- उपरिवत्, पृ० 142

3- उपरिवत्, पृ० 282

"चितवति रहति कछु नहिंबोले । विरह लहरि के परी झकोलें।।
मन में बहुत होनता आनी । छीन शरीर भयो पियरानी।। "[1]

कवि ने प्रेम को खाँडे की धार की संज्ञा दी है जिसपर चलना अत्यन्त बड़ा बिरल है-

"प्रेम पंथ खाँडे को धारा। चलत टिकत बिरला संसारा।। "[2]

प्रेम के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कवि ने इसे अगम तथा अनिर्ववनीय कहा है । सचमुच प्रेम को वाणी से व्यक्त करना कठिन है-

"कहत सुनत नाहिंन बनत लाल प्रेम की बात।।
जाके बल संसार महँ अगम सुगम होइ जात।। "[3]

रागात्मक राग की वृत्ति अत्यन्त कठिन होती है । कवि ने इसे दु:खदायी बताया है । दु:खदायी से कवि का आशय राग की कठिनता से है । किसी भी व्यक्ति के प्रति रागात्मक भाव होने से उसके प्रति एक विशेष लगाव पैदा हो जाता है जो, मिलन और विरह में कष्टदायी होता है-

"प्रीति सदा होत है दुखदाई । याको कछु औवरज नहिं पाई।। "[4]

सत्सङ्गति महिमा-

संत साहित्य में सत्सङ्गति को बहुत महत्व दिया गया है। सत्य को आराधना हो संतों का विषय रहा है । लालदास ने भी संतमहिमा और सत्सङ्गति को विशेष महत्व दिया है-

आगे मुक्त भए हैं जेते । जानहु सतसंगति हैं तेते ।।

x x x x

अबहुँ सतसंगति जे करहीं । ते भवसिंधु सहज हीं तरहीं।। "[5]

1- अवधविलास ,लालदास, सं0 डाॅ0चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 28।
2- उपरिवत् , पृ0 173
3- उपरिवत् , पृ0 70
4- उपरिवत् , पृ0 141
5- उपरिवत् ,पृ0 25

लालदास ने सत्संग को अज्ञान रूपी अन्धकार दूर करने के लिए अंजन की संज्ञा दी है-

"जेहि प्रसाद सूझै सकल जो जैसो जेहि रंग ।।
लाल तिमिर अज्ञान को अंजन है सतसंग।।"[1]

तुलसी ने इस अंजन से गुप्त के प्रकट होने का संकेत किया है ।[2] चंददास ने भी सत्संग प्रकरण में अंजन के रूपक को ग्रहण किया है।[3]

गुरू महिमा-

संत काव्य आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित होता है,जिसके लिए साधन गुरू की आवश्यकता होती है । गुरू के सम्बंध में संतभक्तों और सूफी साधकों सभी ने अनिर्वचनीय महत्ता दी है । लालदास ने दीक्षा गुरू के सम्बंध में भी प्रकाश डाला है , साथ ही गुरू महिमा के सम्बंध में भी अपने भाव प्रगट किये हैं-

"विद्या गुन साधन कछु भावै । गुरू उपदेस बिना नहिं पावै।।"[4]

1- अवधविलास ,लालदास, सं० डॉ०चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 25

2- उपरिवत् ,देखें सं० टि० पृ० 25

3- "मंजन कीजै ध्यान सर आतम होय पुनीत।
अंजन दीजै दिव्य दृग त्याग कुमारग रीति।।
त्याग कुमारग रीति प्रीति हरिपद सों लावै।
मन मकरंद सों ध्यानधान रचि गुन गन गावै।।
चंद भजन हरिनाम धाम जग ताप विभंजन।
करौ करौ सतसंग अंग अभि ज्ञानहिं मंजन।।"
चंददास पदावली ,(हस्त० चंददास शो०सं० प्रति)
उपरिवत्, सं० टि० पृ० 25

4- उपरिवत् , पृ० 327

कवि ने एक रूपक द्वारा गुरु को भक्ति जहाज के रूप में प्रस्तुत किया है-

"जोग जिहाज सरित संसारा। केवट गुरु उतारै पारा।।"[1]

आतिथ्य माहात्म्य-

'अतिथि देवो भव' के सिद्धान्त के अनुसार अतिथि शून्य गृह को लालदास ने विवर की संज्ञा दी है तथा अतिथि धर्म को महनीय बताया है-

"जंह कहुँ अतिथि न रहहि सुषमाना।
ते जनु घर है विवर समाना।।"[2]

इसीप्रकार-

"सुकृत अनेकन्ह करै बनाई । अतिथि विमुख गए सवै नसाई।।"[3]

तीर्थ माहात्म्य-

तीर्थों की महिमा पर्यटन और प्राकृतिक सौन्दर्य सभी दृष्टियों से श्रेष्ठ बताई गयी है । लालदास ने विभिन्न तीर्थों का परिभ्रमण भी किया है तथा उन तीर्थों के प्रति अपना श्रद्धा भाव भी व्यक्त किया है-

"जपै नाम तीरथ ब्रत साधैं । पित्र अतीत देव आराधैं।।
इन्द्री बस संजम करि धारै । तीरथ ताहि बहुत फल कारै।।
x x x x
तीरथ ताहि होत फल दाता । कहत लाल इह बात बिधाता।।
x x x x
इह सब मैं अपने मन जाना । तीरथ सेवत होत है ज्ञाना।।"[4]

1- अवधबिलास , लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 327
2- उपरिवत् , पृ० 376
3- उपरिवत्, 375
4- उपरिवत् , पृ० 280

विद्या- महिमा-

संतों ने प्राय: पुस्तकीय ज्ञान की उपेक्षा की है तथा पुस्तकीय ज्ञान के विकल्प में प्रेम को ही भक्ति का साधन स्वीकार किया है, किन्तु लालदास ने विद्या का भी महत्त्व वर्णित किया है। इसका कारण यह हो सकता है कि यह स्वयं विद्या प्रेमी थे। कवि के शब्दों में -

"भोर परे धन मित्र है होई। धर्म मित्र परलोक है सोई।।"[1]

विद्या के महात्म्य को वर्णित करने वाली उपर्युक्त पंक्तियों में चाणक्य नीति का प्रभाव दृष्टिगत होता है।[2]

'विद्या विहीन: पशुभि: समान:' के आदर्श को लालदास भी लेकर चले हैं-

"विद्या संग्रह करैं सयाने। बिन विद्या नर पशु करि माने।।
घट-घट घर अँधियार अभासा। विद्या दीपक करै प्रकासा।।

x x x x

विद्या जगत पूज्य पदु ताही। विद्या बड़ी बड़े तैं आही।।

x x x x

विद्या अभय औषधी धाना। चारि दान महादान बषाना।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 146

2- चाणक्य नीति, 13/17

2* "विद्या मित्रं प्रवासे च भार्या मित्रं गृहेषु च।
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च।।"

3- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 146

लालदास ने विद्या को, अभय औषधि एवं धान्य दान को महादान के रूप में मान्यता प्रदान की है। सम्वर्त स्मृति में भी इन चार दानों को महादान कहा गया है।"[1]

नारी महिमा-
==========

नारी संत काव्य में उपेक्षित रही है, साधना का अन्तराय मानी जाती रही है। इसीलिए उसे माया, ठगिनी आदि रूपों में चित्रित किया गया है। किन्तु लालदास की धारणा इससे भिन्न है। इन्होंने नारी के सम्बंध में अपने विचार इस - प्रकार व्यक्त किये हैं-

"नारी प्यारी जीय कैं न्यारी करी न जात।
नारी के न्यारे भये नारी छूटि ही जात ।।"[2]

दान महिमा-
==========

कवि ने कथा के विभिन्न अवसरों पर दान की महिमा वर्णित की है-

"दीन्हे दान गने को लेखा। कहियत कछुक देत जिन्ह देखा ।।
धेनु लक्ष दस दीन्ह भुआला। भूषन बसन सहित संग बाला।।
तिल के दीन्ह पहार बनाई। रत्न समूह हेम पट छाई।।"[3]

वात्सल्य वर्णन -
==========

भावानुभूति के क्षेत्र में वात्सल्य एक ऐसा प्रमुख भाव है, जिसकी अनुभूति भाव एवं मानवेतर जगत में होती रहती है। इस सार्वभौमिक प्रवृत्ति का निरूपण करना

1- देखें, सं0 टि0 ,अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ014
2- उपरिवत् , पृ0 139
3- उपरिवत् , पृ0 255

कवि हृदय को विवशता होती है, क्योंकि उसमें जिस रसात्मकता की पुष्टि होती है, वह वात्सल्य की वृष्टि में सहायक होता है । लालदास ने भी बालस्वभाव , बालछवि, बाल मनोविज्ञान को आधार मान कर वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति की है-

"अलबल गल बल बात कहाहीं । कछु समुझी कछु समुझि न जाहीं।।"[1]

इसीप्रकार भगवान् राम की तोतरी बोली का एक दृश्य-

"तोतरे बचन बोलि किलकाहीं । नूपरानी सुनि सुनि मन माँही।।"[2]

इसीप्रकार पुत्र के प्रति मातृ (प्रेम) (वात्सल्य) का एक दृश्य-

"बार बार मुष चुंबति मैया । मनु अमृत पीवति सुष दैया।।
हित सौं सुत बैठति लै कोरा । मात षिवावति करति निहोरा।।
x x x x
एक जौ और कौर लेहु भैया । अत बड़ अबहिं बढ़हु बलि भैया।।
x x x x
देषि देषि छवि रूप अपारा । किए न जात हिए तैं न्यारा ।।"[3]

भावानुभूति तथा विभिन्न भावों की आवेगमयी व्यंजना, भावों की चित्रमयता, भावसबलता आदि दृष्टियों से कवि की भावसम्पदा अत्यन्त समुज्ज्वल है। सौन्दर्य, श्रृंगार, प्रेम, विरह , वात्सल्य , आदि भावों की न केवल विशद व्यंजना की है, वरन् भाव के अंतर्गत अनेक उपभावों का समावेश भी किया गया है, जिससे ज्ञात होता है कि वह भावों के विदग्ध पारखी ही नहीं हैं भावों को रसत्व प्रदान करने वाले रससिद्ध कवि है ।

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 297
2- उपरिवत् , पृ० 266
3- उपरिवत् , पृ० 299

लालदास की सामाजिकता-
====================

सामाजिकता जीवन जगत तथा व्यवहार की एक ऐसी मनोदशा है,जो व्यक्ति के भीतर समाज के प्रति आस्था उत्पन्न करती है । व्यक्ति का अस्तित्व बोध उसकी अस्मिता तथा उसकी निजता अथवा उसकी अहं की मनोवृत्ति सामाजिकता के संस्पर्श से विकसित एवं परिष्कृत होती है । कवि व्यक्ति के साथ सामाजिक होता है और उसका काव्य सामाजिक रस बोध, विचार बोध को अभिव्यक्ति देने वाला है । लालदास का काव्य परिपक्व सामाजिक बोध से सम्पृक्त है ।

लालदास लोक जीवन के पारखी हैं । वे ग्राम्य जीवन तथा सामान्य जन के प्रति संवेदन शील हैं । यहाँ तक की रानियों को रसोई में पहुँचाने से भी नहीं चूकते । सीता से गोबर लीपने का काम लेते हैं, तो कौशिल्या से रसोईघर का । उन्होंने राजा और रानी को पानी भरते हुए दिखाया है । कवि के शब्दों में -

"चाहत जित यो हारति कोई । बैठत रानी कियो रसोई।।"[1]

इसीप्रकार राम के जन्म मंगल के अवसर पर बधाइयों का ताँता लग जाता है तथा लोक संस्कारों में समग्र जन जीवन आनंद की अनुभूति करता है । कामिनियों का गायन, सुहागिन का सोहरगान एवं विविध प्रकार के लोकनृत्य, सांस्कृतिक आयोजन कवि के लोकजीवन के रागात्मक सम्बंधों के सूचक हैं । ऐसे प्रसंगों में कवि की कल्पना और भावना दोनों खुल कर क्रीड़ा करती हैं । उदाहरण के लिए राम जन्म मंगल के उल्लास से सम्बंधित कुछ सांस्कृतिक बिम्ब प्रस्तुत हैं -

"सब घर मंगल बजत बधाई । तोरण वंदन माल बनाई।।

x x x x

रानी हुती अवर सब जेती । गावत भई सोहिला तेती।।

x x x x

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 24।

नगर बारो बना भारो काज डारो सब चलो ।।
एक धावति एक आवति एक गावति छबि भलो।।

x x x x

नटो पातुरि नृत्यको यौहो ज मांगि पावई।।
नचत गावत तजत लज्या हँसत पलक हँसावहो।। "[1]

सोता विवाह के प्रकरण में उबटन का लगना, नहछू आदि सांस्कृतिक रीतियों का वर्णन लालदास के महाकवि होने को सामर्थ्य को व्यक्त करता है। यथा-

"पूजि वर जनवास दोए दूलह चरण पछालिए।।
लभकौरि करि पुनि पान जुवतिन्ह पूग फल दए आलिऐ।। "[2]

लालदास का दृष्टिकोण संकीर्णतावादो न होकर उदारतावादो हैं । इसोलिये वे पुत्र व पुत्री में एक ओर जहाँ अन्तर नहीं मानते, वहीं स्त्री शिक्षा के पक्षधर भी हैं । इसोकारण वह सीता को विविध विषयों की शिक्षा दिलाते हैं । उदाहरण के लिए-

"कन्या पुत्र नहीं कछु अंतर । जो सत धर्महिं बहै निरंतर।। "[3]

"प्रथमहिं बाला व्याकरण साधनिका करै लागि।
सुमिरि सरस्वती लै घरी, लिखन लगी अनुरागि ।। "[4]

कन्या के सयाने होने पर वर की चिन्ता एक सामान्य पिता की चिंता है । अतः यह लोकचिन्ता का विषय है । लालदास ने इस महाकाव्य में सीता के सयाने होने पर जनक को वर के लिये अत्यधिक चिंतित दिखाया है-

" कन्या भई सयानी जानी । बर चिंता राजामन आनी।। "[5]

1- अवधविलास, लालदास , सं० मू० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 257-58
2- उपरिवत् , पृ० 362
3- उपरिवत् , पृ० 289
4- उपरिवत् , पृ० 293
5- उपरिवत् , पृ० 394

मांगलिक अवसरपर कन्या तथा सुहागिनों का होना मंगलप्रद माना जाता है। लालदास इसप्रकार के लोकजीवन के मांगलिक संकेतों को भी नहीं छोड़ सके-

"बिनु कन्या कछु होइ न काजा । ब्याह गौन मंगल शुभ साजा ।।"[1]

लोक व्यवहार में आने वाले आभूषणों,पट एवं परिधानों, मांगलिक कृत्यों, शुभ शकुनों धार्मिक संस्कारों, विवाह आदि को लौकिक रीतियों, पूजा आदि के मांगलिक विधानों के इतने अधिक चित्र कवि ने दिये हैं, जिससे उसकी सामाजिकता और लोक व्यवहार वादिता भलीभांति प्रमाणित होती है । उदाहरण के लिए राम की छठी व राम तथा सीता के विवाह के समय के विधिविधानों के कुछ चित्र-

1- "छठी पूजि गृह पूजि द्विजाती । कुलाचार बहु कीन्ह सुभांती।।"[2]

2- "पुनिअस्नान कराइ दुलहनि पीत बसन बनाइये।।
होइ नहछू कंकना बंध गीत मंगल गाइये।।"[3]

एक अन्य स्थान पर सीता के विवाह में पानी भरने के लिए कहारों का बुलाना, सीता के आभूषणों के लिए सुनारों को बुलाना, मिष्ठान के लिए हलवाइयों तथा दूध दही के लिए अहीरों को, तेल के लिए तेलियों आदि का बुलाना भी कवि की लोक संस्कृति तथा सामाजिक जीवन के प्रति कवि की जागरूपता को संकेतित ककरता है । उदाहरण के लिए-

"बुलाए कहारा चढ़ाए पहारा । लगाओन बारा बुलाए सुनारा।।
सराफैं सयाने जे परखै खजाने । दे सौने जराऊ लै बेगै बनाऊ।

x x x x

लीये हलवाई बनाओं मिठाई । हकारो अहीरा करो दही क्षीरा।।
कसेरे ठठेरे चलो बेगि घेरे।भरोपान चौली जे बरई तंबोली ।।
करो बेगि बारी होई पतरी तयारी । रूई बाल बनिया बुलाए जु धुनिय

x x x x

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 289
2- उपरिवत्, पृ0 260
3- उपरिवत्, पृ0 360

तेली करो तेला करो रेल पेला । जे क्वैरो कबारी करो तरकारी।।"।

इस प्रकार जनक की चिंता एक सामान्य मनुष्य की चिंता है। वे क्षणभर के लिए भूल जाते हैं कि वे किसी बड़े राष्ट्र के नरेश हैं ।शादी ब्याह के अवसर पर जन-जातियों को बुलाना और उनको विभिन्न प्रकार का कार्य देना लोकजीवन में एक पिता की चिन्ता को रूप देने वाला है । ऐसे प्रसंगों में लालदास का दृष्टिकोण लोक व्यवहार की निपुणता को लेकर चलता है ।

1- अवधविलास,लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाददीक्षित , पृ० 357-358

पंचम प्रकरण

शिल्प विधान

शिल्प विधान

वस्तु शिल्प-

वस्तु शिल्प से हमारा आशय प्रबन्ध काव्य की कथावस्तु की गठनात्मक योजना से है । जिसप्रकार किसी भवन के निर्माण के पूर्व उसके सम्बंध में उसके आकार प्रकार, प्रकोष्ठ, गवाक्ष आदि की योजना तैयार की जाती है, उसी प्रकार प्रबन्ध काव्य में कथावस्तु के गठन से संबंधित कौशल पर विचारकिया जाता है।

लालदास ने 'अवधविलास' की कथा को संगठित करने के लिए तुलसी के रामचरित मानस से भिन्न प्रकार की गठनात्मक योजना चुनी है । मानस में जहाँ काण्डों के अंतर्गत कथा संयोजित की गई है, वहीं लालदास ने इस कथा को विश्राम के अंतर्गत संयोजित किया है । इन्होंने सम्पूर्ण कथावस्तु को बीस विश्रामों में सम्बद्ध किया है ।1

कथा के गठन में एक मौलिक भिन्नता यह है कि यह कथावस्तु राम जन्म से रामनिर्वाण तक विस्तृत नहीं है । बालक राम की ललित लीलाओं को ही लेकर लिखी गई है। उदाहरण के लिए इसमें राम जन्म बधाई, नौका विहार, राम-सीता का मिलन, परिणय तथा राम-सीता के बिहार और अवध में राज्य करने की सुखात्मक स्थितियों को ही कवि ने चुना है और इसप्रकार कथा के गठन के प्रति रसिक सम्प्रदाय की आधारभूत मान्यताओं को लिया है । कथा के गठन में में एक विभिन्नता यह है कि वे विभिन्न प्रकार के पुराणों तथा भागवत आदि ग्रंथों में वर्णित कथाओं को भी रामकथा की परिधि में संयोजित करते हैं । इसप्रकार कथा--वस्तु का संगठन अत्यन्त विचित्र और विशिष्ट है।

1- कथावस्तु के गठन एवं उसकी योजना के सम्बंध में विस्तार से निरूपण महाकाव्यत्व के अंतर्गत किया जा चुका है ।

शैली शिल्प -
========

शैली से तात्पर्य कथावस्तु को व्यक्त करने की शैली या पद्धति से है। कवि ने कथावस्तु को पात्रों के मुख से कहलाया है, अथवा स्वयं कथन किया है । आकाश वाणी का प्रयोग किया है अथवा नेपथ्य से सूचना दी है, किसी प्रत्यक्ष सीधी शैली का अनुगमन किया है अथवा अपरोक्ष शैली को चुना है ।

'अवधविलास' में जिस प्रमुख शैली अथवा पद्धति को कवि ने अपनाया है, वह पूर्ववर्ती रामकथा के कवियों से भिन्न है । प्रमुख भिन्नताएं इसप्रकार है -

अ- संवाद शैली के स्थान पर प्रत्यक्ष शैली में कथन ।

ब- कोष शैली का प्रयोग ।

स- प्रसंगों के पल्लवन से कथा का विस्तार ।

प्रत्यक्ष शैली -
=========

लालदास ने परम्परित रामकथाओं की भांति संवाद शैली का प्रयोग नहीं किया । तुलसी का 'रामचरितमानस' अधिकांशतः संवाद शैली में लिखा गया है और केशव के संवाद तो अत्यन्त विशिष्ट माने जाते हैं । 'रामविनोद' में चंददास ने भी संवाद शैली को माध्यम बनाया है । इनके अतिरिक्त अन्य रामकथाओं में भी संवाद शैली का आधिक्य दृष्टिगत होता है, किन्तु लालदास ने इनसे भिन्न प्रत्यक्ष शैली का प्रयोग किया है । संवादों के कारण जो रोचकता आती है, उसकी पूर्ति कवि रसात्मक प्रसंगों के द्वारा करता है और कथा को सीधे वर्णित करता है । उदाहरण के लिए सीता उत्पत्ति की कथा कवि प्रत्यक्ष शैली में कह रहा है-

"और एक बिधि कहूं सुनाई । जा विधि सिया जनकपुर आई ।
जब उन रिषिन्ह कमंडल लीना । भरेउ रुधिर रावण कहं दीना।
रावण उठेउ कमंडल धारा । गयो जनकपुर कीन्ह बिचारा।
जो कुछ माँहि कमंडल आही । प्रगटिहै जहाँ मारि है ताही।।"[1]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 286

कोष शैली -

लालदास ने 'अमरकोष' का आधार लेकर अनेक शब्दों के पर्यायवाची दिये हैं तथा उसी प्रसंग को कथा से सम्बद्ध भी करदिया है । इसप्रकार कवि ने कोष को आधार मानकर कथावस्तु का विस्तार किया है । उदाहरण के लिए ग्रंथ से कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं -

अब सुनु अमर कोश के नामा । कहत हौं कछु एक अर्थ के बामा ।।

x x x

सूर्य सूर दिवाकर कहिऐ । आदित्य द्वादस आत्मा है ऐ ।।

अर्क कर भास्कर हंस विभाकर । भास्वत सविता तपन प्रभाकर ।।

x x x

अग्नि धनंजय अनल हुतासन । ज्वलनि वह्नि पावक जु प्रकासन।।

जातवेद हवि बाहन कहिए । वायु सखा हुत भुक पुनि हैइए।।"[1]

प्रसंगों के पल्लवन से कथा का विस्तार -

इस शैली का प्रयोग लालदास के काव्य में अधिकतर किया गया है, क्योंकि कवि ने परम्परित राम कथा की शैली को तो लिया नहीं है, अतः राम कथा से सम्बद्ध किसी भी एक प्रसंग का स्पर्श कर उसे भागवत पुराणों के अनेकानेक कथा प्रसंगों से जोड़ देते हैं । यथा सत्संग प्रसंग आया तो कवि ने सत्संग से सम्बद्ध अनेकानेक दृष्टान्तों तथा अन्तर्कथाओं से कथानक को विस्तृत किया है ।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 203-204-205

उदाहरण के लिए-

"ऐसो है नाम राम को भाई । सत संगति बिनु ताहि न पाई।।

x x x x

राजा जदु संगति जब आये । मत चौबीस दत्त समुझाये।।

x x x x

जनक विदेह कियौ सतसंगा । नव जोगेश्वर पाइ प्रसंगा।।

x x x x

व्यास पास बैठे शुकदेऊ । गर्भहिं महिं पाए जब भेऊ ।।

x x x x

जाज्ञवलि कैं समता बुधि आई । तुलाधार को संगति पाई।।

राजा सुरथ वैश्य कछु पावा । मार्कण्डेय को संगति आवा।।"[1]

अभिव्यक्ति शिल्प-
============

अभिव्यक्ति शिल्प से अभिप्राय तथ्य की अभिव्यंजना या विशुद्ध कलापक्ष से है, जिसमें भाषा, छन्द , अलंकार तथा लक्षणा व्यंजना का समावेश होता है ।

लालदास ने अभिव्यक्ति कौशल के क्षेत्र में भाषा , छन्द , अलंकार, लक्षणा, व्यंजना का समुचित प्रयोग किया है । और इस दृष्टिकोण से वे एक समर्थ कवि सिद्ध होते हैं । अभिव्यक्ति के विविध अंगों का विस्तार पृथक् किया जायेगा ।

लालदास की भाषा-
==============

महाकवि लालदास भाषा वैविध्य के कवि हैं। "अवधविलास भाषा की दृष्टि से कई मौलिक विशेषताओं से संयुक्त है । भाषा को सरलता ,सम्प्रेषणीयता, देशी शब्दों का चयन , लोक व्यवहार में प्रयुक्त होने वाली शब्दावली का संगठन कवि को भाषा को सर्जक सामर्थ्य का परिचायक है ।"[2]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 21-22-23

2- उपरिवत् , प्राक्कथन

लालदास की भाषा में जहाँ एक ओर संस्कृत निष्ठ शब्दावली का प्रयोग दृष्टिगत होता है, वहाँ भाषा में देशी, ब्रज और अवधी की झाँकियाँ परिलक्षित होती हैं। 'अवध' में निवास के कारण तथा अवधी ग्रंथों के अध्ययन के कारण कवि की भाषा में 'अवधी' के संस्कार पड़ना स्वाभाविक है तथा बाँस बोली निवास होने के कारण ब्रज का प्रभाव भी नैसर्गिक है। यही कारण है कि लालदास की अवधी तुलसी और जायसी की अवधी से भिन्न ब्रजभाषा के संस्कारों से युक्त हैं। एक ओर जहाँ तत्कालीन मुगल शासन के प्रभाव से जनजीवन में व्याप्त होने वाली अरबी और फारसी की झलकियाँ दिखाई पड़ती है, वहीं दूसरी ओर आँचलिकता के संस्कारों के कारण भोजपुरी, मराठी, राजस्थानी आदि प्रादेशिक भाषाओंके शब्द प्रयुक्त हुये हैं। कवि के भाषा-वैविध्य के अनेक कारण अन्तःसाक्ष्य द्वारा प्रमाणित हो जाते हैं। प्रथम तो कवि संत कवि है, और संतों की भाषा बेमेल खिचड़ी कही जाती है। अतः संत स्वभाव के कारण भाषा वैविध्य स्वाभाविक ही है।

कवि तीर्थाटन प्रिय रहा है। आयु का अधिकांश भाग भ्रमण और तीर्था-टन में व्यतीत हुआ ह अतः स्थान- स्थान के परिभ्रमण और निवास के कारण भाषा अनेक क्षेत्रीय भाषाओं से प्रभावित होती हुई तद्रूप ग्रहण करती गई।

भाषा बहुलता के लिए संत कवि होना एवं तीर्थाटन, ये दो तत्व ही उत्तरदायी नहीं है। वैसे भी संतकवियों में अध्ययन शीलता का अभाव होता है, पोथी आदि का खण्डन होता है। ऐसी स्थिति में भाषा की समृद्धिशीलता असम्भव है

लालदास की भाषा के सम्बंध में ये दो तत्व तो हैं ही, इसके अतिरिक्त कवि की अध्ययन शीलता भी अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य तत्व है। विद्या को कवि ने अत्यधिक महत्व दिया है। कवि के काव्य से स्वतः पुष्ट हो जाता है कि कवि ने अरबी-फारसी व संस्कृत के अनेक ग्रंथों, वेदों, उपनिषदों व धर्मशास्त्रों का अच्छा अध्ययन किया था। कवि ने स्वयं इसप्रकार का संकेत किया है-

"देसी प्राकृत संस्कृत पारसि आरबि आन।
जहँ जहँ जाकी लाल कहि भाषा सब ही जान।।"[1]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डाॅ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 7

लालदास सरल भाषा के उद्घोषक हैं क्यों कि वही काव्य जन- जीवन के लिए उपयोगी हो सकता है जो सर्वजन- संवेद्य हो और इसके लिए आवश्यक है भाषा की सरलता और सहजता । इस तथ्य से लालदास विज्ञ थे।अत: उन्होंने जयदेव के काव्य को गूढ़ काव्य, तुलसी और सूर के काव्य को बखान तथा केशव और विद्यापति को विकट कह कर इनकी तुलना में सरल काव्य की संरचना का संकल्प लिया है । कवि के शब्दों में-

"गूढ़ काव्य जयदेव कवि तुलसी सूर बखान ।
केशव विद्यापति विकट लाल सरल मनमान ।। "[1]

लालदास द्वारा हिन्दी के प्रख्यात कवि गीतगोविन्द के रचनाकार जयदेव को 'गूढ़', भक्ति काव्य धारा के शीर्षस्थ कवि तुलसी और सूर को 'बखान' तथा केशव और विद्यापति को 'विकट' कहना चिन्त्य है । 'गूढ़', 'बखान', और 'विकट' तीनों शब्द काव्यशास्त्र से सम्बंधित हैं, जो विशिष्ट प्रकार की शैलियों के लिये प्रयुक्त हुये हैं । 'गूढ़' से, गूढार्थ, 'बखान' से अर्थविस्तार और 'विकट' से सौकुमार्य का संकेत करना लालदास का अभीष्ट हो सकता है । "[2]

'अवधविलास' भाषा की अवधि है । भाषा की अवधि से कवि का आशय पूर्ण उत्कर्ष से है । कवि के अनुसार तीर्थों में अवध, अवतारों में राम तथा भाषा के क्षेत्र में 'अवधविलास' अपने सम्पूर्ण उत्कर्ष के कारण महनीय है । कवि के शब्दों में-

तीरथ औधि जो अवध है राम अवधि अवतार ।
तैसें भाषा की अवधि अवधबिलास अपार ।। "[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 6

2- उपरिवत् , पूर्वकथन

3-उपरिवत् , पृ० 8

कवि का यह कथन गर्वोक्ति परक लगता है, किन्तु ग्रंथ के अनुशीलन से यह यथार्थ प्रतीत होता है । निश्चय ही 'अवधविलास' भाषा के सीमांत बिन्दु को स्पर्श करने वाला ग्रंथ है । भाषा से कवि का आशय संस्कृत प्राकृत आदि से इतर ब्रज- अवधी आदि प्रादेशिक भाषाओं से है ।

लालदास भाषा की संकीर्णता की परिधि को नहीं मानते, उदाहरण के लिए-

"बानी तुरकी हिंदुई अनाचार आचार।

लाल प्रेम प्रिय राम कैं इह कछु नहीं बिचार।।"[1]

भाषाओं के प्रति समान अभिरूचि एवं आदर कवि की अत्यन्त विशिष्ट उपलब्धि है, साथ ही भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में समन्वयमूलक है ।"[2]

लालदास की भाषा जहाँ एक ओर हृदय-संवेद्य है, वहीं दूसरी ओर वह भाषा जनसामान्य के लिए हृदयस्पर्शी एवं मार्मिक बन पड़ी है। भाषा जहाँ एक ओर सरलीकरण के कारण अभिव्यंजना को प्रसाद गुण से युक्त करके जन- सम्प्रेषणीय बनाती है, वहीं दूसरी ओर कुछ देशज प्रधान भाषा में साहित्यिक अभिव्यक्ति की भी सामर्थ्य उत्पन्न करती है । भाषा की सरलता ने ही दार्शनिक और आध्यात्मिक प्रसंगों को भी सरल तथा सुबोध बना दिया है । भाषा की सरलता का आशय यह नहीं है कि वह किसी भी प्रकार से भाषा की स्तरीयता को बाधित करती हो अथवा साहित्यिक संस्कारों से वंचित करती हो । लालदास की भाषा में प्रयुक्त शब्द संरचना इसप्रकार है-

1- देशी 2- प्राकृत 3- संस्कृत

4- अरबी- फारसी 5- आन {अन्य}

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित , पृ० 315

2- उपरिवत् , सं० टि० पृ० 315

कवि के शब्दों में -

"देसी प्राकृत संस्कृत पारसि आरबि आन ।
जहँ जहँ जाकी लाल कहि भाषा सब हो जान ।।"[1]

देशी-

'देशी' से कवि का आशय देश में प्रयुक्त होने वाले शब्दों से है । देश से आशय प्रदेश विशेष से है । मौनियर विलियम्स के अनुसार- देशी का अर्थ देहाती व्यवहार या बोलचाल की रीति से है । डॉ० बाबूराम सक्सेना द्वारा प्रतिपादित देशी नामक शब्द वर्ग है, जिसका प्रयोग उन्होंने देश से ही आये विभिन्न वर्ग की भाषाओं के लिये किया है ।[2] डॉ० उदयनारायण तिवारी ने भी हिन्दी के शब्द समूह के वर्गीकरण में देशी को स्थान दिया है ।[3] डॉ० भोला नाथ तिवारी ने 'देशज' शब्दों के विषय में अपना मौलिक मत व्यक्त करते हुये कहा है" मेरे विचार में इन्हें अज्ञात व्युत्पत्तिक कहा जाना चाहिए - - - - - वस्तुत: देशज शब्द उन्हीं को कहते हैं जिनकी व्युत्पत्ति का पता नहीं चलता। अत: अत: अज्ञात व्युत्पत्तिक नाम ही अधिक उचित है - - - - - - उनमें से कुछ देशी हो सकते हैं, कुछ विदेशी और तद्भव भी हो सकते हैं ।"[4] डा० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या ने भी आधुनिक आर्य भाषा के शब्द समूहों को चार भागों में विभाजित किया है, जिसमें देशी का अस्तित्व स्वीकार किया है।[5] 'अवधविलास' में संस्कृत, प्राकृत तथा अन्य भाषाओं की अपेक्षा देशी भाषा का प्रयोग अधिक किया गया है । देशी शब्दों के अन्तर्गत संज्ञाएँ, विशेषण

1- अवधविलास, लालदास , सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 7

2- सामान्य भाषा विज्ञान, डॉ० बाबूराम सक्सेना, पृ० 172

3- हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, डॉ० उदयनारायण तिवारी, पृ० 209-1

4- हिन्दी भाषा , डॉ० भोलानाथ तिवारी , खण्ड 2, पृ० 273-74

5- ओरीजन एण्ड डेवलपमेंट आफ बैंगाली लेंग्वेज, डॉ० सुनीति चाटुर्ज्या, पृ० 189

और क्रियाएँ आदि सभी प्रकार के प्रयोग पाये जाते हैं । उदाहरण के लिए कुछ शब्द द्रष्टव्य हैं-

अटपट,[1] नगारा,[2] व्यावरि,[3] पातुरि,[4] सलगाना,[5] दररानै,[6] नैहर,[7] मिहरो,[8] मरद,[9] बरयारै,[10] झपटै,[11] भभरानै,[12] ठकोरा,[13] भटकैं,[14] अररानै,[15] छहरानै,[16] ठरकावा,[17] बाँझो,[18] बोसत,[19] थेइ-थेइ,[20]

प्राकृत-

कवि ने 'अवधविलास' में गूढ़ा, गाहा, सोरठा से गाहा का संकेत किया है । यह प्राकृत का ही छंद है । गाथा शब्द का प्रयोग भी अनेक स्थानों पर किया गया है । 'गाथा' से कवि का आशय प्राकृत की पूरा कथाओं से ही है । भाषा के सम्बंध में विचार करते हुये कवि ने प्राकृत का भी उल्लेख किया है। 'अवधविलास'

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ०
2- उपरिवत् , पृ० 172
3- उपरिवत् , पृ० 11
4- उपरिवत् , पृ० 49
5- उपरिवत् , पृ० 42
6- उपरिवत् , पृ० 71
7- उपरिवत् , पृ० 32
8- उपरिवत् , पृ० 90
9- उपरिवत् , पृ० 90
10- उपरिवत् , पृ० 113
11- उपरिवत् , पृ० 133
12- उपरिवत् , पृ० 133
13- उपरिवत् , पृ० 141
14- उपरिवत् , पृ० 130
15- उपरिवत् , पृ० 133
16- उपरिवत् , पृ० 133
17- उपरिवत् , पृ० 61
18- उपरिवत् , पृ० 117
19- उपरिवत् , पृ० 125
20- उपरिवत् , पृ० 266

में प्राकृत के भी शब्द मिलते हैं। कतिपय शब्द दृष्टव्य हैं-

गाथा,[1] नाहा,[2] राह,[3] सब,[4] हत्था,[5] सत्था,[6] संहट्ठी,[7] कोइल,[8]

संस्कृत-

लालदास की भाषा में संस्कृत भाषा का गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। कवि ने केवल संस्कृत शब्दों का ही प्रयोग नहीं किया, प्रत्युत पद एवं वाक्यांशों के रूप में भी संस्कृत भाषा के दर्शन होते हैं। इसके अतिरिक्त अमर कोष ग्रंथ के अनुसार असंख्य शब्दों के संस्कृत पर्यायवाची रूपों को प्रस्तुत किया है। इन्होंने अपने काव्य के लिये संस्कृत की अनिवार्यता स्वीकार करते हुये उसे ही भाषा के रूप में स्वीकृति प्रदान की है। कवि के शब्दों में -

"सुद्ध प्रगट लौकिक बचन सुनि समुझै सब कोइ।
कठिन काव्य चहि संस्कृत भाषा कहिर सोइ ।।"[9]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 15

2- उपरिवत्, पृ० 134

3- उपरिवत्, पृ० 8

4- उपरिवत्, पृ० 9

5- उपरिवत्, पृ० 305

6- उपरिवत्, पृ० 305

7- उपरिवत्, पृ० 306

8- उपरिवत्, पृ० 308

9- उपरिवत्, पृ० 6

उक्त दोहे में यह प्रमाणित होता है कि लालदास ने अपनी भाषा में शुद्धता , प्रगट तथा लौकिकता तथा सरलता का आदर्श व्यक्त किया है । अवधविलास में पाये जाने वाले शब्दों को सूची इस प्रकार है -

श्वान[1] प्रसुता[2] क्षान्ति[3] सुकृत[4] अभ्यन्तर[5] मनाषा[6] वृद्धि[7] गुणवंत[8] अनुधावत[9] आच्छादन[10] पारषद[11] विराग[12] मतिमंद[13] पंगु[14] बोधिका[15] तन्दुल[16] सुभवते[17] सात्त्विक[18] इन्द्रजित[19] अपठित,[20] श्वेतवसनधर[21] आदि ।

अवधविलास का षोडश विश्राम तो संस्कृत शब्दों एवं उनके हिन्दी अर्थों से परिपूर्ण है । उदाहरण के लिए देखें -

"उठ उत्तिष्ट जाहु गम्यताना । गंतव्य जाव जगो गये ना ।।

x x x

कहे को किमर्थ कहयोई । क्वचित कहूं इक किंचित कोई ।।

x x x

उन्नत ऊंच निम्न कहि नीचे । टेढ़े वक्र निलोचन सोंचे ।।

भग्न पलाय न तिष्ठन ठाढ़ा । छिन्न मटव कहि वर्छित बाढ़ा ।।[22]"

1- अवध विलास ,लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० ।।
2- उपरिवत्, पृ० 255
3- उपरिवत्, पृ० 31
4- उपरिवत्, पृ० 173
5- उपरिवत्, पृ० 334
6- उपरिवत्, पृ० 209
7- उपरिवत्, पृ० 334
8- उपरिवत्० पृ० 3
9- उपरिवत्, पृ० 15
10 उपरिवत्, पृ० 337
11- उपरिवत्, पृ० 9
12- उपरिवत्, पृ० 145
13- उपरिवत्, पृ० 331
14- उपरिवत्० पृ० 1
15- उपरिवत्, पृ० 335
16- उपरिवत्,पृ० 331
17- उपरिवत्,पृ० 139
18- उपरिवत्,पृ० 331
19- उपरिवत्,पृ० 79
20- उपरिवत्, पृ० 8
21- उपरिवत्, पृ० 1
22- उपरिवत्, पृ० 334

लालदास का संस्कृत भाषा के लगाव का प्रतिफल हो है कि उन्होंने अमरकोष के आधार पर एक शब्द के अनेक पर्यायवाची शब्दों की माला पिरो दी है-

"बिधु हिमकर हिम रोचि निशापति । औषधीश सुधांशि नक्षत्र पति।।
सोम सुधाकर गलौ बखाना । आद्यक अब्जौं नो कै जाना।।"[1]

इसप्रकार लालदास के काव्य में अनेक संस्कृत ग्रंथों ,पुराणों, वेद-वेदाङ्गों, के प्रभाव एवं अध्ययन के परिणाम स्वरूप संस्कृत भाषा का प्राबल्य दृष्टिगत होता है । संस्कृत अनुवाद प्रकरण के अंतर्गत प्राय: प्रचलित सर्वनाम, संज्ञा, विशेषण, क्रिया आदि पदों का प्रयोग किया है और इन प्रयोगों से भोजा विश्राम आपूर्ण है ।

तद्भव-

संस्कृत शब्दों के अतिरिक्त लालदास ने तद्भव ,संस्कृत विकृत शब्दों काप्रयोग भी किया है। यथा-

आधर,[2] गनिका,[3] पोतम,[4] किपनि,[5] संजोग,[6] लावनि,[7] प्रफुलो,[8] आकर्षन,[9] स्तुती,[10] पतिवरता,[11] गुन,[12] उत्पति,[13] लक्षन,[14] परकमा,[15]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 207
2- उपरिवत् , पृ० 177
3- उपरिवत,पृ० 171
4- उपरिवत्, पृ० 173
5- उपरिवत् ,पृ० 177
6- उपरिवत्, पृ० 176
7- उपरिवत्, पृ० 177
8- उपरिवत् , पृ० 184
9- उपरिवत् , पृ० 145
10- उपरिवत्, पृ० 143
11- उपरिवत्, पृ० 152
12- उपरिवत्, पृ० 160
13- उपरिवत् , पृ० 67
14- उपरिवत्, पृ० 67
15- उपरिवत्, पृ० 145

अरबी- फारसी-

लालदास के 'अवधविलास' में अरबी -फारसी के शब्दों के पाये जाने का एक प्रमुख कारण तत्कालीन शासन में अरबी- फारसी का प्रचलन तथा जनजीवन में उसकी व्याप्ति रही है। अरबी- फारसी के कुछ शब्द-

खाक,[1] तसलीम,[2] हकीकति,[3] खबास,[4] करजदार,[5] जहाज,[6] अदब,[7] हजूर,[8] हुकम,[9] मुहाहिब,[10] खालसे,[11] अरज[12] खलासी,[13] आदि।

आन -

आन से कवि का आशय उन अन्य भाषाओं से है जो, संस्कृत, प्राकृत, अरबी और फारसी तथा देशी से इतर है। संभवत: आन से कवि का आशय अवधी, ब्रज, रास्थानी, भोजपुरी, पंजाबी, बुन्देली आदि भाषाओं से है। उदाहरण के लिए

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 97
2- उपरिवत्, पृ० 176
3- उपरिवत् , पृ० 142
4- उपरिवत्, पृ० 307
5- उपरिवत्, पृ० 33
6- उपरिवत्, पृ० 8-9
7- उपरिवत्, पृ० 98
8- उपरिवत्, पृ० 98
9- उपरिवत्,पृ० 314
10- उपरिवत्, पृ० 314
11- उपरिवत्, पृ० 314
12- उपरिवत्, पृ० 314
13- उपरिवत्,पृ० 283

ब्रज-

किधौं,[1] दौरि,[2] नेकु,[3] कछु,[4] रोरि,[5] ठौर,[6] मेरो,[7] तेरो,[8] काको,[9] आदि ।

अवधी-

अहिवात,[10] निहारै,[11] जे,[12] केउ,[13] छिड़ावै,[14] मोहि[15] आदि ।

भोजपुरी-

पाइया,[16] गाइया,[17] परायल,[18] काकर,[19] डीह,[20] पियँरे,[21] अँगनाई,[22] आदि ।

लालदास की भाषा संरचना का निदर्शन इस प्रकार किया जा सकता है-

संज्ञा-

लालदास ने अपने काव्य में अकारान्त,इकारान्त ,उकारान्त, ओकारान्त,आदि संज्ञा पदों का प्रयोग किया है -

---

1- अवधविलास, लालदास सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ0 23
2- उपरिवत्, पृ0 23
3- उपरिवत्, पृ0 96
4- उपरिवत्,पृ0 96
5- उपरिवत्, पृ0 95
6- उपरिवत्, पृ0 61
7- उपरिवत्, पृ0 107
8- उपरिवत्, पृ0 107
9- उपरिवत्, पृ0 178
10- उपरिवत्, पृ0 135
11- उपरिवत्, पृ0 276
12- उपरिवत्, पृ0 1
13- उपरिवत्, पृ0 94
14- उपरिवत्, पृ0 94
15- उपरिवत्, पृ0 107
16- उपरिवत्, पृ0 101
17- उपरिवत्, पृ0 101
18- उपरिवत्, पृ0 134
19- उपरिवत्, पृ0 137
20- उपरिवत्, पृ0 137
21- उपरिवत्,पृ0 307
22- उपरिवत्, पृ0 261

अकारान्त-

विप्र,[1] युद्ध,[2] राम,[3] ग्रन्थ,[4] पारषद,[5] भक्त,[6] आदि।

आकारान्त-

हिंडोला,[7] दिगपाला,[8] रघुराजा,[9] भगवंता,[10]

इकारान्त-

हरि,[11] प्रजापति,[12] महि,[13] सृष्टि,[14] रवि,[15]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 30
2- उपरिवत्, पृ० 31
3- उपरिवत्, पृ० 5
4- उपरिवत्, पृ० 5
5- उपरिवत्, पृ० 9
6- उपरिवत्, पृ० 9
7- उपरिवत्, पृ० 55
8- उपरिवत्, पृ० 123
9- उपरिवत्, पृ० 156
10- उपरिवत्, पृ० 101
11- उपरिवत् , पृ० 115
12- उपरिवत्, पृ० 112
13- उपरिवत्, पृ० 100
14- उपरिवत्, पृ० 101
15- उपरिवत्, पृ० 127

ईकारान्त-

त्रिपुरारी,[1] शृंगी,[2] क्रोधी,[3] जोगी,[4] आदि

उकारान्त-

गुरू,[5] भृगु,[6] साधु,[7] शिशु,[8] आदि

ऊकारान्त-

भानू,[9] स्वायम्भू,[10] भोंदू[11] आदि

स्त्रीलिंग अकारान्त के शब्दों का प्रयोग लालदास की भाषा में उपलब्ध नहीं होता।

आकारान्त (स्त्रीलिंग)-

विद्या,[12] माया,[13] कन्या,[14] क्रिया,[15] सिया,[16] महामाया,[17] आदि।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 101
2- उपरिवत्, पृ० 229
3- उपरिवत्, पृ०118
4- उपरिवत्, पृ० 177
5- उपरिवत्, पृ० 147
6- उपरिवत्, पृ० 265
7- उपरिवत्, पृ० 72
8- उपरिवत्, पृ० 339
9- उपरिवत्, पृ० 276
10- उपरिवत्, पृ० 145
11- उपरिवत्, पृ० 107
12- उपरिवत्, पृ० 100
13- उपरिवत्, पृ० 96
14- उपरिवत्, पृ० 87
15- उपरिवत्, पृ० 215
16- उपरिवत्, पृ० 286
17- उपरिवत्, पृ० 112

इकारान्त-(स्त्रीलिंग)

वंशालिनि,[1] भक्ति,[2] बुद्धि,[3]

नारि,[4] कुंवारि[5] नाउनि,[6]

ईकारान्त (स्त्रीलिंग)

इन्द्रानी,[7] नृत्यकी,[8] नटी,[9] कामिनी,[10]

तल्नी,[11] कैकेई,[12] लुगाई,[13]

लालदास ने जाति वाचक, व्यक्तिवाचक एवं भाववाचक तीनों ही प्रकार के संज्ञा पदों का प्रयोग किया है।

जातिवाचक-

सर्प,[14] पक्षी,[15] तपस्वी,[16] सेवक,[17] आदि

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 287
2- उपरिवत्, पृ० 327
3- उपरिवत्, पृ० 209
4- उपरिवत्, पृ० 326
5- उपरिवत्, पृ० 295
6- उपरिवत्, पृ० 223
7- उपरिवत्, पृ० 282
8- उपरिवत्, पृ० 258
9- उपरिवत्, पृ० 258
10- उपरिवत्, पृ० 258
11- उपरिवत्, पृ० 177
12- उपरिवत्, पृ० 230
13- उपरिवत्, पृ० 299
14- उपरिवत्, पृ० 287
15- उपरिवत्, पृ० 247
16- उपरिवत्, पृ० 286
17- उपरिवत्, पृ० 150

व्यक्तिवाचक -

शंकर,[1] पार्वती,[2] बसन्त[3] नारद,[4] बावन,[5] आदि।

भाववाचक-

लरिकाई,[6] रुचिराई,[7] मिठाई,[8] आदि

सर्वनाम-

लालदास के काव्य में प्रयुक्त सर्वनामों का विवरण निम्न तालिका के अनुसार है-

व्यक्ति वाचक सर्वनाम-

मम- "मम निंदा सहि सकै न केही ।"[9]

मोहि- "आयो लरन और मोहिं जानो।
तेरौं हाड़ करौं महिमानो ।।[10]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 232
2- उपरिवत्, पृ० 212
3- उपरिवत्, पृ० 145
4- उपरिवत्, पृ० 144
5- उपरिवत् , पृ० 12
6- उपरिवत्, पृ० 271
7- उपरिवत्, पृ० 177
8- उपरिवत्, पृ० 192
9- उपरिवत्, पृ० 97
10- उपरिवत्, पृ० 107

तैं- "मारे हैं तैं जाति हमारो ।"[1]

तेरो- मेरो- "तोपर गुस्सा बहुत है मेरो ।
लैहों आजु मारि जिय तेरो।।"[2]

तुम- "तुम ईश्वर सब सो सम चाहो।"[3]

मैं- "मैं दरबार रहब रखवाला।"[4]

तुम्हारे- हमारे-"ब्रह्म रुद्र हैं गर्भ तुम्हारे।
सो काहे के पुत्र हमारे।।"[5]

तासु- "लक्षिमन नाम तासु को भाषे।"[6]

हमारो- "पूजा होत है बहुत हमारो।"[7]

हमहो- "हमहो से जहँ मुनि बहु बृंदा।"[8]

ताहि- "प्रणऊँ ताहि जगत जिन्ह जाया।"[9]

तेरे- "खान-पान के साझी तेरे।"[10]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 107
2- उपरिवत्, पृ० 107
3- उपरिवत्, पृ० 139
4- उपरिवत्, पृ० 273
5- उपरिवत्, पृ० 263
6- उपरिवत्, पृ० 262
7- उपरिवत्, पृ० 181
8- उपरिवत्, पृ० 181
9- उपरिवत्, पृ० 9
10- उपरिवत्, पृ० 23

प्रश्नवाचक सर्वनाम-

केउ - "केउ नाचत केउ गाल बजावत।
केउ घूमत केउ कांदत आवत।।"[1]

केइ- "केइ धोरेन्ह के लालन्ह मारे।"[2]

किन- "आवहु देखि लेहु किन अबहीं।"[3]

कौन- "कौन काव्य धौं पढ़े सयाने।"[4]

काको- "मरन भलो जो होइ कहु काको।।"[5]

कवन- "हमको तोहि कवन पहिचानी।"[6]

का- "का भोगी जोगी जती देव असुर नर नारि।"[7]

केई- जौ कछु देत भक्त कहँ केई।"[8]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 133
2- उपरिवत्, पृ० 133
3- उपरिवत्, पृ० 395
4- उपरिवत्, पृ० 180
5- उपरिवत्, पृ० 385
6- उपरिवत्, पृ० 386
7- उपरिवत्, पृ० 142
8- उपरिवत्, पृ० 97

अनिश्चय वाचक सर्वनाम-

कोउ- "विद्यावंत रहे कोउ तैसे।"[1]

किधौं- "तिन्हमहि तुम साजो किधौं नाही।"[2]

काहूं- "काहूं जाइ भूख जब लागै।"[3]

कहुं- "जौ कहुं चूक मोहि कछु पारी।"[4]

संकेत वाचक सर्वनाम-

तिनहिं - "श्वान समान तिनहिं करि जानो।"[5]

तिन्ह- "तिन्ह सौं विनय करौं कर जोरी।"[6]

ताहि - "बंदौ ताहि भक्ति विस्तारो।"[7]

ते- "दुस्मन बड़े हमार भए ते।"[8]

इह- "मारे विष्नु सबहिन्ह इह जानी।"[9]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 260
2- उपरिवत्, पृ० 23
3- उपरिवत्, पृ० 133
4- उपरिवत्, पृ० 10
5- उपरिवत्, पृ० 11
6- उपरिवत्, पृ० 10
7- उपरिवत्, पृ० 9
8- उपरिवत्, पृ० 85
9- उपरिवत्, पृ० 219

निजवाचक सर्वनाम-

आपु- "आश्रम आपु करै नहिं अंगा।"[1]

आप-आपुहिं- "तरजमर आपुहिं अहै भष भेदक सब आप।"[2]

आपही- "आपहीं पुरुष आपहीं नारी।"[3]

अपनों- "अपनों द्वारपाल ताहि कीना।"[4]

आपनी - "कही बात सब आपनी लै लै ऊँच उस्वांस।"[5]

अपने- "अपने- अपने देस को बानो।"[6]

सम्बंध वाचक सर्वनाम-

जे- "श्रवण सुनत जे क्रोध न करई।"[7]

सोइ- "जालंधर सोइ बंध कहावै।"[8]

ताको- "ताको नाम राम अस होई।"[9]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 219
2- उपरिवत्, पृ० 107
3- उपरिवत्, पृ० 141
4- उपरिवत्, पृ० 132
5- उपरिवत्, पृ० 132
6- उपरिवत्, पृ० 121
7- उपरिवत्, पृ० 131
8- उपरिवत्, पृ० 326
9- उपरिवत्, पृ० 261

जिन्ह- "जिन्ह वरनोदक सोस चढ़ाए।"[1]

जाके- "जाके दरस होइ तप भंगा।"[2]

ताके- "ताके हिय मँह होइ है सुनत है सोताराम।"[3]

सर्वनाम के सर्वेक्षण से पता चलता है कि कवि ने विभिन्न भाषाओं के सर्वनामों को काव्य में प्रयुक्त किया है। कवि ने पहले ही इस बात का संकेत किया है कि "जहँ जँह जाको लाल कहि, भाषा सबही जान।"[4] इस कसौटी पर लालदास खरे उतरते हैं। उदाहरण के लिए जहाँ उन्होंने संस्कृत के मम, तासु, मया, ते आदि शब्दों का प्रयोग किया है, वहीं दूसरी ओर ब्रज के तेरो, मेरो, काको, ताहि आदि शब्दों का, एक ओर अवधी के केउ, मोहि आदि तो दूसरी ओर खड़ी बोली के तुम, मैं, तुम्हारे, हमारे, तेरे आदि शब्द प्रयुक्त किये हैं।

क्रियाएँ-

लालदास ने अपने काव्य में वर्तमान, भूत एवं भविष्यत् तीनों ही काल की क्रियाओं का प्रयोग किया है। वर्तमान काल का बोध कराने के लिए लालदास ने क्रिया को धातुओं में औ, ई, ऐ, ए, आ, अ, इ, आदि प्रत्यय जोड़े है। जैसे-

बंदौ,[5] अररानी,[6] बखाने,[7]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 26
2- उपरिवत्, पृ० 129
3- उपरिवत्, पृ० 5
4- उपरिवत्, पृ० 7
5- उपरिवत्, पृ० 1
6- उपरिवत्, पृ० 11
7- उपरिवत्, पृ० 11

ठाने,[1] अनुरागत,[2] विचारे,[3] सुहावा[4]

रिझावति,[5] गुहिरावे,[6] बिरावहि,[7] आदि।

इसीप्रकार भूतकाल का प्रयोग करने के लिए लालदास ने धातुओं में उ, आ, ए, ई, ओ, अ, आदि प्रत्ययों का प्रयोग किया है। जैसे-

अटकेउ,[8] पुकारा,[9] बनावा,[10]

बखाना,[11] धाए,[12] गाए,[13] पाए,[14]

उपजाई,[15] गमाई,[16] बस्यो,[17] पायो,[18]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 11

2- उपरिवत्, पृ० 16

3- उपरिवत्, पृ० 17

4- उपरिवत्, पृ० 57

5- उपरिवत्, पृ० 177

6- उपरिवत्, पृ० 108

7- उपरिवत्, पृ० 308

8- उपरिवत्, पृ० 106

9- उपरिवत, पृ० 101

10- उपरिवत्, पृ० 100

11- उपरिवत्, पृ० 16

12- उपरिवत्, पृ० 108

13- उपरिवत्, पृ० 197

14- उपरिवत्, पृ० 197

15- उपरिवत्, पृ० 109

16- उपरिवत्, पृ० 109

17- उपरिवत्, पृ० 151

18- उपरिवत्, पृ० 116

कनकनान,[1] हासा,[2] दौरा,[3] उधिराना,[4] आदि

वर्तमान और भूत के अतिरिक्त भविष्यकाल का बोध कराने के लिए ऐ, ए, औ, आ, अ, आदि प्रत्ययों का सर्वाधिक उपयोग किया गया है । जैसे-

देखिहैं,[5] होहिगे,[6] छलिहौं,[7]

कोन्हे,[8] दुलराइब,[9] जारब,[10]

करवाइब,[11] आदि।

'अवधविलास' में कुछ स्थानों पर ध्वन्यात्मक क्रियाओं का प्रयोग भी देखने को मिलता है । जैसे-

लटकैं,[12] झटकैं,[13] पटकैं[14]

उझकैं,[15] उलटैं[16] आदि।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 131

2- उपरिवत्, पृ० 179

3- उपरिवत्, पृ० 108

4- उपरिवत्, पृ० 106

5- उपरिवत्, पृ० 2

6- उपरिवत्, पृ० 4

7- उपरिवत्, पृ० 136

8- उपरिवत्, पृ० 255

9- उपरिवत्, पृ० 273

10- उपरिवत्, पृ० 153

11- उपरिवत्, पृ० 153

12- उपरिवत्, पृ० 306

13- उपरिवत्, पृ० 306

14- उपरिवत्, पृ० 306

15- उपरिवत्, पृ० 306

16- उपरिवत्, पृ० 306

कारक-

कारक संज्ञा का वह रूप होता है, जो वाक्य में किसी अन्य पद से अपना सम्बंध प्रकाशित करता है । लालदास के काव्य में कारकों का स्वरूप इसप्रकार है-

विभक्ति का नाम	परसर्ग
प्रथमा-	ने

1- हौं अबला हौं रहति अकेली।[1]

2- ऐसो जिन्हहिं प्रिये हौं लागौं ।[2]

द्वितीया-	को

1- ताकहं कल्प कहत हैं ज्ञानी।[3]

2- कछु सराहि कहै कोउ ताही।[4]

3- कोउ काहू को बात सुनि लगै सराहन ताहि।[5]

4- जिन्ह के हिये राम विश्रामा । तिन्ह कौं करत हैं लाल प्रनामा।[6]

5- बहुत बेर मैं तोहिं बिसारा।[7]

1- अवधविलास, लालदास , सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 135

2- उपरिवत्, पृ० 99

3- उपरिवत्, पृ० 64

4- उपरिवत्, पृ० 98

5- उपरिवत्, पृ० 3

6- उपरिवत्, पृ० 10

7- उपरिवत्, पृ० 246

विभक्ति का नाम -	परसर्ग
तृतीया-	से
1- तब शिवनाथ जोगि कैं देषा। *1	
2- संगति ही सों होत है लाल धर्म मन पाप। *2	
3- मन तैं होइ जाइ बन माहीं। *3	
चतुर्थी-	को, के, लिए
1- सब कहँ दुष दाता जो आही। *4	
2- भक्तन्ह कहँ है भक्ति इह रसिकन्ह कौं रस रूप। *5	
3- अस कहि कहि मो कहँ जस देही। *6	
पंचमी-	से
1- विष्नु नाभि तैं कमल निकासा। *7	
2- साधु रहैं सुष दुष सों न्यारा। *8	

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 133
2- उपरिवत्, पृ0 185
3- उपरिवत्, पृ0 29
4- उपरिवत्, पृ0 244
5- उपरिवत्, पृ0 3
6- उपरिवत्, पृ0 97
7- उपरिवत्, पृ0 115
8- उपरिवत्, पृ0 28

विभक्ति का नाम-	परसर्ग
षष्ठी-	का,की,के,

1-साधु संग जिनके नित दीक्षा।[1]

2- जाके दरस होई तप भङ्गा।[2]

3- मेरे जन्म कर्म आराधहिं।[3]

4- भक्त भक्त कैं आवै धामा।[4]

5- हारि जीति काकर कस होई।[5]

6- भक्त भक्त को काज सुधारे।[6]

सप्तमी-	मैं, पर,

1- जामैं रामनाम की बानी।[7]

2- जीव तत्व सब लीन्ह भवानी। आदि विष्नु महि जार समानी।[8]

3- जापर कृपा करउ ताहि देउ दुख।[9]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 245
2- उपरिवत्, पृ० 129
3- उपरिवत्, पृ० 89
4- उपरिवत्, पृ० 27
5- उपरिवत्, पृ० 137
6- उपरिवत्, पृ० 27
7- उपरिवत्, पृ० 27
8- उपरिवत्, पृ० 115
9- उपरिवत्, पृ० 99

लिंग

जहाँ तक लिंग प्रयोग का सम्बंध है, लालदास की भाषा में लिंग का वर्गीकरण अर्थानुकूल है । कवि ने पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने में मुख्यत: इनि प्रत्यय का प्रयोग किया है।

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
1-	दुलहा	दुलहनि [1]
2-	ठाकुर	ठकुराइनि [2]
3-	ब्राम्हण	ब्राम्हनि [3]
4-	भाट	भाटिनि [4]
5-	चंडाल	चंडालिनि [5]
6-	नाऊ	नाउनि [6]
7-	बारी	बारिनि [7]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 179
2- उपरिवत्, पृ० 149
3- उपरिवत्, पृ० 261
4- उपरिवत्, पृ० 261
5- उपरिवत्, पृ० 287
6- उपरिवत्, पृ० 263
7- उपरिवत्, पृ० 223

वचन

लालदास ने अपने महाकाव्य में अधिकांशत: एक वचन और बहुवचन का प्रयोग किया है । एक वचन से बहुवचन बनाने के लिए अन, अन्ह, आदि प्रत्ययों का उपयोग किया है। यथा-

एक वचन	बहु वचन
त्रिय	त्रियन [1]
बिटिया	बिटियन [2]
लरिका	लरिकन [3]
मनुष्य	मनुष्यन [4]
नदी	नदियन [5]
भक्त	भक्तन्ह [6]
पुहप	पुहपन्ह [7]
रिषि	रिषिन्ह [8]
पाय	पायन्ह [9]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 178
2- उपरिवत्, पृ० 293
3- उपरिवत्, पृ० 299
4- उपरिवत्, पृ० 265
5- उपरिवत्, पृ० 265
6- उपरिवत्, पृ० 3
7- उपरिवत्, पृ० 102
8- उपरिवत्, पृ० 190
9- उपरिवत्, पृ० 190

एक वचन	बहु वचन
देव	देवन्ह[1]
बिटिया	बिटियन्ह[2]
भैया	भैयन्ह[3]
लरिका	लरिकन्ह[4]
ग्रंथ	ग्रन्थन्ह[5]
मुनि	मुनिन्ह[6]
ज्ञानी	ज्ञानिन्ह[7]
भूत	भूतन्ह[8]
रानी	रानिन्ह[9] आदि

ध्वनि सम्बंधी परिवर्तन

लालदास के काव्य में ध्वनि सम्बंधी परिवर्तन के कुछ उदाहरण इसप्रकार देखे जा सकते हैं -

य	का	ज	-	यथा	का	जथा[10]
ष	"	र	-	निष्फल	"	निर्फल[11]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 113
2- उपरिवत्, पृ० 170
3- उपरिवत्, पृ० 297
4- उपरिवत्, पृ० 299
5- उपरिवत्, पृ० 145
6- उपरिवत्, पृ० 265
7- उपरिवत्, पृ० 265
8- उपरिवत्, पृ० 264
9- उपरिवत्, पृ० 170
10- उपरिवत्, पृ० 1
11- उपरिवत्, पृ० 161

य	का	ज	-	ये	का	जे[1]
ष	"	ह	-	निष्पाप	"	निहपाप[2]
ऋ	"	र	-	ऋषि	"	रिषि[3]
ध	"	ह	-	बधिर	"	बहिर[4]
ण	"	न	-	श्रवण	"	श्रवन[5]
श	"	स	-	ईश	"	ईस[6]
द	"	ज	-	दीक्षित	"	जीक्षित[7]
स	"	छ	-	महोत्सव	"	महोछा[8]

मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ-

लालदास ने अपने काव्य में भाषा की परिपक्वता व अभिव्यक्ति क्षमता के लिए कुछ परम्परित एवं कुछ नवीन सूक्तियों, मुहावरों, कहावतों, लोकोक्तियों एवं सुभाषित उक्तियों का प्रयोग किया है । उदाहरण के लिए कुछ प्रयोग दृष्टव्य है-

सूक्तियाँ-

सज्जन पुरूष हर जगह नहीं मिलते, इस बात को निम्न सूक्ति से कवि ने कहा है-

"धातु रतन गिरि गिरि नहिन गज-गज शिर मणिनाहिं ।
लाल साधु जहँ-जहँ नहिन चन्दन बन-बन माहिं।।"[9]

इस सूक्ति में, "शैले-शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे ।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डाँ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 1
2- उपरिवत्, पृ0 32
3- उपरिवत्, पृ0 175
4- उपरिवत्, पृ0 2
5- उपरिवत्, पृ0 1
6- उपरिवत्, पृ0102
7- उपरिवत्, पृ0 139
8- उपरिवत्, पृ0 328
9- उपरिवत्, पृ0 72

साधवो नहि सर्वत्र चंदनं न वने वने ।" का अविकल अनुवाद किया गया है।
सत्संग के माहात्म्य को भी कवि ने प्रस्तुत किया है -

"पारस छुवत ताँब भए कंचन । पलटत बेर भई कछु रैंच न ।।
चंदन के संगति बन माहीं नींब पलास भेद रहे नाहीं ।।"[1]

अधिकांशत: कवि ने संस्कृत की सूक्तियों को अपने काव्य में रूपान्तरित किया है । उदाहरण के लिए -

"जो जाको गुण शील न जाने । सो ताकी निंदा नित ठाने ।"[2]

x x x

घर को घर कहियतु है नाहीं । गृहनी गृह जानहु जग माहीं ।"[3]

उपर्युक्त सूक्तियों में क्रमश: संस्कृत को इन पंक्तियों का प्रभाव देखा जा सकता है -

न वेत्ति यो यस्य गुण प्रकर्षम् ।
स तं सदा निन्दति नात्र चित्रम् ।

x x x

न गृहं गृहमित्याहु: गृहणी गृह मुच्यते ।

सूक्ति और नीतिकथन ही चूंकि जनजीवन के लिए अधिक स्पृहणीय होते हैं, अत: लालदास ने पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ सूक्तियों का प्रयोग किया है। संस्कृत से प्रभावित कुछ सूक्तियाँ इस प्रकार है -

"छोर समुद्र मीन मति हीना । अमृतमय चंद्रहिं नहिं चीना ।
गुन्जा भील सीस लै धरहीं । गज मुक्ता अन आदर करहीं ।"[4]

प्रेम के सम्बंध में लालदास ने एक सूक्ति प्रस्तुत की है -

"प्रीति सदा होत है दुखदाई । याको कछु अचरज नहिं पाई ।"[5]

1- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 25

2- उपरिवत्, पृ० 73

3- उपरिवत्, पृ० 75

4- उपरिवत्, पृ० 73

5- उपरिवत्, पृ० 141

मुहावरे-

"ढ़ें बकाइनि बाग बिराजै ।"[1]

"सोवत सिंहहिं आइ जगावा ।"[2]

"पानी करि डारौं अब तोही ।"[3]

"ब्यावरि पीर बाँझ नहिं पाई ।"[4]

"बवना चंद्र गहयो चहै जैसे ।"[5]

"तेरौं हाड़ करौं महिमानी ।"[6]

"पर घर कूदन मूसर चंद ।"[7]

"यह सब नाव बैठि का मेला । जन्मत एकै मरत अकेला ।।"[8]

"चतुर अंध जानैं नहीं भूकत हैं बौरान ।
हाथी के असवार कहँ कैसे पावै स्वान ।।"[9]

"बैठा हाट साह होइ बनियाँ । घर में गुर छिव लोन न धनिया ।।"[10]

"च्यूटे एक रेवरी पाई । बैठेउ फूलि होइ हलवाई ।"[11]

"होत है होनहार जब कोई । मिलत है आइ सबइ बिधि सोई ।।"[12]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 91

2- उपरिवत्, पृ० 123

3- उपरिवत्, पृ० 123

4- उपरिवत्, पृ० 11

5- उपरिवत्, पृ० 15

6- उपरिवत्, पृ० 107

7- उपरिवत्, पृ० 77

8- उपरिवत्, पृ० 247

9- उपरिवत्, पृ० 93

10- उपरिवत्, पृ० 117

11- उपरिवत्, पृ० 117

12- उपरिवत्, पृ० 374

"जहँ कहुँ अतिथि न रहहिं सुखमाना ।
ते जनु घर हैं विवर समाना ।।"[1]

नीति कथन -

महाकवि होने के कारण लालदास ने नीतिकथनों का भी पर्याप्त उपयोग किया है, उदाहरण के लिए-

"धन काकैं स्थिर रहयो जोबन काकैं थोत ।
वनिता काकैं बस भई जोगी काकैं मीत ।।"[2]

"सोइ पंडित सोइ चतुरस ज्ञानी । जोइ स्त्रीबस होइ न प्रानी ।"[3]

"परधन परत्रिय पर दुष्टहि जो मन राषै लाल ।
ताको जग महिं जानिए नियरें आयो काल ।।"[4]

"पुरुषन्ह पर परतीत न कीजै । अपने पतिव्रत पर मन दीजै ।"[5]

"विप्र चोर कन्या अधम जती भ्रष्ट गउ नारि ।
एते शत्रु अमारने दीजे लाल निकारि ।।"[6]

"जीवहिं पर जो दया न आनी । सो वैनरक परत हैं प्रानी ।"[7]

"गुरू को शिष्य पति को त्रिया पुत्र पिताहिन्हिन मान ।
लाल जो आज्ञा न करै वढकियो तिन्ह जान ।।"[8]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 376
2- उपरिवत्, पृ० 150
3- उपरिवत्, पृ० 387
4- उपरिवत्, पृ० 128
5- उपरिवत्, पृ० 282
6- उपरिवत्, पृ० 285
7- उपरिवत्, पृ० 379
8- उपरिवत् , पृ० 384

लालदास ने सुभाषितोक्तियों का प्रयोग भी अपने काव्य में पुष्टि के लिए कुछ स्थानों पर किया है-

"रूपवंत कहँ कर्मन दीन्हा । जहाँ कर्म तहँ रूप मलोना ।
बिधना रचत कुछ न सँभारे । चंद कलंक सिंधु किए खारे ।।"[1]

"दाता धन पूरा मरन जोगो जग जति नारि ।
वारि बात क्रम सम करै लाल पुरुष ए वारि ।"[2]

"धीमर चिरीमार अरु दासी । इन्ह के हृदय दया न प्रकासी ।"[3]

काव्य गुण-

संस्कृत काव्यशास्त्र में गुणों के सम्बंध में दो प्रकार की धारणाएँ प्राप्त हुई है । प्रथम को काव्य के शरीर रूप शब्दार्थ पर आश्रित माना गया है तथा उनकी संख्या 10 से 24 तक मानी गयी है । द्वितीय गुणों को काव्य के आत्मा रूप रस का धर्म बताया है तथा उनकी संख्या 3 तक सीमित बताई गयी है। प्रथम प्रकार की धारणा के आचार्य भरत, दण्डी व भामह , भोज आदि तथा द्वितीय में आचार्य आनन्दवर्द्धन , राजशेखर, मम्मट आदि प्रमुख है । आचार्य भरत के अनुसार काव्य में 10 गुण हैं-

श्लेषः प्रसादः समता समाधि,
माधुर्यमोजः पद सौकुमार्यम् ।
अर्थस्य च व्यक्तिरुदारता च,
कान्तिश्च काव्यस्य गुणा दशैते ।[4]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 151

2- उपरिवत्, पृ0 154

3- उपरिवत्, पृ0 284

4- नाट्यशास्त्र, भरत, 17/96

मम्मट ने तीन आधारों पर शब्द अर्थ के गुणों को रस के तीन गुणों में अन्तर्भुक्त करने का प्रयास किया है । वे आधार इस प्रकार हैं-

1- शब्द अर्थ के गुणों में से कतिपय ऐसे हैं, जो माधुर्य, ओज और प्रसाद में से किसी न किसी में गतार्थ हो जाते हैं ।

2- शब्द अर्थ के गुणों में से कतिपय ऐसे हैं जो दोषाभाव मात्र हैं, अतः वे स्वतन्त्र गुण माने जाने योग्य नहीं है ।

3- शब्द अर्थ के गुणों में से कुछ ऐसे हैं जो कभी -कभी गुण रह ही नहीं जाते, वरन् वे सामान्य दोष हैं जिनका त्याग ही उचित है ।[1] दण्डी, वामन आदि पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा प्रतिपादित गुणों का समाहार कर भोज ने इनकी संख्या 24 तक पहुँचा दी है । भोज के उत्तरवर्ती आचार्यों में या तो भोज के ही अनुकर्ता हैं अथवा गुणों की संख्या तीन मानने वाले लोग हैं ।

निष्कर्ष रूप में परवर्ती आचार्यों द्वारा ओज, प्रसाद, माधुर्य इन तीन गुणों का ही प्रमुख रूप से विवेचन किया गया है । लालदास के काव्य में प्रायः सभी गुणों का समावेश पाया जाता है । प्रमुख गुणों के उदाहरण इस प्रकार हैं-

माधुर्यगुण-

लालदास ने माधुर्य गुण का सर्वाधिक प्रयोग अपने काव्य में किया है । माधुर्य का लक्षण इसप्रकार है-

आह्लादकत्वं माधुर्यं श्रृंगारे द्रुति कारणं ।[2]

अर्थात चित्त के द्रवीभाव का कारण और श्रृंगार में रहने वाला जो आह्लाद

1- मम्मट, काव्य प्रकाश, व्या० विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि, 8/72, पृ०390

2- उपरिवत्, पृ०, 8/68

स्वरूप तत्व है, वह माधुर्य है । रसिक सम्प्रदाय माधुर्योपासना का ही सम्प्रदाय है । अतः 'अवधविलास' में माधुर्य का विस्तार और उसका व्यापक विनियोग होना आवश्यक है । सम्पूर्ण प्रसंग में अनेक ऐसे स्थल है, जहाँ माधुर्य गुण का साम्राज्य फैला हुआ है । माधुर्य गुण का एक उदाहरण इसप्रकार है-

"देखि सुन्दर ललवि ललकैं बदन युबति जूथहीं ।
बैठि कोमल केश शिर के ललित हाथन्ह गुँथहीं ।।
नैन अंजन करहिं रंजन अंग मंजन नागरी ।
कबहुँ कुलही कबहुँ पटुका कबहुँ बांधति पागरी ।।"[1]

<u>प्रसाद गुण-</u>

'प्रसाद' का लक्षण आचार्य मम्मट ने इसप्रकार बताया है-

"श्रुतिमात्रेण शब्दात्तु येनार्थ प्रत्ययो भवेत् ।
साधारणः समग्राणां स प्रसादो गुणो मतः ।।"[2]

प्रसाद गुण के कारण श्रवण मात्र से शब्द के अर्थ की प्रतीत हो जाती है । लालदास ने काव्य को सरल बनाने की उद्घोष किया है । सरलता को ही लक्ष्य मानकर लालदास ने लोक प्रचलित मुहावरों तथा देशज शब्दों का प्रयोग करके अपने काव्य को सहृदयों तथा जनसामान्य के लिए बोधगम्य बनाया है, इसका प्रमुख आधार गुण ही है । प्रसादगुण का एक उदाहरण -

"जहँ तहँ शोर भयो रिषि आए । नगर लोग देखन कौं आए ।
लोक लाज मुनि के कुछ नाहीं । बनिता के पीछैं लगि जाहीं ।
निंदा लाज मान अपमानैं । बनबासी ए सब का जानैं ।
केउ कहै मुनि मदन धकावा । अपना जप तप धर्म नसावा ।
केउ कहै ऋषि दोष न कोई । कर्ता करै सोइ कछु होई ।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 266
2- काव्य प्रकाश, मम्मट, 8/ 76

ओजगुण-

'ओज' गुण में समस्त पदों की बहुलता होती है। आचार्य मम्मट ने समस्त पदों की बहुलता में ओज गुण माना है -

"योग आद्यतृतीयाभ्यामन्त्यो: रेण तुल्ययो: ।
टादि: शषौ वृत्तिदैर्घ्य गुम्फ उद्धत ओजसि ।"[1]

लालदास के काव्य में रसिक वृत्ति के कारण 'ओज' का बाहुल्य नहीं है, किन्तु युद्ध आदि के प्रसंगों में ओज गुण का जैसा चमत्कार पूर्ण प्रभाव कवि में दिखाई पड़ता है, उससे सिद्ध होता है कि लालदास 'ओज' के भी सफल चितेरे हैं। 'ओज' का एक उदाहरण-

" फिरैं चक्र दण्ड जनु च्वाक तंड ।
करैं व्योम भारी अखारे मझारी ।
पिवैं दूध कच्चे मनु बाघ बच्चे ।
हुँकारैं भनकैं ज्यों बाघा ठनकैं ।
भुजा पेट भीजैं है गरमी पसीजैं ।
ताड़ै चटाका जो बाजैं पटाका ।
करैं लोट पोटा ढुरैं जानु गोटा
अटैक वाला कि पाई दिवाला ।।"[2]

रीति-

आचार्य वामन ने 'रीति' को काव्य की आत्मा कहा है- रीतिरात्मा काव्यस्य"[3]

1- काव्यप्रकाश, मम्मट, , 8/75

2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 305

3- वामन, काव्यालंकार सूत्रवृत्ति, व्या0विश्वेश्वर सिद्धान्तशिरोमणि, 1/2/6 की वृत्ति, पृ0 18

ओजगुण-

'ओज' गुण में समस्त पदों की बहुलता होती है । आचार्य मम्मट ने समस्त पदों की बहुलता में ओज गुण माना है -

"योग आद्यातृतीयाभ्यामन्त्यो: रेण तुल्ययो: ।
टादि: शषौ वृत्तिदैर्घ्यं गुम्फ उद्धत ओजसि ।"[1]

लालदास के काव्य में रसिक वृत्ति के कारण 'ओज' का बाहुल्य नहीं है, किन्तु युद्ध आदि के प्रसंगों में ओज गुण का जैसा चमत्कार पूर्ण प्रभाव कवि में दिखाई पड़ता है, उससे सिद्ध होता है कि लालदास 'ओज' के भी सफल चितेरे हैं । 'ओज' का एक उदाहरण-

" फिरैं चंड दंडा जनु व्याक तंडा ।
करैं व्योम भारी अवारे मझारी ।
पिवैं दूध कच्चे मनु बाघ बच्चे ।
हुँकारे भनक्कैं ज्यों बाधा ठनक्कैं ।
भुजा पेट भीजैं है गरमी पसीजैं ।
ताड़ै चटाका जो बाजैं पटाका ।
करैं लोट पोटा दुरैं जानु गोटा
अटेक वाला कि पाई दिवाला ।।"[2]

रीति-

आचार्य वामन ने 'रीति' को काव्य की आत्मा कहा है- रीतिरात्मा काव्यस्य"[3]

1- काव्यप्रकाश, मम्मट, , 8/75

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 305

3- वामन, काव्यालंकार सूत्रवृत्ति, व्या०विश्वेश्वर सिद्धान्तशिरोमणि,1/2/6 की वृत्ति,पृ० 18

अर्थ, शब्द तथा समुचित अक्षर योजना के रहने पर भी जिसके बिना उक्ति शुशोभित नहीं होती , उसी को पन्थ अथवा "रीति" कहते हैं । लालदास काव्य में उक्ति की प्रधानता को स्वीकार करते हैं, इसलिए उक्ति प्रधान होने के कारण उनका काव्य "रीति" सिद्धान्त की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है ।

आचार्यों ने रीति का विश्लेषण विभिन्न प्रकार से किया है । काव्यशास्त्र में आठ रीतियां बताई गयी है- पांचाली, वैदर्भी, गौडी, लाटी आवंतिका, मागधी, सौराष्ट्री, द्राविडी आदि । किन्तु जिन रीतियों को प्रमुखता दी गई है, वे इस प्रकार है -

पांचाली-

आचार्य वामन ने इस रीति का अविष्कार किया । गाढ़बन्ध से रहित शिथिल पदावली, माधुर्य और सौकुमार्य गुणों से युक्त रचना को पांचाली कहा गया है[1] ।" राजशेखर के अनुसार शब्द और अर्थ के समान गुम्फन को पांचाली रीति कहा गया है । लालदास की रचना में पांचाली रीति का प्रभाव नगण्य सा है, क्यों कि वे सरलता के आदर्श को लेकर चलते हैं ।

वैदर्भी-

वैदर्भी का लक्षण बताते हुये कहा गया है कि वह दोषों की मात्रा से रहित समस्त गुणों से युक्त, वीणा के स्वर के समान मधुर रचना होती है[2] । इसे समास रहित कहा गया है तथा इसमें श्रुति माधुर्य भी होता है । लालदास

1- वामन, काव्यालंकार सूत्रवृत्ति, व्याकरण विश्वेश्वर सिद्धान्तशिरोमणि,- 1/2/13,पृ0 25

2- वामन,काव्यालंकार सूत्रवृत्ति,व्याकरण वि0 सिद्धान्त शिरोमणि- 1/2/11,पृ021

को समास रहित कोमल पद रचना इसी रीति के अंतर्गत आती है । कठिन शब्दों से तथा दीर्घ समास से कवि ने अपनी रचना को बचाया है । लालदास के काव्य में वैदर्भी रीति का एक उदाहरण-

"कबहुँकि पद नख लिखति जुधरनी । नैन नवाइ लजति मन हरनी ।
कबिहुँ कि नैन सों नैन लगाई । चितवत बड़ी देर सुखदाई ।
कबिहुँ कि चपल नचावति भौहैं । चितवति मुसकि होइ तिरछौंहैं ।
कबहुँ कि दरपन ले मुख निरखति । रूप देखि मनहीं मन हरखति ।।"[1]

गौड़ी -

शिंग भूपाल ने इसे कठिना रीति भी कहा है । आचार्य भामह ने अलंकार युक्त ,ग्राम्यता रहित , अर्थवान, न्यायसंगत पदरचना को गौड़ी रीति के अंतर्गत रखा है ।[2] आचार्य विद्याधर ने ओज और कान्ति गुणों से युक्त रचना को इस रीति के अंतर्गत रखा है ।[3] इसे अत्यधिक दीर्घ समास, ओज और कान्ति गुणों से युक्त बताया गया है । लालदास ने सरलता के आदर्श को ध्यान में रखने के कारण बड़े -बड़े समास वाली पद रचना को अपना आदर्श नहींबनाया।

लालदास के काव्य में प्रमुख रूप से वैदर्भी रीति के ही दर्शन होते हैं, क्योंकि कवि सरलता, सहजता, समास रिक्तता के पक्षपाती हैं । वैदर्भी रीति हर तरह से कवि के आदर्श के अनुरूप है, अत: सम्पूर्ण काव्य वैदर्भी रीति से पुष्ट है ।

1- अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 185

2- काव्यालंकार, भामह , भा0 देवेन्द्रनाथ शर्मा 1/ 35 पृ0 18

3- काव्यात्म -मीमांसा, विद्याधर, उद्धृत, जयमंत मिश्र,पृ0 160

अलंकार विधान-

काव्य के शिल्प विधान के अंतर्गत अलंकार एक अनिवार्य तत्व है। अलंकार काव्य शोभा के उत्कर्ष को अभिवृद्धि देते हैं। अलंकार विधान जितना स्वाभाविक एवं सहज होगा, रस परिपाक एवं भावाभिव्यक्ति में उतना ही सहायक होगा। वामन के अनुसार सौंदर्यमलङ्कारः।[1] इनके अनुसार जो काव्य को ग्राह्य बनाता है, वह अलंकार है।[2] दण्डी के अनुसार काव्य का शोभाकर धर्म अलंकार है।[3] डॉ० नगेन्द्र के अनुसार व्यापक अर्थ में अलंकार काव्यशिल्प का पर्याय है और सीमित अर्थ में उक्ति चमत्कार या अभिव्यंजना - शिल्पका।[4] डॉ० श्याम सुन्दर दास अलंकार को भाषा सौन्दर्य का साधन मानते हैं।[5] लालदास केशव की भाँति आलंकारिक कवि नहीं है। उनके काव्य में प्रयुक्त अलंकार सहज बोधगम्य एवं काव्योत्कर्ष से परिपूर्ण है। अलंकार विधान मात्र कल्पनाओं के वाग्विलास तक ही सीमित नहीं है, प्रत्युत भावों की अभिव्यंजना के प्रधान उपादान हैं।

लालदास के काव्य में मुख्यतया उत्प्रेक्षा, रूपक, अनुप्रास, श्लेष दृष्टान्त, उदाहरण, सांगरूपक, विनोक्ति, विभावना आदि अलंकार दृष्टव्य हैं। 'अवधविलास' महाकाव्य में उत्प्रेक्षाओं की संख्या अधिक है। कुछ उत्प्रेक्षाएँ परम्परित हैं, किन्तु वे भी विशिष्ट क्षेत्र से चयनित की गई हैं। इन क्षेत्रों में प्रमुखतया प्राकृतिक क्षेत्र से ली गई उत्प्रेक्षाएँ हैं। कुछ उत्प्रेक्षाओं के उदाहरण -

"अस कहि देवि गिरी न सँभारा। मानहुँ लता पवन के मारा।।"[6]

1- वामन, काव्यालंकार सूत्रवृत्ति, व्या० विश्वेश्वर सिद्धांत शिरोमणि, 1/1/2 पृ० 5

2- उपरिवत्, 1/1/1, पृ० 4

3- काव्यशोभाकरान्धर्मानलंकारान् प्रचक्षते। दण्डी काव्यादर्श, व्या० रामचन्द्र मिश्र, 2/1, पृ० 74

4- नगेन्द्र, रस सिद्धान्त, पृ० 212

5- साहित्यालोचना, डॉ० श्यामसुन्दर दास, पृ० 316

6- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 136

"लम्बे बार स्याम लटकारे । मनहुँ नील मनि किरन पसारे ।"[1]

"वरण कमल पनहीं जल छाजे । मानहुँ हंस सुता आइ बिराजे ।।"[2]

"खेलत बहुत सखिन्ह में बाला । मनु शशि ओज गगन उजाला ।।"[3]

"रूपशील गुणलाज सुअंगा । जनु दिन बढ़त ब्याज धन संगा ।"[4]

लालदास को उत्प्रेक्षाओं में बिहारी का प्रभाव भी परिलक्षित होता है-

"गौर ललाट देति जब बिंदा । कमल करनि मनु पूजत चंदा ।।"[5]

ऐसा प्रतीत होता है मानो कमल करों से चन्द्रमा की पूजा की जा रही है । इस प्रकार शारीरिक चेष्टाओं में जहाँ वासनात्मक चेष्टाएँ हैं, वहीं दूसरी ओर विशुद्ध भावात्मक चित्र भी प्राणवान है । लालदास के काव्य में प्रयुक्त कुछ अलंकार इस-प्रकार है -

रूपक-

"ज्ञान दीप है भक्ति मनि उभय प्रकास कराहिं ।
विषय पवन दीपक बुझै मनि कौं कछु भय नाहिं ।।"[6]

उदाहरण-

ब्रम्हाश्रित रहैं जिव अरु माया । जैसे संग वृक्ष की छाया ।[7]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 179
2- उपरिवत् , पृ० 298
3- उपरिवत्, पृ० 291
4- उपरिवत्, पृ० 291
5- उपरिवत् , पृ० 179
6- उपरिवत्, पृ० 14
7- उपरिवत्, पृ० 391

उल्लेख -

भक्तन्ह कहँ है भक्ति इह रसिकन्ह कौ रस रूप ।

ज्ञानी को है ज्ञानमय अवधविलास अनूप ।।[1]

परिसंख्या -

"बंधन नाम केश पशु कारन । सारि विचार समय कहँ मारन ।।"[2]

क्रिया समुच्चय अलंकार -

"परि परि उठि उठि फिरि फिरि गावत । सुरज कौ कछु अधिक बिराजत ।"[3]

कहीं-कहीं लालदास ने अनेक अलंकारों को एक ही छन्द में सम्गुम्फित कर दिया है। यथा -

"साधु समुद्र समान सदूरे । रामचरित रतना गुन पूरे ।"[4]

अनुप्रास तो स्पष्ट है ही उपर्युक्त पंक्ति में, इसके अतिरिक्त 'साधु समुद्र' में रूपक अलंकार है तथा 'साधु समुद्र समान' कर देने से सभंग श्लेष हो जाता है । अनेक अलंकारों का एक में ही सफलता पूर्ण संगुम्फित होना इस बात का सूचक है कि लालदास अलंकार शास्त्र के पंडित हैं ।

विभावना -

"पंगु चरन गूंगे बचन नैन अंध लहै लाल ।

बंध्या सुत बधिरे श्रवन जो हरि होहिं दयाल ।।"[5]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 3

2- उपरिवत्, पृ० 40

3- उपरिवत्, पृ० 283

4- उपरिवत्, पृ० 216

5- उपरिवत्, पृ० 1

विनोक्ति -

लालदास ने एक स्थान पर विनोक्ति अलंकार की माला सी पिरो दी है-

"बिनु केवट नौका बहि जाई । पुत्र बिना गृह जाइ नसाई ।
बिनु पूँजी नहिं हाट पसारा । उजरै खेत बिना रखवारा ।
जैसे जोग बिना मन बाँधा । पुत्र बिना तैसे घर धंधा ।
जैसे रूपवंत कोउ होई । कुष्ट भए त्यागै सब कोई ।"[1]

छन्द

भारतीय वाङ्मय में छन्द को वेदपुरूष का अंग,[2] विराट् वेदवृक्ष, ज्ञान वृक्ष का पर्ण,[3] रस का अभेद रूप,[4] तथा प्राणरूप,[5] कहा गया है । छंद का अर्थ छांदस ﴾ विवेक ज्ञान﴿ से है । " काव्य में छंद को अनिवार्यता का अर्थ कविता को विवेक ज्ञान से युक्त करना है । कालान्तर में गहरे विवेक ज्ञान से हट जाने के कारण कविता में छन्द की अनिवार्यता का अर्थ छन्द बद्धता से लिया जाने लगा और विवेक की ताल बद्धता ﴾सम बद्धता ﴿ का स्थान छंद की गेयता और राग की सम्बद्धता ने ले लिया है । इसतरह छंद का अस्तित्व वाद ग्रस्त हो गया, कविता छंद मुक्त हो गई । वस्तुत: यह छंद पर संकट नहीं है , क्योंकि छंद

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 162
2- वृत्त रत्नाकर ﴾भूमिका﴿ पृ० ।
3 - श्रीमद्भगवद्गीता, 15/1
4- रसौ वै छन्दांसि । शतपथ ब्राम्हण, 7,3,1,37
5- प्राण: वै छन्दांसि:, कौशीतकी ब्राम्हण, 7,9,11

युक्त कविता विवेक से युक्त होने पर सच्चे अर्थों में छन्द युक्त कविता (छान्दस) कहलाने की अधिकारिणी है और विवेकशील छंद बद्ध कविता उससे अधिक महत्व की अधिकारिणी है।"[1] लालदास ने 'अवधविलास' में प्रमुख रूप से जिन छंदों का प्रयोग किया है उनमें दोहा, चौपाई, सोरठा, अरिल्ल, कवित्त, आदि प्रमुख है। प्रमुखता चौपाइयों की है। चौपाई चार चरण का 16 मात्राओं का मात्रिक छंद है। सम्पूर्ण काव्य में चौपाइयों का बाहुल्य है। चौपाई का एक उदाहरण इस-प्रकार है -

"अति सुंदर कछु कहे न जाही। कोटि काम लावनि तन माँही।
वारि वंद ज्यों दोइ चकोरा। अरबराहिं नृप नैन न थोरा।।"[2]

दोहा 13, 11 के विश्राम से लिखा जाने वाला मात्रिक छंद है। कवि ने चौपाइयों के अनन्तर दोहों की रचना की है। चौपाइयों की निश्चित संख्या के बाद किसी निश्चित क्रम का अनुपालन नहीं किया गया, किन्तु लालदास के दोहे चौपाइयों में व्यक्त भाव के विस्तार को समेट कर सार रूप में किसी भाव विशेष की अभिव्यंजना देने में अत्यन्त सार्थक सिद्ध होते हैं। इनके काव्य में प्रयुक्त दोहों का उदाहरण इस प्रकार है-

"रूपभरी जोबन भरी भरी प्रेम गुन खानि।
लाल ताहि देखत बनैं कहत न बने बखानि।।"[3]

1- रामविनोद, चंददास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, भूमिका भाग

2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 262-63

3- उपरिवत्, पृ0 184

"लाल रतन जल थल जिते तिते जानि सब कांच ।

एक हिये महं राखिय राम रतन हैं सांच ।।"[1]

सोरठा -

ग्यारह और तेरह मात्राओं के चरणों के क्रम से लिखा जाने वाला सोरठा एक मात्रिक छंद है।कवि ने सोरठा को मंगलाचरण के लिए प्रयुक्त किया है । यद्यपि सोरठा छंद का प्रयोग बहुत कम किया गया है किन्तु मंगलाचरण के लिए इस छंद को चुनकर कवि ने इसे भक्ति रस के अनुकूल माना है । सोरठा का एक उदाहरण इसप्रकार है -

"बंदौ हरि अवतार भक्त काज जे बपु धरे ।

दूरि कियो भू भार असुर मार सुर सुष दये ।।"[2]

अरिल्ल -

कवि ने अरिल्ल छंद में भी रचना की है । उसका एक उदाहरण प्रस्तुत है-

"कोइ एक नारि सयानि रही मनभावती ।

महारानि गइ सकुचि देषि तेहि आवती ।।

बालपने को सदा संग हित जानिये ।

अपने जिव अरु ताहि दोइ नहि मानिये ।।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० ।27

2- उपरिवत् , पृ० ।

सनमुख भेंटै ठाढ़ि सेज लखि हँसि दियो ।

देहु बधाइ हमारि पुत्र तुम्हारे भयो ।।

कहहु बात कुसलात कछु जान्यो सहो ।

पुत्र होत केहि भाँति कहत हम तो रहो ।।"[1]

कवित्त -

कवित्त रीतिकालीन शिल्प का एक प्रमुख छंद माना जाता है । लालदास ने 'अवधविलास' में कवित्त छंद का प्रयोग किया है किन्तु यह संख्या में अत्यन्त अल्प हैं । कवित्त छंद का एक उदाहरण इसप्रकार है-

"ताते ताते ता जिन्ह के माते माते हाथी पोछे,

चढ़ि चढ़ि रथनि चौगानन्ह दौरावहीं ।

कोइल चकोर मोर चातक करत सोर,

बोलि बोलि ठौर ठौर पंक्षिन्ह बिरावहीं ।

आछे आछे फूलनि के आछे आछे हार लाल,

दौरि दौरि माली ल लै लै माला पहिरावहीं ।

चंचल तुरंग गति फेलत बसंत रितु,

ऐसो बिधि बागन्ह ते राम घर आवहीं ।"[2]

इन छंदों के अतिरिक्त लालदास ने परिगणन शैली द्वारा छन्दों की एक लम्बी तालिका प्रस्तुत कर दी है । यद्यपि इन छंदों का प्रयोग काव्य में दृष्टव्य नहीं है छंदों की इसप्रकार की लम्बी तालिका केशव के प्रभाव को द्योतित करती है । कवि

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 259

2- उपरिवत्, पृ० 308

ने जिन छंदों का उल्लेख किया है वे इस प्रकार है -

सुगीतक, रमनक, होरा, सोमराज, मधु, अभीरा , मरहट्ठा, कुंडलिया, सोहा, गाहा, प्रिया, सोरठा, दोहा, छप्पय, स्वरूपी, रोला, नाराच, तरूनिजा, षट्पद, तोमर, नवपदी, मोदक , चंद्रवर्त्म , मनिचामर, तोटक, सिंहावलोकन, अमृतगति, तारक, प्रमिताक्षरा, मनोरमा, हंस, मनसिज , पृथ्वी पद , विचित्रा, इंद्र वज्रा आदि ।[1]

लालदास ने अपने 'अवधविलास' महाकाव्य में प्रसंग और रस के अनुकूल छंदों में परिवर्तन किये हैं । छंद का प्रयोग संगीत और रस के विशेष अनुबन्ध पर किया है । रसात्मक स्थलों में कवि की छंद योजना कहीं रस के समुद्र में आन्दोलित होती चलता है और कहीं अपनी प्रतिभा के पंख खोल कर कल्पनाओं का विलास करती चलती है । छंद की मनोहारिता कवि के पिंगल शास्त्रीय प्रतिभा का भी प्रमाण देती है । छंदों का चयन मनोवेगों के अनुकूल है । उल्लास की अभिव्यक्ति के लिए जिस आनंद तथा रस संचार की आवश्यकता थी, कवि ने उसका निर्वाह किया है । उदाहरण के लिये -

"गिरत केसरि परत चोवा अरगजा बरषा रची ।
करत उत्सव देव दिव पर कीच बीथिन्ह बिच मची ।
सुने जिनहीं हरष मनहीं भयो सबके देखिये ।
जन्म आगम सुख समागम अवध माँह विशेषिये ।"[2]

लालदास ने 'अवधविलास' में 'छंद मोतीदाम' इसप्रकार का नाम देकर इस छंद का भी

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 198-100

2- उपरिवत्, पृ० 253

प्रयोग किया है । यद्यपि इस छंद का लक्षण उपलब्ध नहीं होता। छंद मोतोदाम का उदाहरण इस प्रकार है -

"सुनै लोग आवैं । दरश काज धावैं । कहैं होइ ठाढ़े । रहो प्रेम बाढ़े ।।
बड़े भाग आए । दरश आजु पाए । चलो कहूं आगें । हमहूं संग लागें ।।
कीजे प्रवेसा । हमारे सुदेसा । कहौ आजु जैहौ । हमहिं दर्श देहौ ।।
कहिए हमारा । सो सब हो तुम्हारा । बनो जास जेरे । सबै आइ घेरे ।।
लीजे समाजा । करो राम राजा । रहे राम आवै । तहाँ कुंज छावैं ।।
बन के सुमेवा । करहिं देव सेवा। प्रेमौ रवा है । राखौ सराहै ।।
परो काज कीजे । जथा जोग दीजे । मनुष देह पाई । है याहो बड़ाई ।।
अपनी कमाई । करै सोइ पाई । एहो भाँति कहते । गए दूरि रहते ।।"[1]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 395

षष्ठ प्रकरण

आचार्यत्व निरूपण

आचार्यत्व

आचार्यत्व की परम्परा और लालदास -

आचार्य शब्द का व्युत्पत्यर्थक विश्लेषण इस प्रकार दिया गया है - आ+ चर् + ण्यत्।[1] चर् धातु आ- उपसर्ग से युक्त होकर जब ण्यत् प्रत्यय ग्रहण करता है, तब आचार्य शब्द व्युत्पन्न होता है।[2] आचार्य का विवेचन करते हुए उसे अग्रगमन अर्थ में भी स्वीकार किया गया है। आचार्यत्व का तत्वार्थ होता है वह जिसका अग्र- गमन हो। बौद्धिक क्षेत्र में आचार्य का अर्थ होता है वह जिसके लिए समस्त बौद्धिक क्षेत्र गम्य हो। रहस्यमय ज्ञान- स्तरों का स्पर्श करने की शक्ति भी आचार्य में होती है।"[3] ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार "समग्र रूपेण दृष्टि से परे के पथों पर अग्रसर होने वाले आचार्य या बुद्धिमान होते हैं।"[4] आचार्यत्व के सम्बंध में विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण व्यक्त किये गये हैं। "किसी विशेष सिद्धान्त के स्थापक को आचार्य कहा गया है।"[5]

काव्य के क्षेत्र में काव्यशास्त्र के निष्णात मनीषी को, जो काव्य मीमांसा का अधिकारी होता है, उसे आचार्य कहा जाता है। संभवतः यास्क और पाणिनि के नाम के साथ इस शब्द का प्रयोग सर्व प्रथम किया गया। भरतमुनि के काव्यशास्त्र के साथ आचार्य शब्द लोकजीवन में व्यापक महत्ता प्राप्त कर सका। संस्कृत साहित्य में जिन प्रमुख आचार्यों का उल्लेख पाया जाता है

1- अष्टाध्यायी, पाणिनि, 6/ 2/25

2- केशव का आचार्यत्व, डॉ० विजयपाल सिंह, पृ० 17

3- उपरिवत्, पृ० 19

4- "आ च परा च पथिभिश्चरति स सध्रीची।" ऐतरेय ब्राह्मण, 1/6/2

5- One who profounds a particular doctrine.
CAPTE, Practical Skt. English Dictionary.

उनमें भामह, दण्डी , उद्भट, वामन, रूद्रट, आनन्दवर्द्धन, मम्मट, रूय्यक, जायदेव , आदि प्रमुख आचार्य है । जयदेव, विश्वनाथ, शारदातनय तथा भानुदत्त ने काव्यशास्त्र को अपनी काव्य प्रतिभा से प्रभावित किया है । भक्ति को काव्यशास्त्र से संयुक्त करने वाले आचार्यों में रूप गोस्वामी का प्रमुख योगदान रहा है । उनके तीन ग्रंथ भक्तिरसामृत सिन्धु, उज्जवल नीलमणि तथा नाटक चन्द्रिका अलंकार शास्त्र की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है । जीव गोस्वामी ने रूपगोस्वामी के ग्रंथों की टीकाएँ लिख कर भक्ति मूलक काव्य-शास्त्र की परम्परा की भी वृद्धि की है । अप्पय दीक्षित ने काव्यशास्त्र विषयक सिद्धान्तों का निरूपण किया है । आचार्यत्व की परम्परा में राजशेखर का योगदान महत्वपूर्ण है । सत्रहवीं शताब्दी के हिन्दी के प्रमुख आचार्यों में केशव प्रतिनिधि आचार्य माने जाते है । कृपा राम की हिततरंगिणी , सूर की साहित्य लहरी, नंददास का रसमंजरी, रहीम की बरबै नायिका भेद, चंददास की श्रृंगार सागर जैसी रचनाओं में भक्ति आश्रित आचार्यत्व का रूप दिखाई पड़ता है । मोहनलाल मिश्र के श्रृंगार सागर का उद्देश्य भी भक्ति मूलक है।हिन्दी के अन्य आचार्यों में सुन्दर कवि , चिंतामणि, मतिराम, भूषण, कुलपति मिश्र, सुखदेव मिश्र,देव, कालिदास त्रिवेदी, सूरत मिश्र, आचार्य श्रीपति , सोमनाथ, करण कवि, हरीदास, प्रतापसाह , नवीन, पद्माकर आदि हैं । लालदास भी इसी परम्परा की एक कड़ी है । उनके काव्य में आचार्यत्व के जो सूत्र बिखरे हुये हैं, उनका अनुशीलन कवि के आचार्यत्व के उद्घाटन में सहायक सिद्ध होता है । ।

लालदास का आचार्यत्व -

लालदास आचार्यत्व की परम्परा में लक्षण ग्रंथों का आधार लेकर सामने नहीं आते किन्तु उनका काव्य संस्कृत और हिन्दी काव्यशास्त्र से सम्पुष्ट है। विविध विषयों के विवेचन में उनके आचार्यत्व की प्रतिच्छाया प्रतिबिम्बित होती है।

लालदास के आचार्यत्व के प्रमुख स्रोत रसिक भक्ति-शास्त्र ,साहित्य शास्त्र , नाट्यशास्त्र , संगीतशास्त्र , कामशास्त्र ,ज्योतिष् आदि प्रतीत होते हैं । कवि ने इन स्रोतों से प्रेरणा और वस्तु ग्रहण की है । इन स्रोतों की विविध परम्पराएँ हैं । विविध परम्पराओं के विभिन्न आचार्य हैं । लालदास किस आचार्य परम्परा को लेकर चलते है, यह निर्णय करना कठिन है। जहाँ वे भक्ति के क्षेत्र में शुक सनकादि और व्यास[1] का अनुगमन करते हुए दिखाई पड़ते है, वहो नायिका भेद में भानुदत्त कृत रसमंजरी[2] को प्रेरक मानते हैं । काव्य सिद्धान्तों के आदर्श में वे उक्तिमार्गी राजशेखर[3] के सिद्धान्त का अनुगमन करते हैं । संगीत और नाट्य शास्त्रीय सिद्धान्तों के निरूपण में वे भरत[4] की परम्परा को लेकर चलते हैं , किन्तु वे किसी परम्परा विशेष से बँधे हुए नहीं दिखाई पड़ते । आवश्यकता पड़ने पर वे इन आचार्यों के सिद्धान्तों का खण्डन भी करते हैं तथा स्वतन्त्र स्थापनायें करते हैं ।

"भरत नाट्यशास्त्र , अभिनय दर्पण आदि प्राचीन लक्षण-ग्रन्थों में हाथ की मुद्राओं को हस्ताभिनय (हस्त) कहा गया है । भरतनाट्य में इसके तीन भेद बताये गये है असंयुत, संयुत और नृत्त हस्त । लालदास ने हस्तक के दो ही प्रकार गिनाये हैं - संयुत और असंयुत । लालदास का यह वर्गीकरण भरत के नाट्यशास्त्र से असंगति रखते हुए अभिनय -दर्पणकार आचार्य नन्दिकेश्वर के वर्गीकरण के अनुकूल हैं । भरत के नाट्यशास्त्र में निर्देशित नृत्त हस्त को नन्दिकेश्वर ~~के वर्गीकरण के अनुकूल है~~ और लालदास दोनों मान्यता नहीं प्रदान करते । भरत ने संयुक्त हस्ताभिनय के 13 भेद बताये हैं और नन्दिकेश्वर ने 19 भेद

1- "शुक सनकादि व्यास जे गावत । तिन्हहिं देखि मैं हूँ अनुधावत ।।"
अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 15

2- "लक्षण हैं रसमंजरी ते तहँ लीजेहु जानि ।।उपरिवत्, पृ० 228

3- उक्ति विशेषः काव्यं भाषा या भवति सा भवतु"
राजशेखर ,कर्पूरमंजरी (काव्यमाला) पृ० 9

4- "पारिजात दर्पन भरत रागार्नव है एक।
संगीतार्णाव नृत्य निर्णय औरहु ग्रन्थ अनेक ।।"
अवधविलास,लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 55

बताये हैं । लालदास ने भरत के नाट्यशास्त्र के अनुसार संयुक्त के 13 भेद ही स्वीकार किये है नन्दिकेश्वर के 19 से असहमति प्रकट की है । इस प्रकार लालदास ने हस्तक भेद नन्दि केश्वर के अनुकूल किन्तु संयुक्त हस्ताभिनय भरत के अनुकूल रखा है, जो उनके आचार्यत्व की विलक्षणता का सूचक है।"[1]

लालदास का काव्यादर्श -

महाकवि लालदास ने यद्यपि कोई लक्षण ग्रंथ नहीं लिखा, फिर भी कवि की कृति से काव्य सम्बंधी अवधारणाएं निरुपित की जा सकती है। 'अवधविलास' महाकाव्य मात्र रामकथा सम्बंधी प्रबंध महाकाव्य नहीं है, प्रत्युत वह कवि के काव्य सम्बंधी समस्त सिद्धान्तों एवं प्रतिस्थापनाओं को अभिव्यंजित करने वाला ग्रंथ है । अतिशयोक्ति न होगी यदि इसे लक्ष्य ग्रंथ के साथ लक्षण ग्रंथों की समस्त विशेषताओं को अंतर्निहित करने वाला काव्य कहा जाए।

लालदास ने अपना काव्यादर्श जयदेव, सूर, तुलसी, विद्यापति व केशव से भिन्न स्वीकार किया है । वे जयदेव के काव्य को 'गूढ' तुलसी, सूर, को 'वर्णनात्मक' केशव, विद्यापति को 'विकट'[2] कहकर उनके काव्यादर्शों से,[3] पृथकता स्थापित करते हुए 'लाल सरल मनमान', अर्थात् लालदास का काव्य मनमानी सरल है' के आदर्श की स्थापना करता हुआ चलता है तथा उसका सम्यक् विनियोग भी उनके काव्य में है ।

हिन्दी तथा लोकभाषा के प्रख्यातकवियों से अपने काव्य

1- अवधविलास, लालदास, सम्पा० टि०,पृ०, 53

2- "गूढ़ काव्य जयदेव कवि तुलसी सूर बखान,
केशव विद्यापति विकट लाल सरल मनमान ।"
उपरिवत्, पृ० 7

3- उपरिवत्, पृ० 7

को सरल बनाने तथा उसे उसी रूप में घोषित करने का जो साहस लालदास में दिखाई पड़ता है, वह मात्र विज्ञापन नहीं है। उसमें कवि की शब्द साधना, अभिव्यंजना के सरलीकरण की प्रवृत्ति, रस परिपाक की अद्भुत क्षमता और जन-सम्प्रेषणीयता, दृष्टिगोचर होती है, कवि के शब्दों में-

"जानि बूझि नाहिन धरत कठिन अर्थ के ठौर।
राम नाम ज्यों जगत महि ग्रन्थ वर्ले सब ठौर।।"[1]

इसी प्रकार वाणी के सम्बंध में कवि का अपना पृथक् अस्तित्व रहा है। वे न तो अत्यधिक गूढ़ व्यंजनाओं के पक्ष में हैं और न ही सुस्पष्ट, कलात्मकता रहित अभिव्यंजना के पक्ष में। लालदास ने एक नागरि सौन्दर्य के मध्यमान आदर्श के माध्यम से अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया है। उनका कहना है कि जैसे नागरता पूर्ण सौन्दर्य के लिए न तो किसी सुन्दरी के उरोजों का अत्यन्त गोपनीय रूप ही उचित है और न ही उनका अत्यन्त उन्नत और बहिरंग प्रदर्शन। इस आदर्श का निर्वाह कवि ने पूर्णतया किया है-

"गूढ़हिं भली न प्रकासही बानी लाल बिचारि।
जिमि कुच प्रगट न गुप्त ही राखति नागरि नारि।।"[2]

ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने अर्थ की प्रतीयमानता पर बल दिया है और वह सीधे अर्थ को प्रकाशित न करके व्यंजना व्यापार के माध्यम से व्यक्त करने पर बल देता है।

लालदास की काव्य सृजन की प्रक्रिया-

महाकवि लालदास रस सिद्ध एवं काव्य सिद्ध कवि हैं। अतः कवि ने काव्य सृजन की समस्त प्रक्रिया को विशिष्ट ढंग से अभिव्यंजित किया है।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 7

2- उपरिवत्, पृ0 7

लालदास ने काव्य प्रक्रिया को एक प्रसूति धर्म कहा है तथा काव्य प्रक्रिया में कवि की कल्पना, भावना तथा भाव के अनुकूल भाषा की सर्जना तथा प्रेषणीयता के समस्त संकटों कोकवि की कठिनाई कहा है । यथा कवि के शब्दों में -

"कवि जाने कवि की कठिनाई,
ब्यावरि पीर बाँझ नहिं पाई ।"[1]

'प्रसूति' की पीड़ा से जैसे बंध्या अपरिचित रहती है वैसे ही संवेदन विहीन व्यक्तियों के लिए काव्य संवेदनाएँ अज्ञेय रहती हैं । लालदास एक ऐसे आचार्य हैं जो कविता की प्रक्रिया को प्रसव जन्य पीड़ा की तरह मानते हैं । कवि को जाने कितने पीड़ा और संवेदना के क्षणों से गुजरना पड़ता है । लालदास का यह भी आशय है कि कविता मात्र कल्पना की वस्तु नहीं है, उसका सम्बंध सघनतम मानवीय सम्बंधों से है । इस प्रकार कविता लालदास के लिए मात्र भावात्मक क्षणों की अभिव्यंजना नहीं है और न ही आवेगों का उद्‌गार । कविता कवि के लिए एक ऐसी कठिनाई है, जिसके जन्म से सृजन तक पीड़ा ही पीड़ा का व्यापार है। इसलिए कवि ने एक अत्यन्त मार्मिक व्यंजना करते हुए उसे 'पीड़ामय प्रसूति' की संज्ञा दी है । पीड़ा आवश्यक है। लालदास इसे प्रकारान्तर से स्वीकार करते हैं कि काव्य को पीड़ा मय होना चाहिए ताकि वह सर्जनात्मक मूल्यों से युक्त हो। इसी पीड़ा की प्रमुखता के कारण उन्होंने काव्य को रस के क्रम में सबसे पहले रखा है।

इस प्रकार उनके काव्य चिन्तन में संवेदना का पक्ष मुख्य है और यही संवेदना भक्त को लोक पीड़ा से संविदित करती है ।

रस निरूपण और लालदास-

लालदास उच्चकोटि के काव्यशास्त्रीय आचार्य हुए हैं। यद्यपि आचार्यत्व का प्रदर्शन उनका अभीष्ट नहीं है, फिर भी जहाँ कहीं अवसर मिलता

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 11

है वहाँ उनका आचार्यत्व छलांगें मारता हुआ कविता के मैदान में अपनी क्रीडा का कौशल दिखाने से नहीं चूकता।

लालदास एक उच्चकोटि के रस सिद्ध कवि हुए हैं, भले ही उन्होंने तुलसी की भाँति रस विशेष पर बल न दिया हो । लालदास ने 'अवधविलास' में परम्परित नौ रसों की गणना तो कराई ही है -

"करुण हास श्रृंगार भय अद्भुद बीर सकाम ।
रूद्र वीभत्स और शान्त हैं, ए नव रस के नाम ।।"[1]

साथ ही उन्होंने अपने 'अवधविलास' को नव रसों के कंद की संज्ञा से अभिभूषित किया है -

"कहत सुनत सब कहँ सुखद है नव रस को कंद ।"[2]

इससे सिद्ध होता है कि कवि का काव्य रसत्व की पूर्ण भूमि को प्राप्त करता है। भक्त कवि होने के कारण कवि ने भक्ति रस को भी मान्यता प्रदान की है और भक्ति प्रकरण में तो भक्ति रस की गंगोत्री ही प्रवाहित होने लगती है। भक्ति रस का अपना एक भिन्न तरह का आस्वाद होता है और भक्त का हृदय भक्ति रस से परिप्लावित रहता है । इस भक्ति रस के बिना भक्त का कोई अस्तित्व ही नहीं है । यद्यपि भक्ति रस सम्बंधी मान्यता या अवधारणा लालदास की अपनी नवीन मान्यता नहीं है, अतः इस सम्बंध में इतना ही कहा जा सकता है कि लालदास ने भक्त कवि होने के कारण भक्ति को एक रस के रूप में स्वीकार किया है ।

रस चिंतन के क्षेत्र में लालदास ने भक्ति रस के अतिरिक्त एक नवीन रस की स्थापना की है और उसे एक रस[3] की संज्ञा प्रदान की है। 'एक रस' से कवि का आशय अखण्ड एवं ऐक्य से है । 'भक्ति' के लिए इसी ऐक्य

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 2

2- उपरिवत्, पृ० 2

3- उपरिवत्, पृ० 370

को आवश्यकता है और 'प्रीति' के लिए भी । वस्तुत: भक्ति का मूल 'प्रीति' ही है । लालदास ने प्रीति को ही आधार मानकर उसका वर्गीकरण चार भागों में किया है , कवि के शब्दों में -

"प्रीति है चारि भाँति परकासा । सहज समा विषयज अभ्यासा ।।
सहज प्रीति स्वाभाविक होई । समा समान परसपर दोई ।।
विषय प्रीति स्वारथ मन भाई । हिलत मिलत अभ्यास कहाई ।।"[1]

यह आचार्यत्व के क्षेत्र में कवि का निजी योगदान है। प्रीति के वर्गीकरण का एक रेखा चित्र इस प्रकार है-

अत: लालदास के इस 'एकरस' को यदि 'प्रीति रस' की संज्ञा दी जाये तो यह उचित संज्ञा रहेगी।
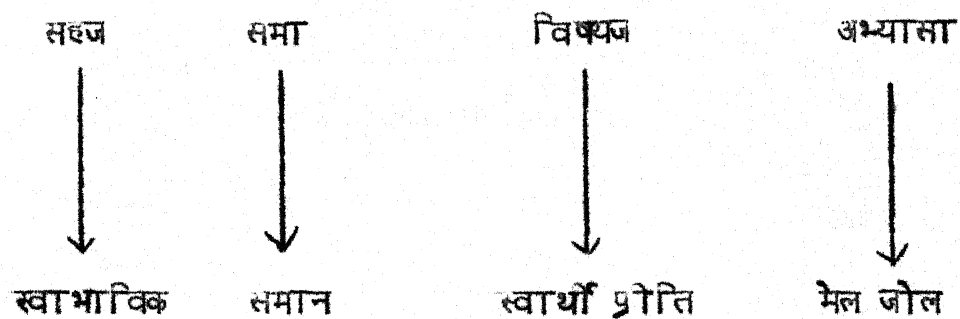
प्राय: संत कवि समन्वित मानसिक चेतना का कवि होता है और उसका यह समन्वय प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करता है । लालदास इसी प्रकार के संत कवि हैं । रस के क्षेत्र में विरोधी रसों का भी समन्वय करते चलते हैं । उदाहरण के लिए श्रृंगार में योग अथवा भक्ति रस को विचित्र संधि से एक ही प्रसंग में पाठक एक ओर श्रृंगार रस की अनुभूति करता है तो दूसरी ओर योग एवं भक्ति रस की। भ्रान्ति के कारण हास्य की भी पूरी -पूरी सम्भावना है। उदाहरण के लिए कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं -

"देखे ताके तन के बाना । जोइ सोइ मुनि सों करत बखाना।।
सुन्दर बेनी बनी रसाला । ताहि कहै इक जटा बिशाला ।।

1- अवधविलास , लालदास , सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 173

महा अमोल जराय को टोका । ताहि कहे ~~सर~~ किएँ तिलक सुनोका ।।
कानन्ह को बोरें छवि छाई । ताको मुद्रा कहत बनाई ।।

x x x

केशरि चंदन अंग लगाए । ताहि कहे तन भस्म चढ़ाए ।।
पहिरे चोर सुरंग निहारे । अति बिचित्र बलकल तन धारे ।।
कंकन जूरो मुंदरो राजे । अद्भुत कुश मुनि हाथ बिराजे ।।
अंग अंग गहना मन दोनें । बहुत जंत्र रक्षा तन कोनें ।।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में श्रृंगारिक उपादानों में भ्रान्ति के माध्यम से भक्ति रस एवं योग को स्थितियों का आरोपण किया है । लौकिक विलास चेष्टाओं के श्रृंगार में अलौकिक एवं दिव्य 'शान्त' रस को अभिव्यंजना में हास्य का अद्भुत अनुबन्धन रस प्रक्रिया को कैसी विरोधी किन्तु साधारणोकरण को कैसी मंजु एवं मनोहारो योजना का उदाहरण है ।

दर्शन और लालदास -

लालदास एक उच्चकोटि के संत कवि है। अतः दार्शनिकता भो लालदास के जोवन का अभिन्न अंग रहो है । दार्शनिक क्षेत्र का कोई भी अंश लालदास को दृष्टि से अछूता नहीं रहा, चाहे वह कर्मवाद हो अथवा द्वैत-अद्वैतवाद हो, चाहे सृष्टि प्रक्रिया हो अथवा पंचोकरण विवेचन हो, चाहे ब्रह्म जगत और माया का निरूपण हो अथवा जोव के स्थूल सूक्ष्म शरोर को संरचना । सभो विषय में लालदास का ज्ञान एक परिपक्व कोटि का है।

लालदास कर्मवादो सिद्धान्त को मानने वाले हैं नियतिवादो नहों । कर्म के सम्बंध में लालदास गोता से प्रभावित हैं । कर्म का फल अथवा कर्म को आसक्ति का बन्धन चित्त को बिरक्ति के कारण भक्तों को नहीं भाता। कर्म के सिद्धान्त में निष्काम कर्म को ओर कवि का संकेत गोता[2] से प्रभावित है।

1- अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दोक्षित, पृ0 180

2- ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ।।

श्रीमद्भगवद्गोता, 5/10

निष्काम कर्म को कवि ने अनेक दृष्टान्तों द्वारा पुष्टि की है । उनमें से कुछ अत्यन्त मौलिक हैं । उदाहरण के लिए पक्षी का जल में रहते हुए जल से न भीगना अत्यन्त मौलिक उदाहरण है । यथा -

"ज्यों जल पंछि रहत जल माहीं । अंग पंख भींजत कहुँ नाहीं ।"[1]

गीता में योग और भोग का समन्वित दर्शन स्वीकार किया गया है । निष्काम का आशय न तो कर्म से पलायन है और न कर्म शून्यता है । कर्म के फलाफल तथा अधिकार भाव से मुक्त रहकर निरन्तर कर्मों में लीन रहना ही निष्काम कर्म है। इसे पक्षी के माध्यम से कवि ने उसकी जल केलि तथा उसके अंगों का जल से निस्संग रहना कहलाया है । लोकजीवन में पुरूषार्थ करते हुए कर्म का करना तथा उसके परिणाम की लिप्सा से मुक्त रहना ही लालदास का दर्शन प्रतीत होता है। लालदास के शब्दों में-

"काहुक कर्म लगै नहिं कोई । कर्म फले जौ स्पृहा न होई ।"[2]

निष्काम कर्म का यही दर्शन गीता का कर्मवाद है।[3] कर्म दर्शन के सम्बंध में महाकवि की यह मान्यता है कि कर्मों से निष्क्रिय होकर कर्मों पर विजय नहीं प्राप्त की जा सकती । कर्मों का परिशोध तो शुभ कर्मों के माध्यम से ही हो सकता है, जैसे लोहा ही लोहे को काट सकता है।[4] कर्मों का विवेचन करते हुए कवि ने कर्मों के दो प्रकार बताये हैं - 1- शुभ कर्म

2- अशुभ कर्म

कर्म का एक अन्य वर्गीकरण लालदास ने प्रस्तुत किया है जो गीता[5] से अनुमोदित है।

1- अवधविलास, लालदास , सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 192

2- उपरिवत्, पृ0 192

3- कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन् ।
श्रीमद्भगवद्गीता, 2/47

4- "जैसे लोह लोह सों फाटै । तैसें कर्म कर्म करि काटे ।"
अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 30

5- कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मण: ।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गति: ।।
श्रीमद्भगवद्गीता, 4/17

कवि के शब्दों में -

"कर्म अकर्म बिकर्म है भेदा । समुझत तिन्हहिं लहत कवि पेदा।।
जोइ करिये सोइ कहियत कर्मा । नहिं करिये सोइ जानि अकर्मा।।
निषध कृया करिये कछु जोई । तिन्हहिं बिकर्म कहत सब कोई ।।

x x x

हरि के अर्थ कर्म कछु करना । सोइ निहकर्म कबिन्ह कहि बरना ।।"[1]

संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

कर्म की विवेचना करते हुए गीता के विभिन्न टीकाकारों ने अपने मत व्यक्त किए हैं।[2] लालदास के अनुसार कर्म का सम्बंध हरि के निमित्त किये गये कर्मों से है । अकर्म का सम्बंध ऐसे कर्मों से है जो न हरि के निमित्त किये गये और न 'स्व' के लिए।विकर्म उन कर्मों को बताया है जो निषिद्ध होते हैं। कर्तृत्व के सम्बंध में भी लालदास की कुछ मान्यताएं व्यक्त हुई हैं । वे कर्म को ही कर्ता मानते हैं तथा कर्म को ही अहंकार मानते हैं -

"कर्ता काल कर्म अहंकारा । सत्व रज तम गुन कृषा अपारा ।"[3]

लालदास के अनुसार अहंकार बुद्धि से रहित व्यक्ति को कर्म का स्पर्श नहीं लगता। अत: अहंकार शून्य के लिए पाप का विधान नहीं बताया गया । पाप-पुण्य,शुभ- अशुभ , स्वर्ग-नर्क,जीवन-मृत्यु, सभी कुछ अहंकार के कारण दोषयुक्त बताये गये हैं, अन्यथा सम्पूर्ण फलाफल भाव पर आश्रित हैं, क्रिया अथवा कर्म पर नहीं।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 34

2- (अ) श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य, ले0 बालगंगाधर तिलक, अनु0माधवराव सप्रे, पृ0, 675-676

2- (ब) श्रीमद्भगवद्गीता, टीकाकार जयदयाल गोयन्दका,पृ0187

3- अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 195

उदाहरण के लिए पुरूष जिस अंग से त्रिया का आलिंगन करता है, उन्हीं अंगों से पुत्री अथवा दुहिता को भेंटता है। मिलन और चुम्बन क्रिया के कारण कोई पाप-पुण्य नहीं लगता। ये क्रियाएँ पाप-पुण्य के कारण नहीं बनती। वह भाव ही पृथक्ता उत्पन्न करता है जिससे त्रिया प्रणय की अनुभूति करती है और पुत्री पितृ प्रेम को। कवि के शब्दों में -

"जाही अंग त्रिया संग लेटा। ताही अंग सुता कहँ भेंटा।।
तौ कछु पाप लग्यो नहिं जाना। उह कन्या उह त्रिय करि माना।।"[1]

दर्शन के क्षेत्र में लालदास द्वैतवादी होकर भी अद्वैत पर आस्था रखते हैं। इस प्रकार उनका सिद्धान्त द्वैताद्वैत प्रतीत होता है। रसिक साधना के भक्तों ने अपने को सखी, सहचरी, दासी, दास आदि भावपूर्ण सम्बंध रखकर ईश्वर का सामीप्य प्राप्त करके अद्वैत की अनुभूति की है। किन्तु वे विशुद्ध अद्वैत भाव नहीं रखते, जिसमें साधक की सत्ता ही नष्ट हो जाती है।

लालदास ने ब्रह्म, जीव, माया और जगत (सृष्टि प्रक्रिया) के सम्बंध में भी अपने दार्शनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किये हैं, जो अधिकांश में सांख्य और वेदांत से साम्य रखते हैं।

ब्रह्म के सम्बंध में लालदास की मान्यता अद्वैत वादी है। वे उसे सत्, चित्, आनन्द, अचल, अद्वैत, और अखण्ड मानते हैं। उनके शब्दों में स्वयं ज्योति स्वरूप ब्रह्म ब्रह्माण्ड में व्याप्त है -

"सतचित औ आनन्द अज अचल अद्वैत अखंड।
स्वयं ज्योति अक्रोय ब्रह्म लाल व्याप ब्रह्मंड।।"[2]

जगत की उत्पत्ति -

जगत की उत्पत्ति के सम्बंध में लालदास का दृष्टिकोण सांख्य

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 196
2- उपरिवत्, पृ० 194

और वेदांत दोनों को ही लेकर चलता है । एक ओर पुरूष- प्रकृति के संयोग से सृष्टि मानने के कारण उनका मत सांख्य के निकट है, तो दूसरी ओर पंचीकृत , अपंचीकृत विवेचन के कारण वे वेदांतवादी प्रतीत होते हैं ।

लालदास ने प्रकृति और पुरूष के संयोग से सृष्टि की उत्पत्ति मानी है तथा इस सृष्टि उद्भव को उन्होंने अनायास या अनिच्छापूर्वक कहा है। वैसे शैव दर्शन में सृष्टि को इच्छा का परिणाम कहा गया है । प्रसाद ने "सर्ग इच्छा का है परिणाम।"[1] कहकर इसी ओर संकेत किया है । संत साहित्य में भी ईश्वर की इच्छा को ही सर्वत्र सृष्टि के उद्भव का मूल कारण बताया गया है । यहाँ आश्चर्य होता है कि लालदास ने सृष्टि की सर्जना बिना इच्छा के ही बताई है -

"प्रकृति पुरूष तें जग भयौ बिनु इच्छा अनयास ।
दूरहिं ते रबि फटिक जिमि पावक लाल प्रकास ।।"[2]

सांख्य में प्रकृति और पुरूष के संयोग से सृष्टि मानी है । किन्तु वहाँ दोनों का प्रयोजन अंधे और लंगड़े के समान है । पुरूष के द्वारा प्रधान का दर्शन (भोग) होने के लिए और प्रधान के द्वारा पुरूष का कैवल्य सम्पन्न होने के लिए लंगड़े और अन्धे के समान दोनों का संयोग होता है और उसी से जगत की सृष्टि होती है।[3]

इस प्रकार कवि एक ओर तो सृष्टि की उत्पत्ति के सम्बंध में सांख्य को मानता है, दूसरी ओर देह की रचना में पंच तत्व वादी (पंचीकरण) सिद्धान्त को स्वीकार करता है । कहा जा सकता है कि सृष्टि की उत्पत्ति के सम्बंध में लालदास का दृष्टिकोण सांख्य और वेदांत दोनों ही

1- कामायनी, जयशंकर प्रसाद , श्रद्धा सर्ग ,

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित , पृ० 192

3- पुरूषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य ।
पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः ।।"
सांख्यकारिका, ईश्वर कृष्ण, का०सं० 21

दर्शनों को लेकर चलता है, क्यों कि पंचोकृत- अपंचोकृत विवेचन वेदांत से साम्य रखता है तो वहाँ 25 तत्व सांख्य से। कवि के शब्दों में -

"अमिले तत्व अपंचिकृत मिले पंचिकृत होत ।
सूक्ष्म स्थूल हैं देह के प्रकृत पचीस सब होत ।।"[1]

लालदास के अनुसार पंच तत्वों तथा प्रत्येक को पंच विकृतियों अथवा लिप्साओं से शरीर के समूह की रचना हुई है । शरीर के समूह से आशय यह है कि शरीर की विभिन्न इन्द्रियाँ इन्हीं तत्वों से बनी है । इस प्रकार मानव शरीर की सम्पूर्ण रचना का सूत्र दिया गया है । लालदास के अनुसार पंचोकृत विधान इस प्रकार है -

"सुनहु पचीस प्रकृति के नामा । माया रचित देह कैं कामा ।।
अस्थि मांस नस त्वचा जु केशा । ए पृथिवी तें पंच प्रवेसा ।।
रेत रक्त पित लार औ स्वेदा । ए हैं पंच नीर के भेदा ।।
आलस कांति क्षुधा तृष निद्रा। ए है तेजहि पंच उपद्रा ।।
धावन चलन संकोच प्रसारन । उत्तम पंच है वायुहि कारन ।।
कंठ उदर कटि हृदय सकासा । सीस पंचधा होत अकासा ।।
एइ परस्पर मिले निधाना । तब पंचीकृत होत विधाना ।।"[2]

लालदास ने पंच तत्वों के गुणों की भी विवेचना की है । कवि के शब्दों में-

"पृथिवी गंध वायु सपरस तेज रूप रस पानि।
शब्द अकाश ए पंच के लाल पंच गुनि जानि ।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 193

2- उपरिवत्, पृ० 194

3- उपरिवत्, पृ० 194

पंच तत्वों का पंचीकृत रूप

क्र०	तत्व		शरीरगत स्थिति	गुण
1-	पृथ्वी	1-	अस्थि	गंध
		2-	मांस	
		3-	नस	
		4-	त्वचा	
		5-	केश	
2-	नीर	6-	रेत	रस
		7-	रक्त	
		8-	पित्त	
		9-	लार	
		10-	स्वेद	
3-	पावक	11-	आलस्य	रूप
		12-	कांति	
		13-	क्षुधा	
		14-	तृष्णा	
		15-	निद्रा	
4-	वायु	16-	धावन	स्पर्श
		17-	चलन	
		18-	संकोच	
		19-	प्रसारन	
		20-	उत्तम	
5-	आकाश	21-	कण्ठ	शब्द
		22-	उदर	
		23-	कटि	
		24-	हृदय	
		25-	शीश	

लालदास ने इन्द्रियों को विषयभोग का साधन बताया है तथा देह को भोग का स्थान, मन और बुद्धि दोनों को भोक्ता तथा कर्म को कारण बताया है-

"विषय भोग साधन इंद्रिय देह भोग स्थान।
मन बुधि हैं दोउ भोक्ता कारण कर्महि जान ।।"[1]

लालदास आत्मा को चेतना और नित्य मानते हैं तथा जो जड़ और अनित्य है उसे अनात्मा मानते हैं । गौर, श्याम, स्थूल और कृश इसे वे अज्ञान कहते हैं । कवि के शब्दों में -

"जड़ अनित्य अन आत्मा ताहि आत्मा मान ।
गौर श्याम स्थूल कृश इहइ लाल अज्ञान ।।"[2]

ब्रह्म और जगत के विवेचन के पश्चात् लालदास ने अज्ञान या माया के भी स्वरूप का विवेचन किया है । लालदास 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या।' के सिद्धान्त को मानने वाले हैं । लालदास के ही शब्दों में -

"साँचा ब्रह्म झूठ है माया ।"[3]

लालदास के अनुसार अज्ञान या माया ही सत्य के आभासित होने में बाधक है जैसे शैवाल जल को ढक लेता है अथवा बादल सूर्य को, वैसे ही अज्ञान ज्ञान को आच्छादित कर लेता है । कवि के शब्दों में -

"जल सिवार सूरज घन छाये । तैसेइ ज्ञान अज्ञान छिपाये ।"[4]

वेदान्तसार में भी अज्ञान (माया) को ज्ञान विरोधी कहा गया है।[5]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 194

2- उपरिवत्, पृ0 194

3- उपरिवत्, पृ0 195

4- उपरिवत्, पृ0 195

5- "अज्ञानं तु सदसद्भ्याम् निर्वचनीयं त्रिगुणात्मकं ज्ञान विरोधि भावरूपं यत्किंचिदिति वदन्त्यहमज्ञ इत्याद्यनुभवात् देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम् इत्यादि श्रुतेश्च।"
वेदान्तसार, टीकाकार, रामशरण त्रिपाठी, पृ0 14

पुरूष और नारी की रचना के सम्बंध में लालदास का दार्शनिक दृष्टिकोण बड़े महत्व का है। क्योंकि वे एक और स्त्री और पुरूष को एक ही आत्मा के दो रूप स्वीकार करते हैं तो दूसरी और संसार के प्रत्येक स्त्री पुरूष को 'शिव' और 'शक्ति' का रूप बताते हैं। कवि सम्पूर्ण जगत को अर्द्धनारीश्वर के रूप में देखता है। तुलसी ने भी 'सियाराम मय सब जग जानी'[1] कह कर सम्पूर्ण जगत को सीता राम मय बताया है। लालदास ने इसे 'शिव' और 'शक्ति' मय कहा है। यद्यपि दोनों कवि विष्णु भक्त हैं, किन्तु दोनों की प्रस्तुति में प्रकार भेद स्पष्ट है। ऐसा प्रतीत होता है कि लालदास जगत को 'शिव शक्ति' मय कहकर शैव दर्शन के सूत्रों को विष्णु भक्ति में संग्रथित करना चाहते हैं।

लालदास के अनुसार पुरूष और स्त्री वस्तुत: दो पृथक जैवकीय रचना न होकर एक ही रचना के दो भिन्न परिदृश्य हैं। एक ही प्राण दो शरीरों में इस प्रकार मूर्त होता है जैसे उपवन में फूल और वायु में गन्ध। इसका संकेत 'अभिशाप्त शिला' के वर्षासर्ग में किया गया है।[2] वस्तुत: सम्पूर्ण सृष्टि अर्द्धनारीश्वर का ही रूप है।[3]

1- रामचरित मानस, तुलसी, बालकाण्ड,

2- "एक प्राण ही व्याप्त हुआ है दो शरीर में।
उपवन में ज्यों पुष्प गन्ध बहता समीर में।।"
अभिशाप्त शिला, डाँ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, वर्षासर्ग

3- "पुरूष और नारी आधे आधे ही मिलकर,
एक सृष्टि में पूर्णरूप साधे होते हैं,
यही अर्द्धनारीश्वर का रहस्य है भ्रमर,
रूप जगत में हम केवल आधे होते हैं,
एक पुरूष बैठा होता नारी के भीतर,
एक पुरूष के प्राणों में नारी होती है,
शिव में शक्ति शक्ति में शिव का रूप प्रतिष्ठित,
सृष्टि अर्द्धनारीश्वर अधिकारी होती है।"

उपरिवत्

मुक्ति के सम्बंध में लालदास की धारणा नितान्त मनोवैज्ञानिक और यथार्थवादी है। वे मुक्ति का सम्बंध पाताल, आकाश, स्वर्ग, जल-थल से नहीं मानते। उनके अनुसार आशाओं के नाश होने पर ही मुक्ति प्राप्त होती है-

"नहीं मुक्ति पाताल महिं नहीं मुक्ति आकास,
लाल मुक्ति जल थल नहीं मुक्ति आस भये नास।"[1]

जगत के सम्बंध में लालदास की धारणाएं परम्परागत ही है, यथा गन्धर्वनगर मृगतृष्णा, लाक्षामृग, आकाश पुष्प या इन्द्रजाल। मिथ्या तत्व के कारण जगत सत्य प्रतीत होता है। रज्जु में सर्प, सीप में रजत्व का आभास होता है। लालदास के अनुसार भय सर्वत्र व्याप्त है, किन्तु पण्डित जन सदैव निर्भीक होते हैं। ब्रह्म ज्ञान एक दावाग्नि है। यह जब जलती है तब सम्पूर्ण कर्म और भ्रमों को विनष्ट कर देती है। ज्ञान और आनन्द की लहर में 'मैं' और 'तू' बन्धन को तोड़ देती है। ज्ञान की कसौटी लालदास निर्भीकता और लज्जा शून्यता को ही मानते हैं -

"आया ज्ञान जानिये जबही। लज्जा भय उपजै नहिं कबहीं।"[2]

लालदास का सांसारिक अनित्यतावादी सिद्धान्त परम्परागत ही है। उनके अनुसार रूप-यौवन, धन-धान्य सभी अनित्य हैं, राम ही एक मात्र नित्य हैं -

"रूप अनित जौवन अनित लाल अनित धन धाम।
देह अनित्त सुख दुख अनित नित्य एक सत राम।।"[3]

भोग के सम्बंध में लालदास की यह मान्यता है कि भोग सुखदायी होते हैं, किन्तु भोगों से हमारा विकास बाधित नहीं होना चाहिए और न मन को भोगों

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 196
2- उपरिवत्, पृ0 197
3- उपरिवत्, पृ0 246

के प्रति बन्दी बना लेना चाहिए । मधुकर को रसिक वृत्ति तो उचित है किन्तु रस के लोभ में कमल कोष में भ्रमर का बन्दी हो जाना उचित नहीं है-

"अटकि न रहै भोग सुख पाई । मधुकर जिमि रस लेत बंधाई ।"[1]

महाकवि लालदास एक उन्मुक्त विचारक हैं । एक सीमा तक तो वे दर्शन से बँधे हैं और उस सीमा के बाद मुक्त। इसलिए वे मानते हैं कि सुख और दु:ख की एक सीमा है, पाप और पुण्य की एक सीमा है, किन्तु उस सीमा के आगे यह सब मिथ्या है । इस प्रकार लालदास मर्यादावादी होते हुए भी नैतिकता के अंकुश में जकड़े हुए नहीं हैं । सांख्य वेदांत के समर्थक होते हुए भी अदृष्ट और नियति को भी स्वीकार करते हैं । उदाहरण के लिए-

"आइ मिलै संशय नहीं भावी बस कहै लाल।"[2]

वे कर्म के अस्तित्व को सर्वोपरि नहीं मानते ,भावी के अनुसार ही घटना चक्र घटित होता है । उदाहरण के लिए कहाँ तिरहुति और कहाँ लंका।[3] वहाँ तक पहुँचने का मार्ग भी अत्यन्त जटिल है,किन्तु दैवयोग वश एक कन्या जो मंजूषा में बंद थी, जिसे मंदोदरी के परामर्श से समुद्र में फेंक दिया गया था , वही सीता के रूप में प्रगट हुई । इसे विधि का विधान ही कहना चाहिए। लालदास दैवी घटनाओं पर किसी का वश नहीं मानते , तथा कोई भी वस्तु दैवयोग में असम्भव नहीं होती । सम्भावनाओं के विपरीत भी दैववशात् घटनाचक्र मोड़ ले लेता है ।

इस प्रकार लालदास का दार्शनिक पक्ष अत्यन्त समृद्ध तथा महाकवि एवं उच्च संत कोटि का है ।

1- अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 197

2- उपरिवत्, पृ0 286

3- "कहँ तिरहुति लंका कहाँ कहाँ राह केहि जानि ।
बिन बाहन पायन्ह बिना भावी राखी आनि ।
उपरिवत्, पृ0

नायिका भेद और लालदास -

नायक -नायिका भेद काव्य शास्त्र के एक अंग उपांग के रूप में संस्कृत वाङ्मय में प्राप्त होता है । यह अवश्य है कि उसका विस्तृत वर्णन नहीं प्राप्त होता ।" भरत से लेकर भानु मिश्र से पूर्व तक लगभग 1500 वर्षों में न तो नायक-नायिका भेदोपभेद का सूक्ष्म विवेचन किया गया और न ही इस विषय को एक स्वतन्त्र स्वीकृति दी गई[1] ।" नायक-नायिका भेद निरूपण को परम्परा का मूल श्रोत कामशास्त्रीय ग्रंथों से पुष्ट होता है। स्वयं भरत ने इसी आधार को स्वीकार किया है[2]। रूद्रट,भोज, केशव आदि सभी आचार्यों के नायक-नायिका निरूपण में ~~कामशास्त्र~~ कामशास्त्रीय ग्रंथों का प्रभाव परिलक्षित होता है[3]। संस्कृत में इस विषय पर कामशास्त्र, काव्य-शास्त्र और नाट्यशास्त्र के ग्रंथों में सामग्री मिलती है । कामशास्त्रीय ग्रंथों में दत्तक, वात्स्यायन, कल्याणमल्ल, कक्कोक, मीनानाथ आदि के नाम प्रमुख हैं । नाट्यशास्त्र को परम्परा में भरत का नाट्यशास्त्र, धनंजय का दशरूपक, सागरनंदी का नाटक लक्षण क रत्नकोष और रामचन्द्र गुणचन्द्र का नाट्यदर्पण आदि प्रमुख हैं । काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में रूद्र भट्ट, अग्नि-पुराण, वाग्भट्ट प्रथम , हेमचन्द्र, शारदातनय , विद्यानाथ, शिगभूपाल वाग्भट्ट द्वितीय, केशव मिश्र, भानु मिश्र कृत श्रृंगार मंजरी, रूप गोस्वामी कृत उज्जवल नीलमणि तथा अकबरशाह कृत श्रृंगार मंजरी व चंददास कृत श्रृंगार-सागर में इस विषय को अपना विवेच्य बनाया गया है ।

महाकवि लालदास का आचार्यत्व या बहुज्ञता का क्षेत्र बहुत विस्तृत है । उनकी सूक्ष्म दृष्टि कुछ सामाजिक, साहित्यिक एवं भक्तिगत प्रसंगों तक ही सीमित नहीं रह जाती वरन् नायिका भेद जैसे रीतिकालीन विषय तक उसकी दृष्टि से अछूते नहीं रहे। रामकथा होते हुए भी जहाँ कहीं

1- हिन्दी रीतिपरम्परा के प्रमुख आचार्य, डॉ0 सत्यदेव चौधरी,पृ0 390

2- नाट्यशास्त्र,भरत, 24/41-42

3- केशव का आचार्यत्व, डॉ0 विजय पाल सिंह ,पृ0 192

भी थोड़ा सा भी अवसर मिला, लालदास ने नायिका भेद सम्बन्धी अपने ज्ञान को प्रकाशित किया है ।

लालदास ने जाति के आधार पर समस्त नायिकाओं को चार भागों में विभाजित किया है । कवि के शब्दों में-

"कोउ पदमिनि कोउ चित्रनी राजी । कोउ संखनी कोउ करनि विराजी।"[1]

जाति के आधार पर नायिका भेद का रेखाचित्र इस प्रकार है-

जात्यनुसार नायिका भेद
- 1 ----- पद्मिनी
- 2 ----- चित्रिणी
- 3 ----- शंखिनी
- 4 ----- हस्तिनी

लालदास ने नायिकाओं के चार भेद करके चारों के लक्षण भी विवेचित किये हैं, जो परम्परित रीति ग्रंथों से पुष्ट हैं।

पद्मिनी -

पद्मिनी के सम्बंध में कामशास्त्रीय ग्रंथों एवं हिन्दी के लक्षण ग्रंथो में इसके लक्षण, गुण आदि दिये गये हैं।[2] लालदास के अनुसार जो सुवासित अंगों वाली , गौरवर्णा , रूपयौवन से युक्त , उज्जवल वस्त्र तथा निर्मल एवं

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 224

2- अ- केशव ग्रंथावली 1, पृ० 8 ,छं० 3

ब- जायसी ग्रंथावली, पृ० 208

स- रस विलास, देव, 5,7,9,11

द- भवानी विलास, देव, 21,25,28, 31

व- रसपियूष निधि, सोमनाथ, 8/13

र- श्रृंगार सागर , चंददास, छं० 13

शुभ अंगों वाली होती है, जिसके चारों ओर पराग का पान करते हुए भ्रमर मंडराते हैं, वह पद्मिनी नायिका है । इसके अतिरिक्त वह लज्जाशील, मृदुहास करने वाली, पूर्ण मासी के चंद्र के समान प्रकाश को विकीर्ण करने वाली, प्रिय से अनुराग रखने वाली, गायन वादन तथा नृत्य तीनों कलाओं में निपुण होता है । लालदास के शब्दों में -

"पदुमिनि अंग सुगंध अनूपा । कनक वरन लघु तन अति रूपा ।
उज्ज्वल वसन निर्मल सुभ अङ्गा । पियत सुवास भ्रमर फिरै संगा ।।"

x x x

छोटे मुष लघु देत प्रकासी । मनहु चन्द्रमा पूरनमासी ।।
सुबुधि उदार उदार पुन्य सुषदाई । पिय सो प्रेम प्रीति मनभाई।।"[1]

चित्रिणी-

चित्रिणी नायिका के लक्षण रीतिशास्त्रीय ग्रंथों में बताए गये हैं।[2] लालदास ने विचित्र चित्रों की संरचना करने वाली को चित्रिणी कहा है। कवि के शब्दों में -

"चित्र विचित्र अनेक बनावति । सोइ चित्रनी तिय नाम कहावति।।"[3]

शंखिनी -

लक्षण ग्रंथों में पद्मिनी और चित्रिणी नायिकाओं से शंखिनी के लक्षण भिन्न बताये गये है।[4] लालदास के अनुसार क्रोध और कुटिलता से युक्त,

---

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 224
2- अ- रसिक प्रिया, केशवदास
   ब- रसपियूषनिधि, सोमनाथ, 8/15
   स- रससारांश, भिखारीदास, पृ0 154
   द- श्रृंगार सागर, चंददास, छं016
3- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 225
4- अ- केशवग्रंथावली खं0 1, पृ0 9
   ब- कामसूत्र, 2/1/2
   स- रसपियूषनिधि, सोमनाथ, 8/17
   द- रससारांश, दास, 154
   य- श्रृंगार सागर, चंददास, छं018

दया, दान एवं शील से विमुख , निर्लज्ज और निशंक , मलिन रहने वाली, अशुभ विचारों को मन में लाने वाली , अनाचार और निद्रा के आधिक्य वाली स्त्री शंखिनी नायिका कहलाती है। उदाहरण के लिए-

"संषनि कोप कपट कुटिलाई । दया दान नहि सील समाई ।।
निलज निसंक न धीरज आनै । क्षार गंध नख सौ रुचि मानै ।।
रहति मलीन असुचि मन भाई । अनाचार निद्रा अधिकाई ।।
निलज सलोम शरीर बषानो । सोइ बनिता संषनि करि जानो ।।"[1]

हस्तिनी -

लालदास के अनुसार स्थूल चरण , बाहु, अधर, पयोधर एवं मुखवाली , मंदगमन करने वाली, भूरे केशों एवं रोमयुक्त शरीर वाली ,गम्भीर शब्द वाली, चंचल चित्त वाली , बहु अशन (अधिक भोजन करने वाली) हस्तिनी नायिका कहलाती है । हस्तिनी नायिका की प्रमुख विशेषताएँ/लक्षण ग्रंथों में भी बतायी गयी हैं।[2] लालदास जी द्वारा हस्तिनी नायिका के लक्षणों का विवेचन इस प्रकार किया गया है-

"हस्तनी चरन भुजा मुष भारी । चलति मन्द नवावति नारी ।।
अंगुरी अधर पयोधर थूला । पीन सरीर उदर कटि मूला ।।
भूरे केस सलोम सरीरा । स्वेद सिरज मद सबद गंभीरा ।।
चित चंचल भोजन अधिकाई । हस्तनी ताहि जानिए भाई ।।"[3]

लालदास का जाति के अनुसार नायिका भेद केशव से मिलता है किन्तु केशव ने अभिसारिका के अंतर्गत स्वकीया, परकीया, सामान्या, भेद स्वीकार किया है।[4]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 225
2- अ- केशव ग्रंथावली खं0 1 ,पृ0 9
ब- रसपियूषनिधि, सोमनाथ, 8/19
स- श्रृंगार सागर , चंददास, छं016
3- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित पृ0 225
4- केशव का आचार्यत्व, डॉ0 विजय पाल सिंह , पृ0 227

लालदास ने आयु के आधार पर नायिका भेद का वर्गीकरण नवीन प्रकार से किया है। उदाहरण के लिए-

"कन्या वरष सात लगु जानो । पुनि गौरी तेरह लगु मानी।।
बाला वरष बीस लगु बरनो । जानहु नारि तीस लगु तरुनी।।
प्रौढ़ा होई वरष चालीसा । वरष पचास भई वृद्ध बीसा ।।"[1]

आयु के आधार पर नायिका भेद का रेखाचित्र इस प्रकार है-

आयु के आधार पर नायिका भेद -	1-	कन्या	(6 वर्ष तक)
	2-	गौरी	(13 वर्ष तक)
	3-	बाला	(20 वर्ष तक)
	4-	तरुणी	(30 वर्ष तक)
	5-	प्रौढ़ा	(40 वर्ष तक)
	6-	वृद्धा	(50 वर्ष तक)

आचार्य भरत मुनि के अनुसार संयोग औरवियोग के आधार पर नायिकाओं के आठ भेद स्वीकृत हैं- 1- वासक सज्जा 2- विरहोत्कंठिता 3- स्वाधीनपतिका 4- कलहंतरिता 5- खंडिता 6 - विप्रलब्धा 7- प्रोषित भर्तृका 8- अभिसारिका।[2]
लालदास ने भी भरत के अनुसार आठ भेद किये हैं। कवि के शब्दों में-

"प्रोषितपतिका खंडिता कलहंतरिका नाम ।
विप्रलब्धा उतकंठिता वासकसज्या नाम ।।
एक स्वाधीना भर्तिका पुनि अभिसारिका तोय ।
अष्टनायका लाल कहि कही कवीन्द्र रमनीय ।।"[3]

1- अवधविलास , लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाददीक्षित , पृ0 225
2- भरत का नाट्यशास्त्र, 24/203
3- पा0 टि0 1 के समान, पृ0 227

कवि परम्परा के अनुसार नायिका भेद का वर्गीकरण इस प्रकार है-

लालदास के नायिका भेद के उपरोक्त वर्गीकरण का क्रम और नाम भरत के नाट्यशास्त्र में वर्गीकृत क्रम व नामों से भिन्न है । उदाहरण के लिए भरत ने प्रोषित भतृका नाम दिया है, तो लालदास ने उसे प्रोषित पतिका कहा है । इसी तरह भरत ने विरहोत्कंठिता नामक भेद बताया है जिसे लालदास ने उत्कंठिता कहा है ।

लालदास ने उपरोक्त आठों नायिकाओं के संक्षेप में लक्षण भी प्रस्तुत किये हैं जो परम्परित ग्रंथों में उपलब्ध हो जाते हैं। उदाहरण के लिए-

"पाइ सोहाग प्रमुदित सयानी । सा स्वाधीन पत्रिका जानी ।।
हर्षित मन श्रृंगार बनाई । जहँ पिय होइ तहाँ चलि जाई ।।
अथवा पुरुषहि बोलि पठावै । सोइ अभिसारिका नारि कहावै ।।
पिय सों प्रथम कलह करि लीनी । फिरि पछिताइ मैं भली न कीनी ।।
जतन मिलाइ मिलै पुनि जाई । कलहंतरिता बनिता गाई ।।

x x x

वहै मिलन पिय कुशल मनावै । उक्ता वाम नाम कहि आवै ।।

x x x

रति रस देखि प्रात पुन आई । ताहि खंडिता बामा गाई ।।
जाके पति परदेस सिधाए । जरै विरह दुख सुख बिसराए।।
मन मलोन छोनत न लहिए । प्रोषितपतिका बनिता कहिए ।।
पान फुलेल सेज रचि राखै । सखो सों रति पिय के गुन भाखै ।।
चितवत पन्थ चपल दृग सोहो । वासकसज्या जानहु ओहो ।।
जाहि जहाँ पिय बोलिपठावै । आपु कहुँ उठि जाइ न पावै ।।
होइ उदास निरास बिचारो । जानहु विप्रलब्धा सो नारो ।।"[1]

लालदास ने नायिका भेद निरूपण के लिए रसमंजरो[2] का संकेत किया है और भानु दत्त कृत रसमंजरो रोतिकालोन आचार्यों का हो नहीं भक्तियुगोन आचार्य कवियों का भो प्रेरक ग्रंथ रहा है ।

लालदास का जाति के अनुसार नायिका भेद तो केशव से मिलता है किन्तु आदि नायिका भेद के सम्बंध में लालदास ने तीन भेद बताये हैं, जबकि केशव ने स्वकोया और परकोया दो हो भेद स्वोकार किये हैं । कवि के शब्दों में -

"रचो विधाता वाम आदि तोनि है नायका ।
स्वकोया प्रक्रिया नाम लाल एक सामान्तिा ।।"[3]

केशव ने सामान्या अभिसारिका को अवस्थानुसार अभिसारिका के भेद के अंतर्गत रखा है, किन्तु लालदास ने इसे एक स्वतन्त्र कोटि प्रदान को है । लालदास ने स्वकाया के जिन प्रमुख भेदों का वर्णन किया है, वह केशव के अनुकूल है। उदाहरण के लिए -

"स्वकोया विधि तोनि बखानो । मुग्धा मध्या प्रौढ़ा जानो ।।
x x x x
स्वकिया के त्रय भेद गंभीरा । धोर अधीरा धोरा धीरा ।।
x x x

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दोक्षित, पृ० 227-28
2- "लक्षण हैं रसमंजरो ते तहँ लोजेहु जानि ।।"
उपरिवत्, पृ० 228

लालदास के अनुसार आदि नायिका भेद का वर्गीकरण

आदि नायिका भेद

- स्वकीया
- परकीया
- सामान्या

(अ) स्वकीया

- मुग्धा (बालवधू)
- मध्या (सयानी)
- प्रौढ़ा (पूर्ण यौवनवती)

परकीया

- मुदिता
- गुप्ता
- विदग्धा
- लक्षिता
- कुलटा
- अनुशयना

(ब)

- धीरा (धैर्यशील)
- अधीरा (अधैर्यशील)
- धीरा-धीरा (धैर्य अधैर्यशील)

सामान्या

- गणिका
  - वक्रोक्ति
  - गर्विता
  - मानवती
  - रूपवती
  - प्रेमगर्विता
- दासी
  - वक्रोक्ति
  - गर्विता
  - मानवती
  - रूपवती
  - प्रेमगर्विता

(स)

- ज्ञात यौवना
  - ऊढ़ा (ब्याही)
  - अनूढ़ा (अब्याही)
- अज्ञात यौवना
  - ऊढ़ा (ब्याही)
  - अनूढ़ा (अब्याही)

स्वकिया दोइ भाँतिविख्याता । ज्ञाता जोवन एक अज्ञाता।।

x x x
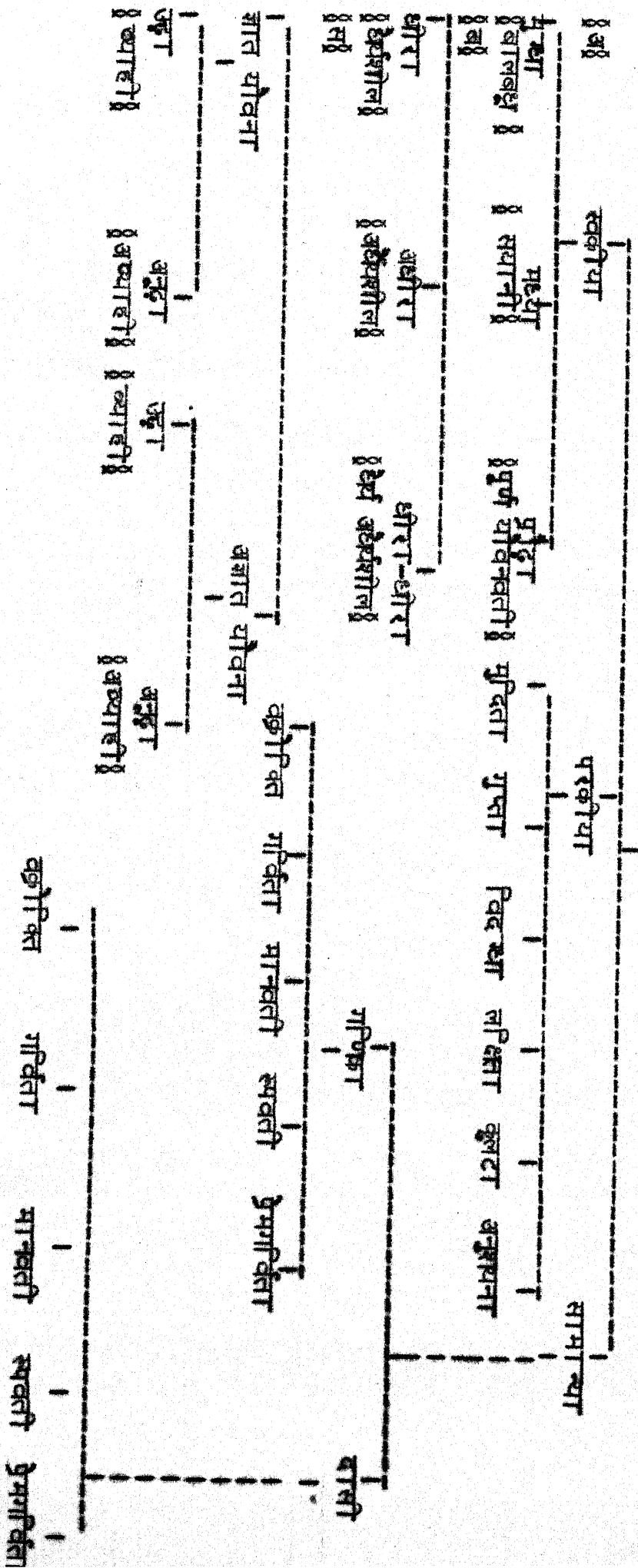
होत है भेद दुहुन के दोई । एक अनूढ़ा ऊढ़ा होई ।।"[1]

परकोया को कवि ने छे भागों में वर्गीकृत किया है यथा-

"परिकोया के भेद षट मुदिता गुप्ता जान ।

एक विदग्धा लक्षिता कुलटा अनुसयान ।।"[2]

नायिका भेद को प्राय: दो परम्पराएँ साहित्य में प्रचलित है । एक प्राचीन आचार्यों की जो विश्वनाथ तक चलती है, दूसरी नवीन आचार्यों को जो भानुमिश्र से प्रारंभ होती है । लालदास ने वैसे तो भानुदत्त की परम्परा का अनुसरण किया है किन्तु कहीं कहीं वे मिश्र परम्परा के आचार्य प्रतीत होते हैं । अर्थात् एक नवीन प्रकार का वर्गीकरण किया है । इस क्षेत्र में लालदास की प्रमुख उपलब्धियाँ इस प्रकार है -

अ- लालदास ने अवस्थानुसार नायिका भेद का वर्गीकरण स्वीकार किया है।[3]

ब- कवि ने काव्य परम्परा के अनुसार नायिका भेद किया है।[4]

स- एक नये प्रकार के वर्गीकरण को आदि नायिका भेद को संज्ञा दी है।[5]

बहुत संभव है कि कवि आदि नायिका भेद कहकर इस ओर संकेत करना चाहता हो कि यह परम्परा प्राचीन है । इसीप्रकार कवि परम्परा द्वारा स्वीकृत वर्गीकरण को देखकर कवि ने नायिका भेद को एक व्यावहारिक आधार भी प्रदान किया है । नायिका भेद का वर्गीकरण यद्यपि विभिन्न आचार्यों के द्वारा वर्गीकृत भेदों और उपभेदों में प्राप्त हो जाता है, किन्तु उनके वर्गीकरण में एक ओर अतिव्याप्ति से बचाकर संक्षिप्तता का निर्वाह किया गया है तथा दूसरी ओर प्रमुख आचार्यों द्वारा वर्गीकृत परम्पराओं को भी भुक्त किया गया है।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 226
2- उपरिवत्, पृ० 227
3- उपरिवत्, पृ० 225
4- उपरिवत, पृ० 227
5- उपरिवत, पृ० 226

भक्ति निरूपक आचार्यत्व -

अध्यात्म रामायण में भक्ति को नव विधा माना गया है।[1] भागवत में इसे नव लक्षणा कहा गया है।[2] तुलसी के मानस में इसे नवधा[3] तथा चंददास को शिव सिद्धि सारंगाध्यावली में इसे नूतन नवधा को संज्ञा प्रदान को गई है।[4] शिवपुराण में भी नवधा का निरूपण भागवत से साम्य रखता है।[5] लालदास भी नवधा भक्ति को परम्परा का अनुगमन करते हैं।

लालदास रसिक सम्प्रदाय में दीक्षित संत एवं भक्त हैं। आपकी भक्ति रागानुगा[6] भक्ति प्रतीत होती है। कवि ने नवधा भक्ति का जो निरूपण किया है, वह भागवत के अनुकूल है । उदाहरण के लिए-

"नवधा भक्ति के नव हैं प्रकारा । जाके करत मिटत संसारा ।।
जन्म कर्म हरि जू के नाना । श्रवन सुनै नित कथा पुराना ।।
कीरतन गुन कीरति भावै । सुमिरन हरि मूरति मन राखै ।।
सेवन चरण करै नित पूजा । प्रतिमा रामहिं भेद न दूजा ।।
अर्चन मन्दिर रचना करई । केशरि चंदन हरि कहँ भरई ।।
बन्दन भक्ति जाहि को नामा।बारम्बार जु करै प्रनामा ।।
मथुरा आदि धाम है जेते । दासि भक्त देखै जाइ तेते ।।
हरि के काज टहल करै जोई । दासा तन कहियत है सोई ।।

1- अध्यात्म रामायण , आरण्यकाण्ड, 10/27
2- श्रीमद्भागवत, 7/5/23
"श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणम् पाद सेवनम् ।
अर्चनं बन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम् ।।"
3- रामचरित मानस, तुलसी
4- शिव सिद्धि सारंगाध्यावली, चंददास , ह0लि0प्रति,चं0सा0शो0सं0बाँदा (नवधानिरूपण के अन्तर्गत दो0 84 से 99 तक)
5- शिवपुराण ,2/2/23/22/23
6- "राग रंग रति राम सौं।"
अवधविलास, लालदास, सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 3

प्रभु के संग निरंतर रहिये । सखा भक्ति ताहो सौं कहिये ।।
तन मन धन हरि जु कौं देई । भक्ति निवेदन कहियतु एई ।। "[1]

उपरोक्त नवधा भक्ति के अतिरिक्त लालदास ने दसवीं प्रेम भक्ति' को भी स्वीकार किया है । प्रेम लक्षणा भक्ति का चरमोत्कर्ष दाम्पत्य भावना में है। यह रसिकोपासना के सर्वथा अनुकूल है । लालदास प्रेमभक्ति का स्रोत बल्लभाचार्य से न मानकर शुकदेव से मानते हैं । उदाहरण के लिए-

"ए नव भक्ति नेम महि राखा । दशईं प्रेम भक्ति शुक भाषा ।। "[2]

लालदास को भक्ति भक्त को बिना किसी प्रयत्न के हो मुक्ति प्रदान कर देने वालो है । कवि ने इसे धेनु और बछड़े के दृष्टान्त से अभिव्यक्त किया है-

"जैसे काहूँ धेनु भुलावा । वच्छल दूध पीव संग आवा ।।
तैसे हृदय भक्ति जब आई । मुक्ति ज्ञान बैठे सब पाई ।। "[3]

लालदास ने भक्त के वेश में किये गये पापाचार को भी निर्दोष माना है। यह कवि को भक्ति परक अनन्यताहो है-

"भक्त वेष धरि पाप जु करई । ताको दोष कह्यौ नहि परई ।। "[4]

लालदास ने भक्तों को चार श्रेणियाँ स्वीकार को है-

1- आरत 2- जिज्ञासु 3- अर्थी 4- ज्ञानी

कवि के शब्दों में -

"चारि विधा मोकहूँ भजत जना सुकृती देव ।।
आरत जिज्ञासु अर्थी ज्ञानी लाल विशेष ।। "[5]

1- अवधविलास, लालदास० सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दोक्षित, पृ० 13
2- उपरिवत्, पृ० 13
3- उपरिवत्, पृ० 14
4- उपरिवत्,
5- उपरिवत्, 97

लालदास द्वारा भक्तों के वर्गीकरण को जो श्रेणियां बतायी गई है वह गीता[1] से प्रभावित है।

लालदास ने त्रिगुण के आधार पर भी भक्तों का त्रिविध वर्गीकरण किया है। कवि के शब्दों में -

"भक्त हैं तीन प्रकार तमो रजो गुन सात्विको।"[2]

त्रिगुण के आधार पर भक्तों के वर्गीकरण का रेखाचित्र इस प्रकार दिया जा सकता है -

	गुण		भक्त
1-	तम	---------------------->	तमो
2-	रज	---------------------->	रजो
3-	सत्व	---------------------->	सात्विको

लालदास ने भक्ति के क्षेत्र में धर्म के अन्तर्गत दान का महत्व भी प्रतिपादित किया है। दान धर्म का ही विषय नहीं है। चंददास[3] ने दान को नवधा भक्ति के अन्तर्गत चौथी भक्ति के रूप में स्वीकृति दी है। लालदास के अनुसार आर्थिक सम्पन्नता न होने पर भी मानसिक भक्ति ही अपरिमित फल प्रदान करता है।[4] लालदास ने ज्ञान और भक्ति को दीप और मणि को संज्ञा प्रदान की है। उदाहरण के लिए -

"ज्ञान दीप है भक्ति मनि उभय प्रकासकराहि।

1- "चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।।"
श्रीमद्भगवद्गीता -7/16

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 98

3- "चौथी भक्ति दान सुनि धीरा। यथा कर्ण बलि विरुद शरीरा।।"
शिव सारंगाध्यावली, चंददास ह०लि०प्रति०सं० सा०शो०सं० (नवधा प्रकरण के अन्तर्गत)

4- पूर्व दी के समान, पृ०

विषय पवन दीपक बुझै मनि को कछु भय नाहिं ।।"[1]

भक्ति को ज्ञान से श्रेष्ठ बताने वाले लालदास ने एक नये रूपक की रचना की है। जिसमें ज्ञान को 'पुरुष' और भक्ति को 'त्रिय' तथा माया को 'गणिका' की संज्ञा दी है -

"ज्ञान पुरुष अरु भक्ति त्रिय माया गनिका भाइ ।
त्रिय को त्रिय मोहै कहा पुरुषहिं देत बिगाइ ।।"[2]

अपने पक्ष के समर्थन में भले ही लालदास को भक्ति को ज्ञान रूपी पुरुष की स्त्री कहना पड़ा हो, किन्तु अपने उद्देश्य में वे अडिग दिखाई पड़ते हैं ।

लालदास ने रामोपासना की रसिक धारा में दीक्षित होकर राम को विभिन्न विग्रहों में अभेद प्रदान किया है तथा उन्हें विभिन्न रूपों में अभेद रूप ही स्वीकार है तभी वे राम, कृष्ण, गोपाल, माधव, मुरारी, सीतापति, रघुबर , वासुदेव, आदि नामों का समीकरण करते हैं। कवि के शब्दों में -

"राम कृष्ण गोबिन्द गुपाला । निसदिन जपत रहत लिए माला।।
माधव मधुसूदन जु मुरारी । सीतापति रघुबर अवहारी।।"[3]

लालदास ने राम, कृष्ण, गोबिन्द , गोपाल, सीतापति, रघुबर , बासुदेव, विश्वेश्वर , नारायण, हरि, माधव, मधुसूदन, मुरारी, के विविधनामों को अभिन्नता प्रदान करके सांस्कृतिक समन्वय का संकेत किया है।[4] वंददास ने भी अभेद रूप में सांस्कृतिक समन्वय पर बल दिया है।[5]

1- अवधविलास लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 14

2- उपरिवत्, पृ०

3- उपरिवत्, पृ० 28

4- उपरिवत्, सम्पा० टि० , पृ० 28

5- "नारायण निर्गुण जगतारन । नर हर हरी हरी भवहारन ।
कृष्ण कष्ण जगदीश मुरारी । राम राम रघुकुल अधिकारी ।
माधव मुकुन्द मनोहर श्यामं । सीतारमण श्याम हरि रामं ।"
शिवसिद्धसारंगी, वंददास, हस्त० वंशी०सं० प्रति

लालदास के अनुसार भक्ति का स्वरूप अन्तर्गत ही होता है। भक्ति का लक्षण बताते हुये कवि ने उसमें निरंगता कागुण आवश्यक बताया है और उसे प्रेम स्वरूपा कहा है। इस विरतन्ता, अंतरंगता और प्रेम रूपता से अगम अगोचर मूर्त हो जाता है। कवि के शब्दों में -

"अन्तरगत कति भक्ति रस देखि निरंतर लाल।
अगम अगोचर प्रेम बस प्रगटत निकट गोपाल।।"[1]

इस प्रकार लालदास का उद्देश्य अपने आराध्य के प्रति भक्ति -भाव प्रदर्शित करना था न कि भक्ति सम्बन्धी आचार्यत्व का प्रदर्शन।

ज्योतिष और लालदास -

महाकवि लालदास ज्योतिर्विज्ञान के भी सफल आचार्य हुए हैं। 'अवधविलास' में ग्रह-नक्षत्रों के फलाफलों का विस्तृत वर्णन कवि के ज्योतिर्विज्ञान विद् होने का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

लालदास ने रामजन्म के संदर्भ में अपने ज्योतिष विषयक ज्ञान को प्रकाशित किया है। सर्वप्रथम कवि ने राशि में पड़े हुए ऊँचे और नीचे ग्रहों की स्थितियाँ बताई हैं। कवि के अनुसार मेष राशि कासूर्य, वृष काचन्द्र, मकर का कुज, कन्या का बुध, कर्क का गुरू, मीन का शुक्र, तुला का शनि, मिथुन के राहु केतु उच्च के ग्रह हैं। लालदास के शब्दों में -

"ऊँच नीच शुभ कहत हौं सोई। ग्रह जस पड़े राशिगत होई।।
सूरज ऊँच मेष के बरना। वृष के चंद्र मकर कुज करना।।
बुध कन्या गुरु कर्कहि जानें। शुक्र मीन शनि तुला बखानें।।
राहु केतु दोउ मिथुनहि ऊँचे। या विधि ए नव ग्रह भए ऊँचे।।"[2]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 69

2- उपरिवत्, पृ० 249

लालदास के उपर्युक्त कथन की पुष्टि ज्योतिष् के प्रामाणिक ग्रंथ 'जातक परिजात' से हो जाती है[1] ।

लालदास ने न केवल ऊँचे और नीचे ग्रहों की स्थितियाँ ही बताई है, वरन् स्वग्रही ग्रहों का विवेचन भी प्रस्तुत किया है अर्थात् कौन सा ग्रह किस राशि का स्वामी होता है । लालदास के अनुसार सिंह राशि का सूर्य, कर्क का चन्द्र, मेष और वृश्चिक का मंगल, मिथुन और कन्या का बुध, मीन और धनु का गुरू, वृष और तुला का शुक्र, मकर और कुम्भ का स्वामी शनि होता है । उदाहरण के लिए -

"सुनहु स्वगृही होत हैं जैसे । रासिहि मिलत कहत हौं तैसे ।।
सूरज सिंह कर्क के चंदा । मंगल मेष वृश्चिक सुष कंदा ।।
बुद्ध मिथुन कन्या के राषे । गुरू मीन औ धन के भाषे ।।
बृष अरू तुला शुक्र जो कोई । मकर कुम्भ - शनि स्वयं ग्रह सोई ।।"[2]

'जातक परिजात' में राशियों के स्वामियों का विवरण इसी प्रकार है । मात्र क्रम में अन्तर दृष्टिगत होता है[3] ।

लालदास ने राशिगत ग्रहों की उच्च -निम्न स्थितियों का भी वर्णन किया है, यथा - तुला राशि का सूर्य, वृश्चिक का चन्द्र, कर्क का कुज, मीन का बुध, मकर का वृहस्पति, नीच का होता है । कन्या का शुक्र और मेष का शनि बीच का होता है अर्थात् इसकी स्थिति न उच्च की होती है और न नीच की, किन्तु धनु राशि के राहु और केतु दोनों ही नीच के होते हैं[4] ।

1- "मेषो वृषो मकरषष्ठ कुलीरमीना: ।
तौली च तुङ्गभवनानि तदस्तनीचा: ।।
जातक परिजात: ,श्री दैवज्ञवैद्यनाथ विरचित, पृ0 32

2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ0249

3- "धराजशुक्रज्ञशशीन सौम्यसितारजीवार्कजमन्दजीवा: ।
क्रमेण मेषादिषु राशिनाथस्तदंशनाथश्चेति वदन्ति संत: ।।
जातकपरिजात श्री दैवज्ञवैद्यनाथविरचित प्रथम भाग:,पृ0 29

4- पा0टि0 दो के समान

लालदास के अनुसार सूर्य ,चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि, राहु, केतु, मंगल , गुरु , इन नौ ग्रहों की स्थिति से ही व्यक्ति सुखात्मक और दुखात्मक स्थितियों को प्राप्त करता है-

"जन्म मरण जीवन जरा नाम रूप ग्रह भाग ।
लाल राम को कछु नहीं देह धरे गुण लाग ।।"[1]

ऋतु विशेष में उत्पन्न प्राणी किन गुणों से युक्त होता है, इसका विवेचन भी लालदास ने किया है, यथा वसंत ऋतु में जन्म लेने वाला व्यक्ति धर्मनिष्ठ, लावण्ययुक्त , कीर्तिवान, तप, तेज एवं ज्ञान से युक्त होता है । चैत्रमास में जन्म ग्रहण करने वाला निष्ठुर एवं संदिग्ध प्रकृति का होता है।शुक्ल पक्ष का जन्म सुखकारी होता है । कवि के शब्दों में -

"रितु बसंत फल कहत बखानी । जन्मत कौउक धर्मरत प्रानी ।।
लावनि जुत कीरति आनंदा । तप अरु तेज ज्ञान गुन कंदा ।।
मास चैत फल सुनहु जो पावै । निठुर संदेह विदेश भ्रमावै ।।
फल पक्ष शुक्ल होत सुखकारी । बल्लभ बुधि आनंद उपकारी ।।"[2]

'जातक दीपक'[3] नामक ग्रंथ में इसी प्रकार का वर्णन मिलता है।

लालदास ने ग्रहों की स्थितियों के अनुसार उनके फल का रूप विवेचन किया है । उदाहरण के लिए यदि दशवें भाग में सूर्य है तो वह पत्नी के लिए कष्ट कारक है, जिसके बारहवें भाग में चन्द्र होता है उसे द्विज हत्या का आरोप लगता है। सप्तम भाग में मंगल की स्थिति होने से पत्नी विछोह होता है। दशवें भाग में बुध होने से व्यक्ति यश, प्रताप एवं समृद्धि से युक्त होता है। जिसके चौथे भाग में गुरु होता है वह असुरों को भी भय प्रदान करने वाला , महाप्रतापी, तपस्वी तथा उदासीन मनोवृत्ति वाला होता है । नवें भाग में शुक्र की स्थिति

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित० पृ० 249
2- उपरिवत् , पृ० 250
3- जातक दीपक ,संकलनकर्ता पं० बालमुकुन्द त्रिपाठी, पृ० 288

होने से व्यक्ति धर्मरत एवं शुभ आचरण वाला होता है । चौथे भाग में यदि चन्द्र हो तो जातक जड़, योगी, उदासीन एवं कष्टप्रद शरीर वाला होता है । यदि बारहवां राहु हो तो व्यक्ति विग्रहकारी होता है । छठवें ग्रह का केतु सुखदाता होता है[1]।

लालदास ने विभिन्न योग फलों की भी विवेचना की है । जैसे चौथा शनि और दशवां रवि होने से सुख औरदुख दोनों पिता को ही प्राप्त होते हैं । यदि मंगल से तीसरा शुक्र हो तो उस व्यक्ति के भातृगण सेवकों के समान होते हैं । यदि शशि से चौथा बुध हो तो माता के लिए कष्टकारी होता है । यदि शुक्र से बुध सातवें भाग में हो तो पत्नी सदा दुःख को प्राप्त करती है । यदि शनि से सातवां शुक्र हो तो व्यक्ति अत्यधिक आयु को प्राप्त करता है । कवि के शब्दों में -

"अब सुनु होत जोग फल जैसा । कहत हैं ग्रन्थ जोतिषी तैसा ।।
चौथे शनि दसएं रबि जोई । दुख सुष दोउ पिता कहं होई ।।

x x x

शशि ते चौथे ग्रह बुध पावे । क्रूरह संग क्रूर ग्रह आवे ।।
सब जानत इह जोग विख्याता । ता कुल को दुष पावैं माता ।।
शुक्र ते बुध सतयें घर क्रूरा। पावै दुष ताको त्रिय पूरा ।।
शनि ते सतयें आयु घर सूचा। होत शुक्र का संगहु ऊंचा[2] ।।"

इसके पश्चात कवि ने प्रत्येक ग्रह की एक राशि में ठहरने की अवधि भी बताई है, जो ज्योतिष ग्रंथों[3] से पुष्ट है । कवि के अनुसार सूर्य किसी भी राशि में एक माह

1- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ0250-251

2- उपरिवत्, पृ0 251

3- "मासं शुक्र बुधादित्याश्चन्द्रः पाददिनद्वयम् ।
भौमस्त्रिपक्षं जीवोऽब्दं सार्धवर्षद्वयं शनिः ।
राहुःकेतुःसदा भुक्ते सार्धमेकं तु वत्सरम् ।।"
बृहज्ज्योतिसार,पंडितसूर्य नारायण सिद्धान्ती,पृ0376

रहता है, चंद्र सवा दो दिन, मंगल 45 दिन, बुध तीस दिन, गुरु की स्थिति 13 माह, शुक्र एक माह, शनि किसी राशि में तीस माह रहता है तथा राहु अट्ठारह माह रहता है। इनमें से कुछ सुख को देने वाले तथा कुछ दुःख को देने वाले हैं। लालदास के शब्दों में -

"सूरज मास एक रहे रासी। चंद्र सवा द्वै दिन सुष रासी।।
मंगल दिवस पंच चालीसा। बुद्ध रहत दिन रासिहि तीसा।।
तेरह मास होत गुरू बारा। मास एक रहु शुक्र करारा।
तीस मास शनि को ठकुराई। मास अठारहि राहु रहाही।।"[1]

पुनः इन नव ग्रहों के देश अर्थात् क्षेत्र को भी विवेचित किया गया है। सूर्य खुरासन का राजा है, तथा चन्द्रमा हिमालय का शासक है। मंगल तुर्क देश का, बुद्ध रूस का, गुरू चीन का शासक है। शनि का स्थान हिन्दुस्तान बताया है तथा राहु और केतु का स्थान बताने में कवि ने असमर्थता व्यक्ति की है-

"शुक्र चाच शनि हिन्दुस्थाना। राहु केतु के मैं नहिं जाना।।"[2]

लालदास ने लाठक ' (ज्योतिष् के एक प्राचीन ग्रंथ) के अनुसार प्रजापति, अंगिरा, श्रीमुख, मन्मथ, विश्वावसु आदि विभिन्न संवत्सरों के नामोल्लेख किये हैं -

"लाठक नाम कहौं सुनु ताहा। होत चरित्र सबै इन्ह माहों।।
प्रभव बिभव अरु शुक्ल प्रमोदो। एक प्रजापति अंगिरा बिनोदो।।

x x x

विजय जए मन्मथ द्वै जाने। दुर्मुष हेम बिलंब बषाने।।

x x x

सुभ कृत सोभन क्रोधी राऊ। बिश्वावासु प्रर पराचव गाऊ।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 251
2- उपरिवत्, पृ0 252
3- उपरिवत्, पृ 252

लालदास के अनुसार जन्म के ग्रहों का परिणाम व्यक्ति को भोगना पड़ता है। लालदास स्वयं शनि के कुप्रभाव से अभिशप्त रहे हैं।[1] उनकी इन धारणाओं से प्रमाणित होता है कि वे ज्योतिर्विज्ञान विद् थे। यद्यपि ज्योतिष् के विषय में लालकवि की कोई मौलिकता दृष्टिगत नहीं होती। सम्पूर्ण ज्योतिष् विषयक विवेचन परम्परित ज्योतिष् ग्रंथों से पुष्ट हैं, जैसा कि कवि ने स्वयं स्वीकार किया है -

"अब सुनु होत जोग फल जैसा। कहत हैं ग्रन्थ जोतिषी तैसा।।"[2]

कवि के ज्योतिष विषयक ज्ञान की पुष्टि सं० टि० से भी होती है - "राम के नामकरण का आधार ज्योतिष् के नक्षत्रों के आधार पर बताया गया है, जो सर्वथा नवीन है और कवि के ज्योतिष् विषयक पाण्डित्य का भी सूचक है। अध्यात्म रामायण में 'रमणाद् राम इत्यादि' का प्रसंग आया है, लालदास ने भी 'सब महिं रमैं रमावै जोई, ताको नाम राम अस होई' कहकर अध्यात्म रामायण के मत का अनुमोदन किया है।"[3] कवि ने राम के नामकरण का ज्योतिष् परक उल्लेख इस प्रकार किया है -

"नक्ष पुनर्वसु मिथुन ते होत हैं केशव नाम।
ए द्वै नाम अनादि हैं रामचन्द्र अरु राम।।"[4]

लालदास को ज्योतिष् पर विशेष रुचि थी। यदि ऐसा न होता तो वे राम और सीता के विवाह के अवसर पर शुभ और अशुभ ग्रहों का फलाफल नहीं बताते। इतना ही नहीं लालदास ने राशि कूटक का भी निर्देश किया है।[5] कवि ने ग्रहों का स्वक्षेत्रीय उच्च एवं निम्न स्थितियों का विवेचन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथियों के कालक्रमानुसार फलादेश का संकेत करके ज्योतिष् का पक्ष समुज्ज्वल किया है तथा यह विवेचन कवि के ज्योतिष् विद् होने का

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 200

2- उपरिवत्, पृ० 25।

3- उपरिवत्, प्र० सं० टि०, पृ० 26।

4- उपरिवत्, पृ० 26।

5- उपरिवत्, पृ०

प्रमाण प्रस्तुत करता है ।

संगीत निरूपक आचार्यत्व -

'अवधविलास' का कवि विविध विषयों का पारंगत कवि है । संगीत विषयक पारंगतता भी कवि के काव्य से मुखरित हो उठी है । संगीत के विस्तृत विवेचन से तो ऐसा प्रतीत हो जाता है कि लालदास किसी संगीत शाला में ही नियुक्त रहे हैं । कवि ने संगीत के अंतर्गत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों ही कलाओं का पूर्ण दिग्दर्शन कराया है । भारतीय संगीत के उद्भव और इतिहास की जो कड़ियाँ टूट गई हैं, 'अवधविलास' का कवि उन्हें जोड़ता हुआ प्रतीत होता है । कोई आश्चर्य नहीं कि संगीत के अनुसंधानकर्ता लालदास की संगीत विषयक पंक्तियों पर शोध कार्य करके भारतीय संगीत की आदिम परम्परा की खोज निकालें । उदाहरण के लिए -

"नारद भरत शिवा सरस्वती । दुर्गा हनुमान हैं जती ।।
सारदूल काहल बहु रंगा । कश्यप कंवल वायु मतंगा ।।
हाहा हू हू रावण रम्भा । शेष अवतार करत अचम्भा ।।
ऊषा एक फाल्गुन निरता । ए संगीत ग्रंथ के करता ।।"[1]

कवि ने संगीत ग्रंथों के रचयिताओं के नाम बताये हैं । यह नाम संगीत शास्त्र के अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं तथा संगीत के इतिहास और विकास की टूटी हुई कड़ियों को जोड़ने वाले हैं । इस सम्बंध में 'अवधविलास' के सम्पादक डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित का कथन दृष्टव्य है - " भरत के नाट्यशास्त्र में कोहल, नामक किसी आचार्य का नाम नाट्यशास्त्र के विकास में मिलता है-

"शेषं प्रस्तारतन्त्रेण कोहलः कथयिष्यति ।", कोहल के अस्तित्व की पुष्टि दामोदर गुप्त के कुट्टनीमत (श्लोक 81) शार्ङ्गदेव के संगीत रत्नाकर (115) शिंग भूपाल के रसार्णव सुधाकर (विलास 1, श्लोक 50-52) से हो जाती है ।"[2]

1- अवधविलास , लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 44

2- उपरिवत् , सम्पा० टिप्पणी, पृ० 44 देखें ।

उपरोक्त काव्य पंक्तियों में रावण का नाम संगीत ग्रंथों के रचयिता के रूप में लिया गया है और लोक में अब भी रावण के शिव ताण्डव का चर्चा होता है। शिवताण्डव के छंद विचित्र प्रकार के संगीत में बँधे हुये हैं, जो रावण के संगीत-निष्ठ होने का प्रमाण छिपाये हुए हैं।

लालदास ने संगीत के तीन अंग स्वर, नृत्य और वाद्य बताये हैं तथा इन तीनों को दो भागों में 'मार्ग' और 'देशी' नाम से विभक्त किया है। कवि के शब्दों में -

"तीन अंग संगीत के स्वर औ नृत्य जो वाद्य ।।
सो तीनों दोइ भाँति हैं मारग देशी आदि ।।"[1]

लालदास द्वारा बताये गये संगीत के अंगों को निम्न रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है -

संगीत के प्रकार -

देशी
मारग (मार्गीय)
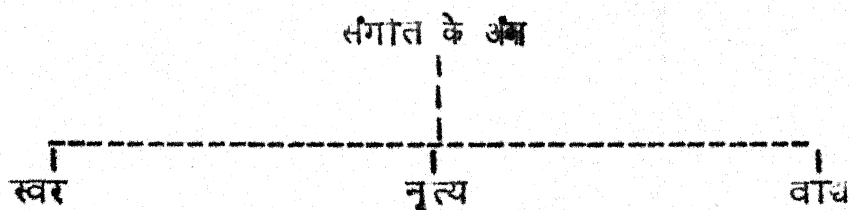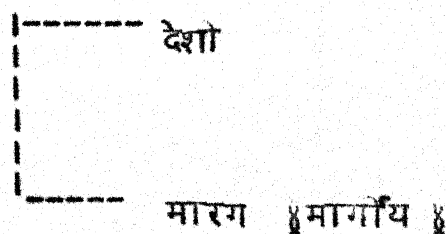
लालदास ने चार प्रकार के वाद्यों का विवेचन किया है। तत-(वीणा के समान तार वाले), आनद्ध (ढोलक के समान चमड़े से मढ़े हुए), घन, (ताल), सुषिर (बाँसुरी के समान अंदर से खाली) कवि के शब्दों में -

"तत आनद्ध औ घन सुषिर बाजा चारि प्रकार ।
मुख तंती अरु जे मढ़े एक लाल झनकार ।।"[2]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 43

2- उपरिवत् , पृ० 45

लालदास द्वारा बताये गये वाद्यों का वर्गीकरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

प्रमुख वाद्यों का वर्गीकरण -

1- |----- तत (वीणा के समान तार वाले)
2- |----- आनद्ध (ढोलक के समान चमड़े से मढ़े हुए)
3- |----- घन (ताल)
4- |----- सुषिर (बाँसुरी के समान अंदर से खाली)

इसके अतिरिक्त लालदास ने अनेक वाद्य यन्त्रों का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है- ढक्का , ढोल , डमरू , पखिरंजा, भेरी , शंख, मुरलि, अलिगुन्जा, कहली, श्रृंग, नागसर, सुरसागर , तुदकी, मुरलिपत्रिका, मुखवीणा, दन्डी, वीणा, पंजरी, मोहन बाजा, जलतरंग , आदि ।[1] लालदास ने तालों की भी एक लम्बी तालिका प्रस्तुत की है, जो कवि के ताल सम्बंधी ज्ञान को पुष्ट करती है -

"चित्र ताल कंदुक कंदुकारी । रास ताल लघु शेखर भारी ।।
कल्ना सर्व एक शनिपाता । पंचम द्वितिय आदि विख्याता ।।

x x x

कुण्ड नाच अर्जुन कुल ताला । इक्का अस्त निताल रसाला ।।
चंद्र लांड जति प्रति सम ताला । संचय प्रथि कुण्डल सु रसाला ।।"[2]

कवि ने परम्परित ताल के दस प्राण भी विवेचित किये हैं , जो संगीत के ग्रंथों से पुष्ट है। कवि के शब्दों में -

"कला अंग जति जाति ग्रह लय प्रस्तार औकाल।
मारग क्रिया जु ताल के कहे प्रान दश लाल ।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 45
2- उपरिवत्, पृ0 47
3- उपरिवत्, पृ0 48

ताल के दस प्राण[1] -

1- |----- कला
2- |----- अंग
3- |----- जति
4- |----- जाति
5- |----- ग्रह
6- |----- लय
7- |----- प्रस्तार
8- |----- काल
9- |----- मारग
10- |----- क्रिया

लालदास ने जिन तालों के प्राणों की चर्चा की है वे संगीत विषयक ग्रंथों में पाये जाते हैं। कवि का यह संगीत विषयक योगदान संगीत की परम्परा के विकास में अत्यन्त उपयोगी है।

लालदास ने न केवल वादन के ही वरन् गायन की भी राग रागनियों का विस्तृत विवेचन किया है। इन्होंने राग के प्रमुख छै भेद बताये हैं।[2] इन्हें निम्न रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है -

राग के प्रमुख भेद -

1- ----- भैरव
2- ----- मेघ
3- ----- हिण्डोला
4- ----- मालकोश
5- ----- श्री राग
6- ----- दीपक

1- तालमार्तण्ड, पं० सत्यनारायण वशिष्ठ, पृ० 22
"कालो मार्ग: क्रियांगानि ग्रहो जाति: कला लय:
यति प्रस्तार कश्चेति ताल प्राणा दश स्मृता: ।।

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 55

पुनः उपरोक्त आठो रागों के परिवारों (पुत्र, पुत्रवधू, पत्नियों) आदि का विस्तृत विवेचन किया है, जो प्राचीन संगीत ग्रंथों से पुष्ट है।

लालदास का यह सम्पूर्ण विवेचन संगीत के अनेक ग्रंथों से प्रभावित है। लालदास ने स्वयं इन ग्रंथों के नाम प्रस्तुत किये हैं। इससे सिद्ध होता है कि यह संगीत विषयक विवेचन कवि का मौलिक विवेचन तो नहीं है, फिर भी इससे कवि की रुचि एवं संगीत विषयक विज्ञता पर प्रकाश पड़ता है। लालदास ने जिन ग्रंथों का उल्लेख किया है वे इस प्रकार हैं -

"पारिजात दर्पन भरत रागार्नव है एक
संगीतार्णव नृत्य निर्णय औरहु ग्रंथ अनेक ।।
संगीत रत्नाकरादि ।।"[1]

"पारिजात से दक्षिण के पण्डित अहोबल के 'संगीत पारिजात' 'दर्पन' से दामोदर पण्डित कृत संगीत दर्पण का संकेत किया है। इसके अतिरिक्त रागार्णव 'संगीतार्णव' और नृत्य निर्णय जैसे प्राचीन एवं प्रामाणिक ग्रंथों का उल्लेख किया है, इनमें से कुछ एक तो अप्राप्य हैं। 'संगीत रत्नाकर' से शारंगदेव (1210ई0) के संगीत रत्नाकर की ओर संकेत किया है[2]।" रागों के विवेचन के पश्चात् लालदास ने गायक के दोषों का भी निरूपण किया है जो सारंगदेव के संगीत-रत्नाकर' के अनुसार है -

"प्रथम दोष गायन महि एही। कंठहीन रोगी कृश देही ।।
दुतिया दोष सुन्दरता नाहीं। राग भेद समुझे नहिं जाही ।।
x x x
गावत झंझकि झंझकि स्वर भंगा। त्यौर चढ़ाइ हंसत चल अंगा ।।
x x x
काक अजा स्वर होत बिलाली। अध मध्य उरध धार न संभाली ।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 55
2- उपरिवत्, सम्पा0 टि0, पृ0 55
3- उपरिवत्, पृ0 58-59

स्वर और वाद्य निरूपण के पश्चात् कवि ने नृत्य का भी विस्तृत विवेचन किया है । लालदास ने अभिनय के तीन अंग[1] बताये हैं । इन्हें निम्न रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है -

अभिनय के अंग -
- नाटि (नाट्य)
- निर्त्य (नृत्त)
  - ताण्डव
  - नटनं
  - नाद्य
  - लास्य
- त्रित्त (नृत्य)
  - विषम
  - विकट
  - लघु क्रन्त
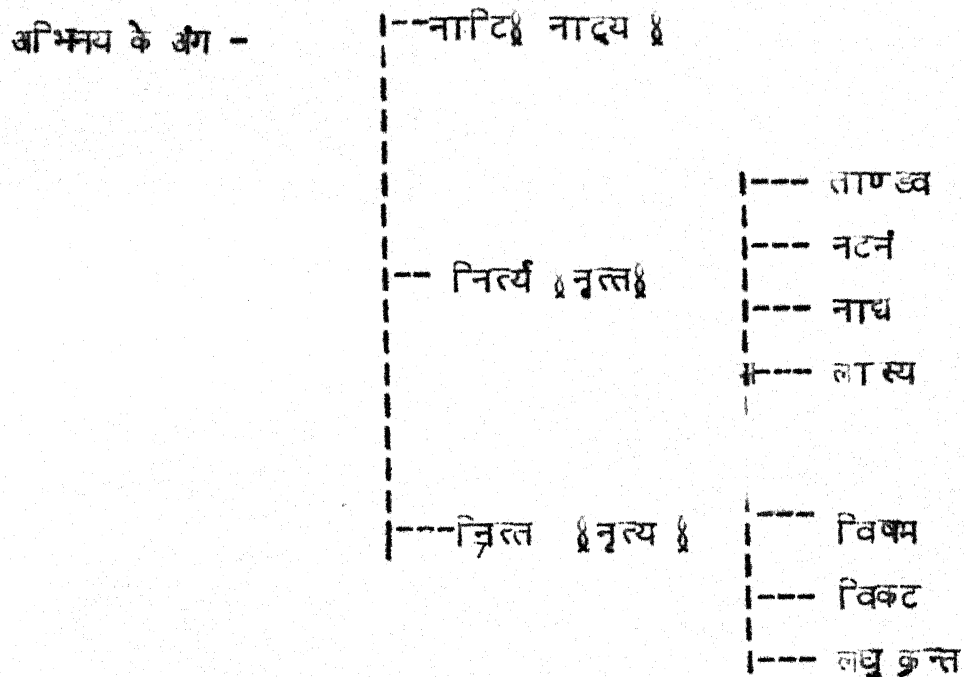
लालदास ने अभिनय के भी चार भेद बताये हैं जो भरत के नाट्यशास्त्र[2] से प्रभावित हैं । लालदास के शब्दों में -

"आंगिक एक अहार्जिक वाचिक । अभिनय नाच कहे इक सात्त्विक ।"[3]

लालदास ने (दृष्टिभेद) नेत्रों की आठ चेष्टाएँ तथा भौहों की सात चेष्टाएँ बताई हैं । उदाहरण के लिए -

"दृष्टि भेद कहे आठ सुहाए । भ्रू लक्षन शिष सात बताये ।।"[4]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित पृ0 5।

2- भरत का नाट्यशास्त्र, 8/17

3- पाद टि0 1 के समान पृ0 52

4- उपरिवत्, पृ0 53

यह भौहों की सात चेष्टाएँ इस प्रकार मानी गई हैं -

1- उत्क्षेप 2- पातक 3- भ्रुकुटी 4- चतुर
5- कुंचित 6- रेचित 7- सहज ।

लालदास ने हस्तक (भारतीय प्रतिभा शास्त्रानुसार हस्तक को मुद्रा कहते हैं) के दो प्रकार गिनाएँ हैं -

"हस्तक दोइ भाँति के भाषा । संजुत एक असंजुत राषा ।।"[1]

'भरत नाट्य' में 'हस्तक मुद्रा' के तीन भेद बताये हैं -

1- असंयुत 2- संयुत 3- नृत्तहस्त

लालदास का यह वर्गीकरण भरत के नाट्यशास्त्र से असंगति रखते हुये भी अभिनव दर्पणकार आचार्य नन्दिकेश्वर के वर्गीकरण के अनुकूल है।[2] इस प्रकार गायन, वाद्य और नृत्य तीनों ही कलाओं का विस्तृत विवेचन लालदास के संगीत विषयक पाण्डित्य को प्रमाणित करता है । कहा जा सकता है कि लालदास ने संगीत का वैसा ही वर्गीकरण किया है , जैसा कि वैदिक ऋचाओं में वाक् तत्व का। लालदास ने काव्य को संगीत से अनुबन्धित कर दिया है और उसी काव्य को श्रेष्ठ माना है जो संगीत से युक्त है । बार- बार कवि ने कहा है- 'जानै भेद गुनीजन ताके'। एक स्थान पर यह भी कहा है कि संगीत साधना का विषय है, तथा सगुणोपासकों को संगीत युक्त स्तुतियाँ , प्रार्थनाएँ , विनयपद आदि के माध्यम से साधना करनी चाहिए । सगुण साधना रागात्मक है । संगीत भी राग पर आधारित है, अतः संगीत साधना को सगुण साधना के अन्तर्गत कवि नेरखा है ।

अन्त में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि लालदास संगीत के विशारद एवं विज्ञ पण्डित थे ।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 53
2- उपरिवत्,/पृ० सम्पा० टि० , पृ० 53

छन्द एवं अलंकार निरूपक आचार्यत्व -

लालदास के 'अवधविलास' से कवि के छंद सम्बंधी आचार्यत्व की भी पुष्टि हो जाती है । भले ही कवि ने छंद शास्त्र का कोई ग्रंथ न लिखा हो, अथवा अपने काव्य में गिनाये गये विभिन्न छंदों के लक्षण भी प्रस्तुत न किये हों, फिर भी लालदास का छंद विषयक आचार्यत्व उच्चकोटि का सिद्ध होता है, तथापिंगल शास्त्र विषय की जानकारी भी कवि के काव्य से व्यंजित हो जाती है ।

भक्त कवि होने के कारण कवि ने छंद बन्धों को भी प्रभु चरणों में समर्पित कर दिया है । कोक और पिंगल की रचना भी प्रभु के नाम के बिना व्यर्थ मानी है -

"छंद बंध कछु भेद न जानौं । केवल एकइ नाम बखानौं ।।
कोक काव्य पिंगल की रचना । बिनु हरि नाम वृथा सब बचना ।।"[1]

लालदास ने गुरू और लघु के अनेक भेद बताये हैं । तथा यगण, मगण,सगण , रगण, आदि सभी के चित्र भी बताये हैं -

"आदि त्रिगुरू ताहि मगन बखाना । तीनि आदि लघु नगनहिं जाना ।।
मगन आदि गुरू एकहिं होई । यगन एक लघु आदिहिं सोई ।।
रगन मध्य लघु होइ सो जानव । मध्य गुरू ताहि जगनहिं मानव ।।
सगन अंत गुरू कहियतु ताही । अंत होइ लघु तगन सु आही ।।
मगन भगन और नगन सुभ गन लाल बिचारि ।।
रगन जगन और सगन गन तगन ए अगन निवारि ।।"[2]

लालदास ने इन गणों के फलों का विवेचन भी किया है कि मगण श्री सम्पत्ति को देता है, भगण यश और कीर्ति देता है, यगण जल में वृद्धि करता है -

"मगन देवता भूमि भनीजे । फल श्री संपति अचलहिं दीजे ।।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 16

2- उपरिवत्, पृ0 16-17

भगन चंद्र जस देत बड़ाई । यगन देव जल वृद्धि कराई ।।
रगन अग्नि भय करै जु मरना । जगन देव रवि रोगहि करना ।।
सगन वायु परदेस बहावे । नाम नगन सुष भोग करावे ।।
तगन व्योम निहफल करि राषै । गन फल लाल जु पिंगल भाषै ।।[1]

संस्कृत काव्यशास्त्र में भी गणों के फलों का विवेचन उपलब्ध होता है[2]।

लालदास ने आठ दग्धाक्षर अर्थात छन्दारम्भ के लिए अनिष्टकारी बताये हैं। विशेष रूप से आठ अक्षरों का निषेध गीत और कवित्त छंद के प्रारम्भ के लिए किया है। ये आठ अक्षर ह, झ, ण, घ, ध, ज, र, आदि बताये हैं। इनमें 'ह' हानि करने वाला है 'झ' 'युद्ध' कराता है, 'ण' 'नारि' का नाशक, 'घ' आयु को घटाता है, 'ध' 'अधीरता' उत्पन्न करता है तथा 'ज' 'र' रुग्णता प्रदान, करता है। इस विषय में अवधविलास की पंक्तियाँ प्रस्तुत की हैं -

"है करे हानि झ जुद्ध करावे । नासे ण नारि घ आयु घटावे ।।
धकर अधीर ज र करै रोगी । अनमल होइ भष करै जोगी ।।
दग्धाक्षर कवि आठ बिचारे । गीत कवित मुषि इन्हहिं न धारे ।।"[3]

लालदास ने लोकजीवन को विविध प्रकार के छंदों का परिज्ञान कराने के लिए छंदों के नाम गिनाये हैं। छंदों के नाम से एक ओर तो यह ज्ञात होता है कि उस समय तक यह छंद प्रयुक्त होते थे तथा दूसरी ओर यह ज्ञात होता है कि

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 17

2- "लक्ष्मीमस्त्रिगुरुः क्षिति वितनुते भः पूर्वगश्चन्द्रमाः ।
कीर्तिं योऽम्युदयं पयः प्रथमलो नः सर्व आयु स्त्रिलः ।
वायुः सौख्य गुरुर्विदेश गमनं शून्यं नमस्तौतिलो ।
रोऽग्निर्मध्यलघुर्मृतिं दिनमणिर्मध्ये गुरुर्जोरुजम् ।।"
जानार्दन बुध विरचित वृत्तरत्नाकर टीका हस्तलिखित प्रति के मुख्य पृष्ठ पर अंकित किसी प्राचीन ग्रंथ का एक छन्द ।
(हस्तलेख, चंददास, सा०शो० सं० प्रति)

3- पा० टि० 1 के समान, पृ० 17

लालदास को न केवल मात्रिक वार्णिक छंदों का ही ज्ञान था, वरन् प्राकृत के छंदों से भी वह परिचित थे। इसकी पुष्टि निम्न पंक्तियों से हो जाती है-

"गुड्डा गाहा सोरठा दोहा कबित जो बात ।।
राम नाम जामैं परै अगुन सगुन होइ जात ।।"[1]

लालदास ने 'अवधविलास' में 'सुगीतक', 'हीरा', मरहट्ठा, कुंडलिया, रोला नाराच, तोमर, अरिल्ल, तोरक, मोतीदाम, आदि अनेक छंदों की लम्बी तालिका प्रस्तुत की है, किन्तु इन छंदों की परिभाषा नहीं दी। कुछ तो ऐसे नाम भी गिना दिये हैं, जिनके लक्षण छंदशास्त्र के ग्रंथों में भी उपलब्धनहीं होते। यद्यपि लालदास ने कहा है कि विस्तार के भय से इन छंदों के उदाहरण नहीं दिये। इससे स्पष्ट हो जाता है कि वे छन्दशास्त्र के पण्डित तो हैं ही।

विशेष -

(छन्द के अतिरिक्त अलंकारों का विवेचन कवि ने नहीं किया। मात्र अलंकारों का उल्लेख ही किया गया है जो शिल्प विधान के अंतर्गत आ चुका है।)

विविध काव्यांगों का विवेचन-

शब्द शक्ति-

शब्द शक्ति शब्द और अर्थ के पारस्परिक सम्बंध को व्यक्त करने का आधार है। 'शब्द' काव्यभाषा की इकाई है, अतः शब्द की विविध शक्तियाँ काव्य में प्रयुक्त होती हैं। आचार्यों ने शब्द शक्तियाँ तीन बताई हैं -

1- अभिधा 2- लक्षणा 3- व्यंजना।

कतिपय आचार्यों ने 'तात्पर्य'[2] नामक शब्द शक्ति का भी उल्लेख किया है।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 19

2- साहित्यशास्त्र और काव्य भाषा, डॉ० शिवाराम तिवारी, पृ० 125

1- अभिधा शक्ति-

काव्य में प्रतिबिम्ब अथवा दृश्य का ग्रहण अभिधा द्वारा ही होता है[1]। सरलता के आदर्श के कारण लालदास के काव्य में अभिधा का प्रयोग किया गया है, जिसका उद्देश्य काव्य को जन सम्प्रेषणीय बनाना है। 'अभिधा' का एक उदाहरण देखिये -

"ऐसो है नाम राम को भाई। सत संगति बिनु ताहि न पाई।।
बिनु सत संगति होइ न ज्ञाना। उधव सों भाष्यो भगवाना[2]।।"

2- लक्षणा शक्ति -

जयदेव ने लक्षणा को सभी अलंकारों के मूल में बीज रूप से स्थित माना है[3]। भोजराज के अनुसार लक्षणा काव्य जीवित {वक्रोक्ति} का भी जीवित है[4]। रामदहिन मिश्र के अनुसार काव्य भाषा को चित्रमय बनाने के साधनों में लक्षणा का स्थान सर्व प्रथम है[5]। लक्षणा के दो भेद बताये गये है -

1- रूढिवादी लक्षणा 2- प्रयोजनवती लक्षणा।

रूढिवादी लक्षणा-

रूढ़िवादी लक्षणा वहाँ होती है जहाँ प्रसिद्धि के कारण शब्द का मुख्यार्थ से भिन्न अर्थ में प्रयोग होता है इसके अंतर्गत लोक जीवन में व्याप्त मुहावरें एवं लोकोक्तियाँ आती हैं। लालदास के काव्य में लाक्षणिक प्रयोग भी कम नहीं मिलते। इस शब्द शक्ति का प्रयोग करने के लिए कवि ने लोक जीवन के मुहावरों को चुना है तथा लक्षणाओं के द्वारा भावों को व्यक्त किया है। इसके कुछ उदाहरण देखिये -

---

1- चिंतामणि, भाग 2 रामचन्द्र शुक्ल, पृ0।
2- अवधविलास, लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 21
3- शब्दे पदार्थे वाक्यार्थे संख्यायां कारके तथा।
लिङ्गे मेयमलङ्कारांङ्कुरबीजतया स्थिता: ।।
चन्द्रालोक, जयदेव, व्या0 नन्दकिशोर शर्मा, पृ0 289-90
4- लक्षणा और उसका हिन्दी काव्य में प्रसार, भोजराज, उद्धत राममूर्ति-त्रिपाठी, पृ0 444
5- काव्य में अप्रस्तुत योजना, रामदहिन मिश्र, पृ0 50

"एकथान कपरा करि बेठा । भीगुर पूलि बजाज होइ बैठा ।।

x x x

च्यूटे एक सेरी पाई । बैठेउ पूलि होइ हलवाई ।।

बरद एक बुढ़वा सोइ बाँढ़ो । नायक हम लादत है टाँढ़ो ।।[1]

प्रयोजनवती लक्षणा -

प्रयोजन मूलक लक्षणा वहाँ होती है जहाँ किसी विशेष प्रयोजन अथवा उद्देश्य के हेतु लक्षणा का प्रयोग होता है । प्रयोजनवती लक्षणा के दो भेद माने गये है - 1- गौढ़ी 2- शुद्धा

गौढ़ी लक्षणा वहाँ होती है जहाँ सादृश्य सम्बंध से अर्थात् समान गुण धर्म के कारण लक्ष्यार्थ को ग्रहण किया जाता है । गौढ़ी लक्षणा के दो भेद बताये गये है - 1- सारोपा गौढ़ी लक्षणा 2 - साध्यवसाना गौढ़ी लक्षणा ।

सारोपा गौढ़ी लक्षणा -

जिस लक्षणा में आरोप हो अर्थात् आरोप्यमान उपमान और आरोप के विषय अर्थात् उपमेय इन दोनों की शब्दों द्वारा उक्ति हो उसे सारोपी गौढ़ी लक्षणा कहते हैं ।

साध्यवसाना गौढ़ी लक्षणा -

जहाँ आरोप का विषय अर्थात् उपमेय लुप्त रहे, शब्द द्वारा प्रकट न किया गया हो और विषयी उपमान का कथन हो, वहाँ साध्यवसाना गौढ़ी लक्षणा होती है ।

लालदास के काव्य में प्रयोजनवती लक्षणा के भी उदाहरण देखने को मिलते हैं -

"कर पल्लव पर नख अस राजे । कमल दलनि पर नग गण भ्राजे ।"[2]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 117

2- उपरिवत् , पृ0 29।

यहाँ पर कर पल्लव के रूपक से कवि ने कर को पल्लव कहा है । वस्तुत: हाथ को पल्लव नहीं कहना चाहता, पल्लव का मुख्यार्थ {पत्ता} बाधित है, क्योंकि पल्लव से अभिधार्थ पत्ते का अर्थ असंगत है । यहाँ कवि का लक्ष्यार्थ पल्लव से कोमलता के लिये है । अत: गौड़ी लक्षणा है ।

"जोग जिहाज सरित संसारा । केवट गुरु उतारै पारा ।।"

इन पंक्तियों में योग उपमेय अर्थात विषय और जहाज आरोप्यमान विषयों का शब्दों द्वारा कथन है, अत: सारोपी गौड़ी लक्षणा है । लालदास ने विभिन्न रूपकों में इसका उपयोग किया है ।

शुद्धा लक्षणा -

शुद्धा लक्षणा वहाँ होती है जहाँ सादृश्य के अतिरिक्त अन्य प्रकार के सम्बंध से लक्ष्यार्थ की प्रतिपत्ति होती है । शुद्धा लक्षणा के चार भेद किये गये है - 1- उपादान लक्षणा 2- लक्षण-लक्षणा 3- सारोपा शुद्धा लक्षणा 4- साध्यवसाना शुद्धा लक्षणा ।

उपादान लक्षणा -

उपादान लक्षणा वहाँ होती है, जहाँ शब्द अपना मूल अर्थ न छोड़ते हुये अन्य अर्थ का आक्षेप करदेता है । उपादान से आशय ग्रहण करने से है । उपादान लक्षणा में शब्द अभीष्ट लक्ष्यार्थ का द्योतन करता हुआ भी अपने मुख्य अर्थ का किसी न किसी प्रकार उपादान ग्रहण किये रहता है ।

लक्षण- लक्षणा -

लक्षण लक्षणा वहाँ होती है जहाँ कोई शब्द अभीष्ट लक्ष्यार्थ की सिद्धि के लिए अपने मूल अर्थ को छोड़ देता है ।

सारोपा शुद्धा लक्षणा -

जहाँ सादृश्य सम्बंध के अतिरिक्त सम्बन्ध के आधार पर

1- अवधविलास,लालदास , सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ० 327

प्रयोजन पूर्ण आरोप किया जाता है, वहाँ आरोपा प्रयोजनवती लक्षणा होती है।

साध्यवसाना शुद्धा लक्षणा -

जहाँ सादृश्य सम्बंध के अतिरिक्त सम्बंध के आधार पर प्रयोजनपूर्ण आरोप में विषय का शब्द द्वारा कथन न हो केवल आरोप्यमाण का ही कथन हो वहाँ साध्यवसाना प्रयोजन वती लक्षणा होती है। कवि ने अपने काव्य में इन सभी प्रकार के प्रकारों का उपयोग किया है। उदाहरण के लिए -

"तुम त्रैलोक नाथ सुखदाई। छलत फिरत इह कौन बड़ाई ।।"[1]

कवि का कथन है कि तुम त्रैलोक्य के स्वामी और सुखदाता होकर भी छल का कर्म करते हो। यहाँ अभीष्ट लक्ष्यार्थ है दायित्व विहीन छल। कवि बड़प्पन के विपरीत छल प्रवृत्ति पर व्यंग्य करना चाहता है। अतः शुद्धा लक्षणा है।

व्यंजना शक्ति -

'व्यंजना' को ही काव्य में प्रमुख रूप से उत्कर्ष प्रदान करने वाला शब्द का व्यापार बताया गया है। व्यंजना के दो भेद हैं -

1- शाब्दी 2- आर्थी

शाब्दी व्यंजना -

जहाँ व्यंग्यार्थ किसी विशेष शब्द के आधार पर अवलम्बित हो अर्थात् व्यंजक शब्द के स्थान पर उसका समानार्थक शब्द रख देने से व्यंग्यार्थ की प्रतीति न हो वहाँ शाब्दी व्यंजना होती है। शाब्दी व्यंजना के दो प्रकार हैं-

अभिधामूलक शाब्दी व्यंजना -

इसके 15 भेद बताये गये है - संयोग, वियोग,

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 139

साहचर्य, विरोध, अर्थ, प्रकरण, लिंग, शब्दान्तर सन्निधि, सामर्थ्य, औचित्य देशकाल, व्यक्ति, स्वर ,चेष्टा अथवा अभिनय हैं ।

लक्षणा मूलक शाब्दी व्यंजना -

यह व्यंजना वहाँ होती है जहाँ लक्ष्यार्थ के प्रयोजन का बोध होता है । प्रयोजनवती लक्षणा के समान इसके भी विभेद होते हैं ।

आर्थी व्यंजना -

जो शब्द शक्ति निम्नलिखित दस विशिष्टताओं के कारण अन्य अर्थ का बोध कराती है, उसे आर्थी व्यंजना कहते हैं ।

1- वक्तृवैशिष्ट्य 2- बोद्धव्य वैशिष्ट्य 3- वाक्य वैशिष्ट्य 4- अन्यसन्निधि वैशिष्ट्य 5- वाच्य वैशिष्ट्य 6- प्रस्ताव वैशिष्ट्य 7- देश वैशिष्ट्य 8- काल वैशिष्ट्य 9- काकु वैशिष्ट्य 10- चेष्टा वैशिष्ट्य

लालदास के काव्य में व्यंजना के प्राय: समस्त भेदोपभेद पाये जाते है,जो अनुसंधान की दृष्टि से स्वतन्त्र अनुशीलन के विषय हैं । व्यंजना के कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं -

"हमही से जहं मुनि बहु बृंदा । देषहु चलिए करहु अनंदा ।।
पूजा बहुत है होत हमारी । पुरुष रहत हैं आज्ञाकारी ।।"[1]

उपर्युक्त छंद में अनंदा शब्द दार्शनिक आनंद के अर्थ में नहीं है ।यह आनन्द रीति विलास के अर्थ में व्यंजित हुआ है । इसी प्रकार पूजा शब्द भी पूज्य अथवा देव पूजा मूलक नहीं है । इस पूजा से कवि ने पुरुषों द्वारा उन्मुक्त भोग्य होने की (वेश्या जीवन की) व्यंजना की है इसी प्रकार -

"औरन्ह के विचारथी संगा । वाके संग भ्रमर बहु रंगा ।।"[2]

1- अवधविलास,लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित,पृ018।

2- उपरिवत्, पृ0 18।

उपर्युक्त पंक्ति में भ्रमर शब्द से रसिकों की व्यंजना की गई है । ये भ्रमर अपना मूल अर्थ 'अलि' को छोड़ देता है ।

काव्य गुण तथा काव्य दोष -

काव्य गुणों का विवेचन शिल्प विधान के अंतर्गत किया जा चुका है ।

काव्य दोष -

काव्य की रस प्रतीति में बाधक तत्वों को काव्य दोष कहते हैं । आचार्य चिंतामणि के अनुसार -

"शब्द अर्थ रस को जुरत देखि परै अपकर्ष ।
दोष कहत हैं ताहि को सुनै घटतु है हर्ष ।।"[1]

आचार्य मम्मट ने काव्य के सामान्य दोष -क्लिष्टत्व, अन्यार्थत्व, अवाचकत्व अयुक्तत्व और गूढ़त्व बताये हैं तथा वाणी के दोष चार बताये हैं । 1- श्रुति दुष्ट 2- अर्थ दुष्ट 3- कल्पना दुष्ट 4- श्रुति कष्ट तथा अन्य दोषों में अपार्थ व्यर्थ , एकार्थ संशय अपक्रम, शब्दहीन, यतिभ्रष्ट, भिन्नवृत्त, विसन्धि आदि बताये हैं ।जयदेव के अनुसार शब्द और अर्थ में किया गया वह उन्मेष जिसके चित्त में प्रवेश से काव्य की रमणीयता क्षीण होती हो उसे दोष कहते हैं[2] । आचार्य भरत मुनि ने काव्य के दस दोष बताये हैं-गूढ़ार्थ,अर्थान्तर,अर्थहीन,भिन्नार्थ,एकार्थ, अभिप्लुतार्थ, न्यायापेत, -

---

1- कवि कुल कल्पतरु, चिन्तामणि, 4/1

2- "स्यान्चेतो विशता येन सक्षता रमणीयता ।
शब्देऽर्थे कृतोन्मेषं च दोषमुद्घोषयन्ति तम् ।।"

चन्द्रालोक, जयदेव टी० नन्दकिशोर शर्मा -
{चौखम्बा 1950} {2/1,पृ022}

विषम, विसन्धि । तथा शब्द च्युत[1] ।

महाकवि लालदास ने दोष निरूपण के अंतर्गत पाँच काव्य दोषों का नामोल्लेख किया है - 1- अन्ध 2- बधिर 3- पंगु 4- नग्न 5- मृतक , उदाहरण के लिए -

"अंध बधिर और पंगु इक नगन मृतक तजि वाल ।
पंच दोष ए काव्य के कविजन कहत है लाल ।।"[2]

आचार्य सूरति मिश्र ने भी 'काव्य सिद्धान्त' में पंगु और मृतक को काव्य दोष कहा है । डॉ० भगीरथ मिश्र ने इन दोनों को मम्मट कृत 'काव्यप्रकाश' से इतर बताया है।[3]

काव्य प्रयोजन -

'प्रयोजनमुद्दिश्य मन्दोऽपि न प्रवर्तते' । काव्य का सृजन सोद्देश्य होता है। कोई भी कवि प्रयोजनों से प्रेरित होकर ही काव्य सर्जना में प्रवृत्त होता है । विभिन्न संस्कृत आचार्यों व हिन्दी आचार्यों ने काव्य के अनेकानेक प्रयोजन बताये है । कुछ संस्कृत आचार्यों के काव्य प्रयोजन इस प्रकार प्रस्तुत किये जा सकते हैं। आचार्य वामन ने काव्य का प्रयोजन आनन्द और यश बताया है[4] । रूद्रट ने काव्य का प्रयोजन यश माना है[5]। अभिनव गुप्त ने सद काव्य

1- अगूढमर्थान्तिरमर्थहीनं
भिन्नार्थमेकार्थमभिप्लुतार्थम्
न्यायादपेतं विषमं विसन्धि च
शब्दच्युतं वै दश काव्यदोषाः।।
नाट्यशास्त्रम, भरतमुनि, 17/88

2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 18

3- हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास, डॉ० भगीरथ मिश्र, पृ० 114

4- "काव्यं सद दृष्टा दृष्टार्थं प्रीति कीर्ति हेतु त्वात ।"
काव्यालंकार सूत्रवृत्ति, वामन, 1/1/5

5- "ज्वलदुज्जल वाक्प्रसरः सरसं कुर्वन्महाकविः काव्यम्
स्फुटमाकल्पमनल्पं प्रतनोति यशः परस्यापि ।।"
काव्यालंकार, रूद्रट, 1/4

काव्य का सेवन धर्म , अर्थ, काम, मोक्ष, अन्य कलाओं में निपुणता, कीर्ति, और प्रीति, काव्य के प्रयोजन माने हैं[1]। आचार्य मम्मट के काव्य प्रयोजन में प्रायः सभी संस्कृत आचार्यों एवं हिन्दी आचार्यों के काव्य प्रयोजनों का समाहार हो जाता है । मम्मट ने काव्य के 6 प्रयोजन माने हैं -यश की प्राप्ति, अर्थलाभ , सामाजिक व्यवहार की शिक्षा , रोगादि विपत्तियों का विनाश उच्चकोटि का आनन्द तथा कान्ता सम्मत उपदेश[2]।

लालदास का ग्रंथ एक लक्षण ग्रंथ नहीं है । अतः कवि ने इन आचार्यों की भाँति काव्य प्रयोजन तो नहीं गिनाये फिर भी 'अवधविलास' में प्रयोजनों की व्यंजना हो जाती है । लालदास ने 'यश' ,'प्रभुता' तथा आनन्द इन काव्य प्रयोजनों का संकेत किया है -

"जस प्रभुता जग माहिं चहै तो पढ़ु अवधविलास ।"[3]

इसी प्रकार -

"सज्जन मनरंजन कथा कहौं सुनै सब कोइ ।"[4]

उपरोक्त काव्य पंक्तियों में जस से यश प्रभुता से प्रभुत्व अर्थात ऐश्वर्य (धन, अर्थलाभ) तथा 'सज्जन मन रंजन से' आनन्द लाभ इन तीनों प्रयोजनों की अन्तर व्यंजना की है गई है ।

काव्य हेतु -

काव्य रचना के कारण अर्थात जो गुण काव्यरचना में उपकारक

1- "धर्मार्थ काममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च ।
करोति कीर्ति प्रीतिञ्च साधु काव्य निषेवणम् ।।"
लोचनव्याख्या, अभिनव गुप्त , पृ0 40

2- "काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहार विदे शिवेतर क्षतये ।
सद्यः परिनिर्वृतये कान्तासम्मितयोपदेश युजे ।।"
काव्यप्रकाशः, मम्मट , 1/2

3- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 3

4- उपरिवत्, पृ0 ।

होते हैं वे काव्य हेतु कहे जाते हैं । विभिन्न आचार्यों ने भिन्न-भिन्न काव्य हेतु बताये हैं । दण्डी ने स्वाभाविक प्रतिभा, विविध ज्ञान युक्त अनेक शास्त्रों का ज्ञान तथा दृढ़ अभ्यास कवित्व सम्पदा के कारण बताये हैं[1]। आचार्य रुद्रट ने शक्ति, व्युत्पत्ति और अभ्यास काव्य के हेतु माने हैं[2]। आचार्य मम्मट ने भी शक्ति निपुणता और 'अभ्यास' काव्य के हेतु माने हैं[3]।

महाकवि लालदास ने भी 'अवधविलास' महाकाव्य में बुद्धि विस्तार के पांच कारण माने हैं । ये ही पांच कारण काव्य के हेतु हैं । ऋषि कुल, गुरु, ग्रंथ, {श्रेष्ठ ग्रंथों का अध्ययन} संगति {श्रेष्ठ जनों की} तथा देश भ्रमण, से काव्य हेतु लालदास ने गिनाये हैं -

"ऋषि कुल पुनि गुरु ग्रंथ औ संगति देश भ्रमान ।
लाल बुद्धि विस्तार के कारन पंच प्रमान[4] ।।"

ध्वनि-

ध्वनि शब्द की भाव साधना व्युत्पत्ति इस प्रकार होगी-ध्वननं ध्वनि: अर्थात व्यंजना व्यापार । व्यंजना व्यापार से पृथक काव्य में दो व्यापार और होते हैं । {1} अभिधा और {2} लक्षणा। ध्वनि काव्य की दृष्टि से 'अवधविलास' का संक्षिप्त अध्ययन इस प्रकार होगा -

---

1- "नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतं च बहु निर्मलम् ।
अमन्दश्चाभियोगोऽस्या: कारणं काव्य संपद: ।"
काव्यादर्श, दण्डी, 1/130

2- "त्रितयमिदं व्याप्रियते शक्तिर्व्युत्पत्तिरभ्यास: ।"
काव्यालंकार, रुद्रट, 1/14

3- "शक्ति निपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात् ।
काव्यज्ञ शिक्षयाभ्यास: इति हेतुस्तदुद्भवे ।।"
काव्यप्रकाश:, मम्मट, 1/3

4- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 119

अविवक्षित वाच्य -

काव्य में जब ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है जो अपने प्रतिष्ठित अर्थ में बाधित होकर अपनी सामर्थ्य से विवक्षित अर्थ को अभिव्यक्त कर देते हैं। वहाँ अविवक्षित वाच्य ध्वनि होती है। अविवक्षित वाच्य ध्वनि में लक्षणा का भी अन्वय व्यतिरेक होता है अर्थात जहाँ पर ध्वनि होती है वहाँ पर लक्षणा अवश्य होती। अविवक्षित वाच्य ध्वनि के दो भेद बताये गये हैं -

1- अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य और 2- अर्थान्तर संक्रमित वाच्य। अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य उसे कहते है जहाँ लक्ष्यार्थ अर्थात् प्रयोजन के प्रत्यायन में वाच्यार्थ का सर्वथा परित्याग हो जाता है और अर्थान्तर संक्रमित वाच्य वहाँ पर होता है जहाँ पर प्रयोग सामर्थ्य से वाच्यार्थ दूसरे अर्थ से संवलित होकर अपना अर्थ देता है। इस प्रकार अर्थान्तर संक्रमित वाच्य में वाच्यार्थ का सर्वथा परित्याग नहीं होता। अत्यन्ततिरस्कृत वाच्य के कुछ उदाहरण देखिये -

"कन्या दुरत भवन अवकासा। सिय तन जोति होत परकासा[1]।।"

ज्योति और प्रकाश किसी दाहक पदार्थ से निकलते है किन्तु कवि का आशय यहाँ रूप और सौन्दर्य के प्रकर्ष को व्यक्त करना है। इसमें ज्योति शब्द से शब्दगत अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य व्यक्त हुआ है। एक अन्य उदाहरण -

"कन्या और सिया सम नाहीं। दामिनि सी दमकत तिन माहीं[2]।।"

यहाँ दामिनि की भाँति सीता को उपमित किया गया है। एक और उपमा विधान है किन्तु 'दामिनि' से व्यंजना की गई है। कोई स्त्री 'दामिनि' की तरह नहीं होती, अतः दामिनि से शब्दगत अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य है।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 292

2- उपरिवत्, पृ० 292

'अवधविलास' में वाक्यगत अत्यन्तितिरस्कृत वाच्य अविवक्षित ध्वनि भी पाई जाती है उदाहरण के लिए -

"इक सोना पुनि होइ सुगंधू । संख जो क्षीर सनेही बंधू ।"[1]

इस पंक्ति में सम्पूर्ण वाक्य ही ध्वनि उत्पन्न करता है । एक तो सेना, उस पर सुगंध, एक तो शंख दूसरा क्षीर सागर का शंख । अर्थान्तिर संक्रमित वाच्य का एक उदाहरण -

"दूरि होइ जानत नहिं मोहीं । पानी करि डारौं अब तोहीं ।।"[2]

इसमें पानी कर डालना लाक्षणिक प्रयोग है जो ध्वनि से क्रोध की अतिशयताको व्यक्त करता है ।

<u>विवक्षितान्य पर वाच्य ध्वनि -</u>

इस ध्वनि को अभिधामूलक ध्वनि कहते हैं ।
विवक्षितान्य पर वाच्य ध्वनि में वाच्यार्थ स्वतः पूर्ण तथा संगत होता है । किन्तु सहृदयता के कारण परिस्थिति के प्रकाश में एक अन्य अर्थ की प्रतीति होने लगती है जिसके लिए आवश्यक नहीं है कि दूसरा अर्थ वाच्यार्थ से सर्वथा सम्बद्ध हो । इसमें वाच्यार्थ विवक्षित होता है । विवक्षितान्यपरवाच्य के स्थूल रूप से तीन भेद किये गये हैं - 1- रस ध्वनि 2- वस्तु ध्वनि 3- अलंकार ध्वनि

<u>वस्तु ध्वनि-</u>

जहाँ किसी घटना या वस्तु आदि की व्यंजना की जाती है उसे वस्तु ध्वनि कहते हैं । उदाहरण के लिए अवधविलास की निम्न पंक्तियाँ-

"कौशिल्या के भयौं अनंदा । देखिहौं जाहि सुता मुख चंदा ।।
उमगेउ हृदय सुता सुधि आई । चलेउ नीर नहिं नैन समाई ।।"[3]

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 293

2- उपरिवद , पृ0 123

3- उपरिवद, पृ0 170

कौशिल्या का उमंगित होना तथा हर्षित होना वस्तु है । इसके द्वारा शान्ता से मिलने की आकांक्षा तथा माँ की वात्सल्य दशा ध्वनित हुई है अतः यहाँ वस्तु ध्वनि है । वस्तु ध्वनि के प्रमुख छे भेद हैं - 1- लोक संभव वस्तु 2- कवि कल्पित वस्तु 3- कवि निबद्ध वक्तृ कल्पित वस्तु 4- लोक संभव अलंकार 5- कवि कल्पित अलंकार 6- कवि निबद्ध वक्तृ कल्पित अलंकार। `अवधविलास' में इनके उदाहरण भी यत्र तत्र पाये जाते हैं ।

अलंकार ध्वनि -

जहाँ पर अलंकार्य को अलंकृत करने वाले साधन उपलब्ध हों वहाँ अलंकार ध्वनि होती है । `अवधविलास' का एक उदाहरण देखिये -

"राम काल के काल हैं माता जानति नाहिं ।।"[1]

यहाँ राम को काल का काल कहकर यह व्यंजित किया गया है कि वे महा शक्तिशाली है । काल की शक्ति प्रबल होती है । किन्तु वे उस प्रबल शक्ति से भी शक्तिमान हैं ।

रस ध्वनि -

जहाँ रस व्यंग्य हो वहाँ रस ध्वनि होती है । उदाहरण के लिए -

"अँगिरावति ऊँचे भुज तानैं । ऐंठति मानहुं काम कमानैं ।।
राषति एकइ अलक झुकाई । सोहति मुष पर लगति सुहाई ।।
मोहत बदन जंभात अमोला । संपुट कनक रतन जनु षोला ।।"[2]

यहाँ पर श्रृंगार रस व्यंग्य है । अँगड़ाई लेना, भुजाओं को तानना और अलक झुकाना उद्दीपन विभाव है । इन विभावों का बोध श्रृंगार रस की अनुभूति के साथ- साथ होता है अतः यहाँ पर रस की ध्वनि है ।

1- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 299

2- उपरिवद्, पृ0 178

सप्तम प्रकरण

मूल्यांकन के विविध दृष्टिकोण

मुल्यांकन के आधार और समस्याएं

किसी भी कवि की किसी कृति के सर्वाङ्गीण विवेचन के पश्चात् उसका उसका मुल्यांकन करना भी आवश्यक है । कवि के वैशिष्ट्य को जिन कसौटियों में कसा गया है, उनमें वह कितना खरा उतरा है, यह देखना भी अनिवार्य है। इस दृष्टि से यदि लालदास का मुल्यांकन किया जाये तो हमे कई बिन्दुओं पर विचार करना होगा, क्यों कि एक तो साहित्य के इतिहास में अचर्चित, दूसरे एक मौलिक कवि, तीसरे महाकाव्य जैसा कृतित्व, इसका मुल्यांकन निश्चय ही एक दुष्कर कार्य है । आज के वैज्ञानिक युग में मुल्यांकन एक आवश्यक तथ्य है, अत: उसका भी अनुपालन अपेक्षित है ।

लालदास के काव्य के मुल्यांकन की एक प्रमुख कठिनाई यह है कि उनका अध्ययन तुलसी के 'रामचरितमानस' को मानक मानकर किये जाने पर आलोच्य कृति की विशिष्टताएं नहीं उभर पायेंगी । अत: तुलसी से भिन्न लालदास का मानक बनाना आवश्यक है। रामकाव्य परम्परा में 'रामचरितमानस' मानक के रूप में सर्वज्ञात रहा है । प्राय: रामकथा के सभी कवियों ने 'मानस' की परम्परा का अनुगमन किया है। वस्तु क्षेत्र में 'मानस' का अप्रतिम प्रभाव रामकाव्य परम्परा पर पड़ा है। किन्तु लालदास पहली बार इस परम्परा से हट कर भक्ति काव्य को रसिक परम्परा पर अपनी काव्य कृति को आधारित करते हैं। तुलसी ने जिन मार्मिक प्रसंगों की अवतारणा की है, लालदास प्राय: उन प्रसंगों को या तो संकेत से व्यंजित करते हैं अथवा उनका उपयोग ही नहीं करते । अत: तुलसी और लालदास की रसात्मकता, भावुकता, वस्तुयोजना सभी कुछ एक भिन्न धरातल लिए हुये हैं । आचार्य शुक्ल भावुकता को प्रबंध कवि की कसौटी मानते हुये तुलसी

को सफल प्रबंधकार मानते हैं । किन्तु यदि उन्हीं प्रतिमानों को आधार बनाकर 'अवधविलास' का अध्ययन करें तो बहुत सीमा तक निष्पक्ष मूल्यांकन नहीं हो सकता। किसी भी राम भक्त को 'भरतमिलन', केवट संवाद, परशुराम संवाद छोड़कर रामकथा की परिकल्पना रुचिकर नहीं प्रतीत होगी । किन्तु लालदास ने इतने बहुचर्चित प्रसंगों को छोड़कर जिस रसात्मकता तथा भावुकता का परिचय दिया है, वह भावुकता मात्र एक कवि की न होकर एक रसिक भक्त की प्रतीत होती है ।

लालदास के काव्य के मूल्यांकन के लिए तुलसी के मानस से भिन्न एक मानक बनाने की आवश्यकता इसलिए है क्यों कि दोनों कृतियाँ भिन्न युगों तथा भिन्न दर्शन की आधारशिला पर स्थापित हैं । तुलसी का कवि स्वान्त: सुखाय होकर भी लोक रक्षण को प्रमुखता प्रदान करता है तथा युद्ध के अनुकूल राम को एक ऐसे नायक के रूप में प्रस्तुत करता है जो लोक जीवन का संरक्षक बन सके । लालदास के सामने रीतियुग की राजनैतिक परिस्थितियाँ हैं । वे अपने समय की सांस्कृतिक प्रवाह में लेकर चलना चाहते हैं, किन्तु उन्होंने जिस राम को नायक के रूप में चुना है, वे युद्ध के प्रति सजग रहते हुए भी लीला विशेष में निमग्न हैं तथा वनवास लंकादहन, रावण वध आदि मायाविक कार्यों से अपने को बहुत कुछ असम्पृक्त रखने वाले हैं । तुलसी के मानस का मुख्य कार्य रावण वध है । लालदास के 'अवधविलास' का दर्शन रावण वध की घटना को यथार्थ नहीं स्वीकार करता । यही कारण है कि दो विशिष्ट प्रकार की फलश्रुति इन दोनों महाकाव्यों को और इनके कवियों को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करती हैं। तुलसी के मार्मिक स्थल लालदास के मार्मिक स्थलों से भिन्न है । इसी प्रकार जिन चरित्रों में तुलसी विशेष रमे है, लालदास ने उनका स्पर्श करके छोड़ दिया है । जो कथाएँ [illegible]

को प्रमुख कथाएं है उन पर लालदास ने कलम भी नहीं चलाई । जो वृत्त मानस में विस्तार बना सके हैं, लालदास ने उनसे भिन्न तथा सर्वथा स्वतंत्र कथानकों को अपने काव्य का विषय बनाया है । अस्तु इस कवि के मूल्यांकन के लिए एक सर्वथा नवीन तथा तुलसी के मूल्यांकन से भिन्न मानक बनाना पड़ेगा ।

मूल्यांकन की एक अन्य कठिनाई यह भी है कि वे अपने काव्य में बहुज्ञता का इतने विस्तार से निर्वाह करते हैं कि यह निर्णय लेना कठिन हो जाता है कि वे किस सिद्धान्त का अनुगमन कर रहे हैं तथा किस विचार अथवा दर्शन का प्रतिपादन कर रहे हैं । उदाहरण के लिए वे दर्शन की किस शाखा विशेष से अनुबंधित हैं अथवा काव्यशास्त्र के किस सिद्धान्त की आवश्यकता है । कवि दार्शनिक क्षेत्र में समस्त दर्शन पद्धतियों का विवेचन करता है तथा उन दर्शनों के संस्थापक आचार्यों का भी उल्लेख करता है । इसी प्रकार अनेक स्थानों पर दार्शनिक विवेचन करते हुए वह विभिन्न सिद्धान्तों के सूत्रों को समन्वित करता है । उदाहरण के लिए श्रृंगी ऋषि के आश्रम में विभिन्न प्रकार की साधना पद्धतियों का वर्णन कवि ने किया है अतः यह निष्कर्ष निकालना कठिन होता है कि कवि की आस्था किस सिद्धान्त विशेष में है । मूल्यांकन की यह कठिनाई कवि के काव्य में सर्वत्र व्याप्त है । रसिक सम्प्रदाय रस एवं भाव पर बल देता है, योग की उपेक्षा करता है । लालदास रसिक सम्प्रदाय के होकर भी योग विषयक विवेचन भी करते हैं, किन्तु कभी - कभी भक्तों की तुलना में योगियों पर व्यंग्य बाण कसने में भी नहीं चूकते । अतः ऐसी स्थिति में उनके सैद्धान्तिक स्वरूप को निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करने में कठिनाई होती है ।

मूल्यांकन की एक अन्य कठिनाई यह है कि रसिक सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का अनुपालन कविने किस सीमा तक किया है तथा सम्प्रदाय से स्वतंत्र चिंतन को कितनी दूर तक समाविष्ट किया है, इसका निर्धारण भी

अपेक्षित है । उदाहरण के लिए सम्प्रदाय की परिपाटी से जहाँ कहीं भिन्नता है उसका कारण कवि के व्यक्तित्व में भक्ति भावना के अतिरिक्त अन्य पूर्व संस्कार भी है,। उदाहरण के लिए कवि वैयाकरण आचार्य भी है, अत: रसिक सिद्धान्तों के बीच उसका आचार्यत्व और वैयाकरणत्व निष्पत्तियों में, विवेचनाओं में झलकने लगता है । साथ ही वे एक बड़ी सीमा तक सम्प्रदाय की संकीर्णताओं को छोड़ते हैं तथा उसके वैशिष्ट्य को ग्रहण करते हैं । अत: रसिक परम्परा के साम्प्रदायिक स्वरूप से भिन्नता आना स्वाभाविक है । अब प्रश्न यह है कि लालदास कितनी सीमा तक रसिक सम्प्रदाय के सिद्धान्तों से बँधे हैं अथवा कितनी सीमा तक स्वतंत्र हैं, यह निर्णय भी उनके मूल्यांकन की एकसमस्या है।

कवि के मूल्यांकन में एक विशिष्ट बात यह भी प्रतीत होती है कि वह भाषा को सरल बनाकर अर्थों की जटिलता से काव्य को मुक्ति प्रदान करता है । इस प्रकार के सरलीकरण, जिसका संकेत कवि ने किया है, को दृष्टि में रख कर उनके द्वारा किये गये भाषायी प्रयत्न का भी मूल्यांकन होना चाहिए ।

मूल्यांकन के लिए कवित्व आचार्यत्व वैविध्य आदि अनेक प्रश्न बिन्दु ऐसे हैं जिनको 'अवधविलास' संस्पर्श ही नहीं करता,; उन्हें दूर तक प्रभावित करता है । अत: इन बिन्दुओं पर भी कवि का मूल्यांकन किया जाना चाहिए ।

लालदास ने 'अवधविलास' की रचना सं० 1732 में की है यह रचनाकाल रीतिकाल का प्रारंभ है, किन्तु कवि का जीवन काल भक्ति का उत्तरार्द्ध है, अत: भक्ति और रीति के संस्कारों का प्रतिफलन काव्य में पड़ना स्वाभाविक है । भक्ति कालीन भक्ति भावना 'अवधविलास' को संस्कारित

करती है । रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ 'अवधविलास' में नखशिख वर्णन नायिका भेद आदि प्रसंगों में परिलक्षित होतीं हैं । दोहा चौपाई जहाँ भक्ति कालीन छाया देते है, वहीं उक्ति विशेष के प्रयोग रीति का स्मरण कराते हैं । ऐसी स्थिति में काव्य को युग को किस धारा को प्रवृत्तियों के साथ रख कर मुल्यांकित किया जाय, यह एक समस्या बन जाती है । अत: मुल्यांकन के लिए इस दृष्टिकोण को रखना भी आवश्यक है । भक्ति और रीति की संधि होने के कारण कुछ नवीन प्रयोग आवश्यक होते हैं, साथ ही संधि काल की कविता अपना अस्तित्व कुछ भिन्न रूप में लेकर चलती है । लालदास की कविता भी कुछ इसी प्रकार की है । अत: उसके मुल्यांकन में भक्ति और रीति के निर्धारित लक्षणों के अतिरिक्त कुछ नूतन लक्षण भी निर्धारित करने पड़ेंगे ।

संश्लिष्टता भी मुल्यांकन का एक प्रमुख बाधक बिन्दु है। एक ही कवि भक्ति कवित्व और आचार्यत्व के विविध बिन्दुओं का सम्मिलन है । कवित्व को दृष्टि से लालदास एक सरस ,भाव प्रवीण, एवं कल्पनाशील कवि हैं, किन्तु उनके काव्य में भक्ति का प्राधान्य है । भक्ति की प्रधानता के कारण कवित्व में भक्ति तत्व का आना स्वाभाविक है । इसी प्रकार आचार्य कवि के द्वारा लिखा जाने वाला काव्य शास्त्रीयता से संयुक्त हो जाता है । 'अवधविलास' भी इसी का परिणाम है । भक्ति की दृष्टि से वह उच्च कोटि के रसिक भक्त सिद्ध होते हैं तथा आचार्यत्व की दृष्टि से वे भक्ति आचार्यत्व के समीप हैं । प्रमुख रूप से वह भक्त हैं, उनका कवि तथा आचार्यत्व रूप भक्ति से अनुप्राणित है ।

पाठालोचन प्राचीन कृतियों की एक प्रमुख समस्या है । मूलपाठ

का निर्धारण मूल प्रति के आधार पर प्रामाणिक सिद्ध होता है, किन्तु प्राय: प्राचीन ग्रंथों की मूलकृतियाँ नहीं मिलती । ऐसी स्थिति में प्रतिलिपित प्रतियों से पाठालोचन का कार्य करना पड़ता है । प्रतिलिपित प्रतियों में प्रतिलिपिकार के द्वारा असावधानी के कारण अनेक त्रुटियाँ रह जाती हैं । कहीं लिपि सम्बंधी, कहीं मूलपाठ के भ्रम से अन्य पाठ के रूप में ग्रहण करने से, कहीं स्थानीयता अथवा क्षेत्रीयता का प्रभाव भी प्रतिलिपियों में पाया जाता है, जिसके कारण उच्चारण और ध्वनियों में अन्तर हो जाता है, अत: ऐसी स्थिति में अधिकतम प्राचीनतम तीन प्रतियों से ग्रहण किये गये पाठ को ही प्रामाणिकता प्रदान करनी चाहिए । सौभाग्य से 'अवधविलास' के सम्पादन में एक से अधिक तीन-चार प्रतियों के आधार पर पाठालोचन का कार्य किया गया है जिसमें वृंददास शोध संस्थान की प्रति मूल प्रति के सर्वाधिक निकट है । इसके अतिरिक्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा छतरपुर की प्रतियों से पाठ निर्धारण में सहायता ली गई है । इस प्रकार 'अवधविलास' को सम्पादित किया गया है । यह भी एक सुखद संयोग की बात है कि शोध छात्रा भी इस महाकाव्य के सम्पादक डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित के साथ सह सम्पादक के रूप में कार्य करती रही । अत: निर्विवाद रूप से 'अवधविलास' के पाठ निर्धारण में अब कोई संदिग्धता नहीं रह गई और हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी भाषा- भाषियों के लिए यह 'अवधविलास' सम्पादित एवं प्रकाशित रूप में उपलब्ध हो गया है ।

प्राचीन हस्तलेखों के अध्ययन में एक प्रमुख कठिनाई लिपि ज्ञान की होती है । प्राचीन लिपियाँ विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं और बोलियों में पाई जाती है । इस प्रकार उन लिपियों के सम्यक् ज्ञान के बिना प्राचीन अभिलेखों को पढ़ना एक दुष्कर कार्य है ।

'अवधविलास' की सभी प्रतियाँ देव नागरी लिपि में है अत: वे हिन्दी पाठकों के लिए दुर्गम नहीं है । किन्तु फिर भी कहीं -कहीं शिरो--रेखा विहीन शब्दों को पढ़ना कठिन होता है एक शब्द दूसरे शब्द से मिल जाते हैं तथा पूरे पद में इस प्रकार संयुक्त हो जाते हैं जिससे शब्दों को अलग अलग करना कठिन होता है ।

'अवधविलास' के पाठ निर्धारण के पूर्व यह कार्य शोध संस्थान के माध्यम से किया जा चुका है तथा संस्थान की प्रति को प्रतिलिपित करने का कार्य भी शोध छात्रा ने किया है । इस कार्य में बहुत ही सतर्कता की आवश्यकता पड़ी है । कहीं-कहीं प्रति के शब्दों को ठीक परिप्रेक्ष्य में ग्रहण करने में घंटों का श्रम भी अपेक्षित होता है ।

प्राचीन कृतियों के मूल्यांकन की एक अन्य समस्या उन प्रतियों का प्रकाशन है । प्रकाशन के अभाव में न तो वह कृतियाँ साहित्य चिंतकों, समीक्षकों को आकृष्ट कर पाती है और न ही साहित्य के इतिहास लेखकों द्वारा उन कृतियों का उल्लेख हो हो पाता है । इस क्षेत्र में यह भी उल्लेखनीय है, कि 'अवधविलास' का प्रथम बार प्रकाशन बाँदा स्थित चंददास साहित्य शोध संस्थान के द्वारा किया जा चुका है जिससे यह आशा की जाती है कि निकट भविष्य मेंयहमहत्वपूर्ण कृति विद्या प्रेमियों, साहित्य सेवियों एवं हिन्दी जगत में फैल कर अपना समुचित स्थान बना लेगी ।

प्रकाशित कृतियों के साथ एक दुर्घटना यह भी होती है कि उनका प्रकाशन व्यय इतना अधिक होता है तथा ऐसे ग्रंथों का मूल्य इतना अधिक होता है कि वे सर्वसाधारण तक नहीं पहुँच पाते । इस प्रकार प्रकाशन की समस्या अप्रकाशन की दशा में तो रहती ही है, प्रकाशन की दशा में भी बनी रहती है । शासन को चाहिए कि सस्ते मुल्य पर ऐसे ग्रंथों के प्रकाशनार्थ

सस्ता कागज उपलब्ध करावें तथा जन संस्करण हेतु उन्हें कम मूल्यों पर मुद्रित करने की व्यवस्था करें । इस क्षेत्र में स्वैच्छिक संगठनों और हिन्दी संस्थाओं का योगदान भी होना चाहिए ।

मूल्यांकन के विविध आयाम -

मूल्यांकन के अनेक आयाम होते हैं । सर्व प्रथम इस काव्य कृति का साहित्यिक महत्व निर्धारित करना है । साहित्य से हमारा आशय कवि प्रतिभा, कवि कल्पना तथा उन साहित्यिक संस्कारों से है जिसे कवि ने काव्य के माध्यम से प्रदान किया है ।

'अवधविलास' में भावना और कल्पना की कहीं भी कमी नहीं दिखाई पड़ती । यह अवश्य है कि कवि की कल्पनाएँ इतनी स्वच्छन्द नहीं है कि वे मनमानी क्रीड़ा करें, किन्तु एक बड़ी सीमा तक कवि ने कल्पनाओं को क्रीड़ा का अवसर दिया है । यही कारण है कि उन्होंने अपनी रसात्मक कल्पना से प्रबंध को वैविध्य प्रदान किया है ।

भावना के क्षेत्र में भी कवि ने जिस भावुकता और रसज्ञता का परिचय दिया है, वह भी कवि के साहित्यिक जीवन का अंग है । सम्पूर्ण काव्य लीलाविलास , सौन्दर्य लालित्य एवं विभिन्न भावों से भावित होता है । यही कारण है कि वह पाठक को रसान्दोलित करता है तथा हृदय को रसमुग्ध बनाता है ।

साधना की दृष्टि से भी 'अवधविलास' को एक विशिष्ट स्थान दिया जा सकता है । इसके रचनाकार ने ग्रंथ की प्रस्तावना में ही यह

स्वीकार किया है -

"लाल रसिक जे होहिंगे पढ़िहैं अवधविलास ।"[1]

अर्थात् जो रसिक होंगे वे 'अवधविलास' को अवश्य पढ़ेंगे । इतना ही नहीं रसिक आदर्शों का ध्यान कवि ने सम्पूर्ण प्रबंध रचना में रखा है । रसिक साधना के आदर्शों के अनुकूल ही वे राम- सीता के जीवन के संयोग के चित्रों को प्रमुखता प्रदान करते हैं, विरह के नहीं । इसी प्रकार जहाँ-कहीं कवि को अवसर मिला है, उन्होंने रसिक साधना के सूत्रों का संकेत किया है। रसिक साधना के सिद्धान्तों, आदर्शों एवं मान्यताओं को समझने में यह ग्रंथ उपयोगी सिद्ध होता है । इस सम्बंध में विस्तार से विवेचन हम पृथक कर चुके हैं ।

राम काव्य परम्परा का एक सुदीर्घ इतिहास है । वाल्मीकि से लेकर आजतक विविध भाषाओं में राम कथा की रचना की गई है । हिन्दी में रामकाव्य के प्रतिनिधि कवि गोस्वामी तुलसीदास, केशव, वंददास, मैथिलीशरण गुप्त आदि हैं । इनके प्रमुख ग्रंथ रामचरित मानस, रामचन्द्रिका रामविनोद एवं साकेत हैं । 'अवधविलास' मानसोत्तर रामकाव्य की एक प्रमुख कड़ी है । 'अवधविलास में' जहाँ एक ओर नवधाभक्ति ,त्रिपुर दाह, अहिल्या उद्धार, रावण संहार जैसी परम्परित कथाओं का समाहार करके रामकाव्य परम्परा की रक्षा की है, वहीं केशव के पाण्डित्य तथा रीतिकालीन कवियों के नायिका भेद, नख -शिख वर्णन का भी पूर्ण अवगाहन किया है। अतः 'अवधविलास' मात्र राम नाम का संकीर्तन करने वाला काव्य नहीं है, प्रत्युत ज्ञान विज्ञान की शाखाओं, प्रशाखाओं से सम्पन्न एक श्रेष्ठ काव्य है जो रामकाव्य परम्परा में अपना विशिष्ट स्थान रखता है ।

1- अवधविलास,लालदास सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित पृ0 4

रचनाकाल की दृष्टि से यह कृति 'रामचरितमानस' एवं रामचन्द्रिका की परवर्ती, किन्तु 'रामविनोद' एवं 'साकेत' की पूर्ववर्ती कृति है । रामकाव्यों में रसात्मकता और लालित्य की दृष्टि से 'रामचरितमानस' की प्रतिस्पर्धा में केवल एक ही काव्य वैददास कृत 'रामविनोद' आता है । किन्तु 'अवधविलास' के अवतरण से रामकाव्य में इस ग्रंथ के मूल्यांकन का प्रश्न खड़ा हो जाता है।

रसात्मकता की दृष्टि से इसमें तुलसी की भाँति मार्मिकता है, किन्तु तुलसी से सर्वथा भिन्न एवं मौलिक होने के कारण उनकी रसात्मकता साधनात्मक अधिक है, लोकाभिमुख कम ।

वैविध्य की दृष्टि से 'अवधविलास' 'रामचरितमानस' रामचन्द्रिका, साकेत, आदि सभी ग्रंथों की अपेक्षा कहीं अधिक वैविध्य लिए हुये है । विषय-वस्तु का विस्तार क भले ही उसमें अधिक न हुआ हो, भले ही 'अवधविलास' की कथावस्तु रामचरित मानस, रामचन्द्रिका, और रामविनोद की भाँति बालकाण्ड से उत्तरकाण्ड तक की क्रमिक कथा का निर्वाह न करती हो, किन्तु बहुलता की दृष्टि से 'अवधविलास' रामकाव्य परम्परा के ग्रंथों में सर्वाधिकार महत्वपूर्ण है ।

इसी प्रकार सरलता की दृष्टि से भी इस काव्य को विशेष महत्व दिया जा सकता है । रामचरितमानस सरल होकर भी 'अवधविलास' की अपेक्षा अधिक क्लिष्ट है । केशव की 'रामचन्द्रिका' 'अवधविलास' की अपेक्षा अधिक क्लिष्ट है । वैददास का 'रामविनोद' सम्पूर्ण कथा को गुरुगोविन्द तथा राष्ट्रीय चरित्र नायकों के रूपक से रामकथा प्रस्तुत करने के कारण श्लेषार्थ गुण प्रधान प्रबंध है । 'साकेत' भी 'अवधविलास' की सरलता

को नहीं छू पाता । अन्य रामकाव्यों से 'अवधविलास' कहीं अधिक सरल है। अत: सरलता को यदि काव्य का मुख्य गुण मान लिया जाये तो 'अवधविलास' इस दृष्टि से एक बड़े महत्व का अधिकारी है । सरलता अपने आप में भले ही कोई विशिष्ट गुण न हो, किन्तु जन प्रेषणीयता की दृष्टि से इसका महत्व बढ़ जाता है । साहित्यिक ग्रंथ प्राय: स्तरीय भाषा में लिखे जाते हैं । स्तरीयता से नीचे आने पर कहीं कहीं भाषा सरल हो जाती है, किन्तु भाव गरिमा नष्ट होने लगती है । 'अवधविलास' के कवि ने यही कठिन कार्य किया है । उन्होंने एक ओर भाषा को सरल किया है, दूसरी ओर साहित्यिक संस्कारों को सरल भाषा में जनप्रेषणीय बनाया है। अत: सरलता का निकष 'अवधविलास' के मूल्यांकन का एक बड़ा आधार बन सकता है ।

पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव -

लालदास का काव्य अपनी पूर्ववर्ती संस्कृतियों दार्शनिक विचार धाराओं एवं काव्य परम्पराओं को अपने भीतर लेकर चलने वाला काव्य है । एक बहुश्रुत एवं बहुज्ञ कवि के काव्य ग्रन्थ 'अवधविलास' में पूर्ववर्ती प्रभावों का पड़ना स्वाभाविक है। संक्षेप में उस प्रभाव का परिलक्षण इस प्रकार किया जा सकता है -

तुलसी और सूर का प्रभाव -

तुलसी- उभय बीच सिय सोहति कैसे । ब्रह्म जीव बिच माया जैसे[1] ।।
लालदास- ब्रह्म जीव बिच माया जैसे । राम लषन मध्य जानकी तैसे[2] ।।

1- रामचरित मानस , तुलसी, अयोध्या काण्ड

2- अवधविलास, लालदास सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 394

तुलसीदास - जिन्ह कैं रही भावना जैसी । प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी[1] ।।

लालदास - जाके जौन भावना आई । ताके तस होइ देइ देखाई[2] ।।

तुलसीदास- तुलसी अपने राम को रीझि भजौ चहे खीज ।
उलटो सूधौ जमिहै खेत परे को बीज[3] ।।

लालदास - बैर प्रीति तुम्ह सौं जिन्ह लाई । रीझि खीझि दोऊ गति दाई[4]।।

तुलसीदास- मन जाहिं राचेउ मिलहि सो बरू सहज सुंदर साँवरो[5]।।

लालदास- जोइ सुरत हिय में रही रेखी । सोइ मूरति नैनन्ह करि देखी[6]।।

तुलसीदास - नव गुण परम पुनीत तुम्हारे[7] ।।

लालदास - रिजु तपस्वि संतुष्ट सम दाता दीन दयाल ।
जित इन्द्री औ सत्यता ए नव गुण कहे लाल[8] ।।

तुलसीदास- द्वार पाल हरि के प्रिय दोऊ । जय अरू विजय जान सब कोउ ।।
विप्र श्राप तें दुनउ भाई । तामस असुर देह तिन्ह पाई ।।
कनक कसिपु अरू हाटक लोचन । जगत बिदित सुरपति मद मोचन ।।
विजई समर बीर विख्याता । धरि बाराह बपु एक निपाता।।

1- रामचरित मानस ,तुलसी , बालकाण्ड

2- अवधविलास,लालदास, सं0 डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 394

3- दोहावली , तुलसी

4- पा0 टि0 दो के समान , पृ0 347

5- रामचरित मानस, तुलसी , बालकाण्ड

6- पा0टि0 चार के समान, पृ0 350

7- रामचरित मानस, तुलसी,बालकाण्ड

8- पा0टि0 छः के समान , पृ0 160

होइ नरहरि दूसर पुनि मारा । जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा ।।
भए निसाचर जाइ तेइ महाबीर बलवान ।
कुंभकरन रावन सुभट सुर बिजई जग जान[1] ।।

लालदास- जय अस विजय सुनै हरषानै । जस अद्भके तस नाहिं गिरानै ।।

x x x

इह कहि जबहिं परै मुरझाई । असुर जोनि जनमें इहाँ आई ।।

x x x

एक जन्म भये अति अघधामा । हिरण्यकश्यप हिरण्याक्ष हे नामा ।।
होइ बराह हते हिरण्याक्षा । हिरण्यकश्यप नर हरि होई त्राक्षा ।।
द्वितिय जन्म भए असुर सुरारी । कुम्भकर्ण रावण भयकारी[2] ।।

तुलसीदास- बिस्व भरन पोषन कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई[3] ।।

लालदास- पोषन भरन करै जो कोई । ताको नाम भरत अस होई[4] ।।

तुलसीदास - कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि । कहत लखन सन रामु हृदय गुनि[5] ।।

लालदास- नूपुर कंकन किंकणी आभूषण आघात ।
लाल जुवति कोमल गिरा सुनि मुनि मन बलि जात[6] ।।

तुलसीदास - धीरज धर्म मित्र अरु नारी । आपद काल परखिअहिं चारी[7] ।।

लालदास - ग्रन्थन्ह चारि मित्र हैं भाषा । विद्या धन त्रिय धर्म जु राखा[8] ।।

तुलसीदास - जगत मातु पितु संभु भवानी । तेहिं सिंगारु न कहउँ बखानी[9] ।।

1- रामचरित मानस , तुलसी , बालकाण्ड
2- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 74
3- रामचरित मानस ,तुलसी , बालकाण्ड
4- पा० टि० दो के समान , पृ० 262
5- रामचरित मानस, तुलसी , बालकाण्ड
6- पा० टि० दो के समान, पृ० 74
7- रामचरित मानस ,तुलसी, बालकाण्ड
8- पा०टि० दो के समान, पृ० 145
9- रामचरित मानस, तुलसी, बालकाण्ड

लालदास- रूप अपार बहुत छवि होई । तातैं कवि वरनत नहिं कोई[1] ।।

तुलसीदास- नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्[2] ।

लालदास- बहुत कथा बहु ग्रंथ की उक्ति अनूठ अनंत[3] ।।

तुलसीदास- तात राम नहिं नर भूपाला । भुवनेश्वर कालहु कर काला[4] ।।

लालदास- राम काल के काल हैं माता जानत नाहिं[5] ।।

तुलसीदास- जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं । तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं[6] ।।

लालदास- नौमी राम जन्म कौं जेते । आवत हैं तीरथ सब तेते[7] ।।

तुलसीदास- नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं । अवगुन आठ सदा उर रहहीं[8] ।।

लालदास- औगुन जानि नारि नहिं ब्याही[9] ।।

तुलसीदास - परहित सरिस धर्म नहिं भाई । पर पीड़ा नहिं सम अधमाई[10] ।।

लालदास- पर पीड़ा सोइ पाप है पुन्य है पर उपकार[11] ।।

तुलसीदास- मिलेहि माझ बिधि बात बेगारी । जहँ तहँ देहिं कैकइहि गारी ।।

x x x

एक कहहिं भल भूप न कीन्हा । बरु बिचारि नहिं कुमतिहि दीन्हा[12] ।।

लालदास- गारी देहिं रिसाइ रिसाई । कैकइ तोहि कवन मति आई ।।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 128
2- रामचरित मानस, तुलसी , बालकाण्ड
3- पा०टि० एक के समान, पृ० 3
4- रामचरित मानस, तुलसी, सुन्दर काण्ड
5- पा० टि० एक के समान, पृ० 299
6- रामचरितमानस, तुलसी, बालकाण्ड
7- पा०टि० एक के समान, पृ० 277
8- रामचरित मानस ,तुलसी, लंकाकाण्ड
9- पा०टि० एक के समान, पृ० 318
10- रामचरितमानस, तुलसी ,उत्तरकाण्ड
11- पा०टि० के समान, पृ० 169
12- रामचरितमानस, तुलसी, अयोध्याकाण्ड

x x x

मीजहिं हाथ लोग पछिताहीं । राजा काज कीन्ह भल नाहीं ।।[1]

तुलसीदास- कीन्ह बिबिध तप तीनिहुँ भाई । परम उग्र नहिं बरनि सो जाई ।
गए विभीषन पास पुनि कहेउ पुत्र बर मागु ।
तेहिं मागेउ भगवंत पद कमल अमल अनुरागु[2] ।।

लालदास- इह निश्चय करि तीनेउ भाई । चले करन तप ही मन आई ।।
कुम्भकरन निद्रा लइ माँगी । भक्ति विभीषन हरि अनुरागी[3] ।।

सूरदास- रूप रेख गुन जाति जुगति बिनु निरालम्बकित चकित धावै ।
सब बिधि अगम विचारै तातै सूर सगुन लीला पद गावै[4] ।।

लालदास- निर्गुण रूप कहा कहि भाई । रूप रेष कछु जानि न जाई[5] ।।

सूरदास- चरण कमल बंदौ हरिराई ।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे को सब कुछ दरसाई ।
बहिरो सुनै मूक पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराई[6] ।।

लालदास- जौ पै कृपा करै हरिराई । तौ सबहीं बनै बिना बनाई[7] ।।

सूरदास- प्रीति कर काहू सुख न लह्यौ[8] ।।

लालदास- दुष को मूल सनेह न कीजै[9] ।।

1- अवधविलास, लालदास , सं0डाँ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 389

2- रामचरित मानस, तुलसी, बालकाण्ड

3- पा0टि0 के एक के समान ,पृ0 83-84

4- सूरसागर, सूरदास,

5- पा0टि0 एक के समान, पृ0 240

6- सूरसागर, सूरदास

7- पा0टि0 एक के समान, पृ0 380

8- सूरसागर, सूरदास

9- पा0टि0 एक के समान, पृ0 27।

जायसी और लालदास-

जायसी सूफी प्रेम काव्य धारा के प्रतिनिधि कवि हैं । लालदास रसिक साधना के कवि है । दोनों के काव्य की मूल प्रकृति प्रेम पर आधारित है। जायसी के काव्य का प्रभाव लालदास में यत्र-तत्र परिलक्षित होता है । कतिपय प्रसंग प्रस्तुत किए जा रहे हैं-

जायसी- दाहिने मिरिग आइगा धाई । बाएँ कहत सियार भलाई[1] ।।
लालदास- तीसर मृग दाहिने सुखदाई[2] ।

जायसी- औ बिनती पंडितन्ह सो भजा । टूट संवारेहु मेरएहु सजा[3] ।।
लालदास- पंडित जे वक्ता कविराई । अस जे कथा सुनै मन लाई[4] ।।

जायसी- सात सरग जौं कागर करई । धरती सात समुद्र मसि भरई[5]।।
लालदास- कागद जौं वसुधा सब करिए । मसि हानी लै सागर धरिए[6] ।।

केशव और लालदास-

लालदास ने केशव के काव्यको 'विकट' कहा है तथा उसके विपरीत अपने काव्य को 'सरल' बताया है । अत: कवि का दृष्टिकोण केशव से भिन्न होने के कारण उस पर केशव का एक बड़ी सीमा तक प्रभाव नकारा गया है, किन्तु यत्र-तत्र केशव का जो प्रभाव परिलक्षित होता है उसका कारण लालदास द्वारा अपने पूर्ववर्ती केशव का अध्ययन प्रतीत होता है । उदाहरण

1- पद्मावत, जायसी, जोगी खण्ड, सं0 वासुदेव सरण अग्रवाल,पृ0 152
2- अवधविलास,लालदास, सं0डॉ0 चन्द्रिकाप्रसाद दीक्षित, पृ0 172
3- पद्मावत, जायसी, स्तुति खण्ड, सं0 वासुदेव सरण अग्रवाल,पृ02
4- पा0टि0 दो के समान,पृ0 10
5- पद्मावत , सं0 वासुदेव सरण अग्रवाल
6- पा0टि0 दो के समान, पृ0 16

के लिए एक प्रसंग दृष्टव्य है -

केशव- कहि मुंदरी अब त्रियन की को करिहै परतीत[1] ।

लालदास- कौन प्रतीति त्रियन्ह की बातै[2] ।

<u>बिहारी और लालदास -</u>

रीतिकालीन कवियों में बिहारी के प्रभाव से प्राय: कम ही कवि अप्रभावित रहे हैं । लालदास का क्षेत्र यद्यपि बिहारी से भिन्न है, वे रीति प्रवृत्तियों के पोषक न होकर भक्ति से अनुप्राणित हैं जहाँ कहीं कवि को रीति शैली से लिखने का अवसर मिला है, वहाँ बिहारी का प्रभाव आंशिक रूप से परिलक्षित होता है । ऐसे स्थलों में विशेष रूप से नख-शिख वर्णन आदि को लिया जा सकता है । उदाहरण में एक प्रसंग दृष्टव्य है -

बिहारी- पाँव महावर देन को नाइन बैठी आय
फिर फिर जान महावरी एड़ी मोड़त जाय[3] ।

लालदास- कोमल चरण लाल रंग भीनें । नाउनि कबहुँ न जावक दीनें[4] ।

<u>पूर्ववर्ती संस्कृत काव्य, नीति, सूक्ति साहित्य एवं लालदास -</u>

भामह - अकवित्वमधर्माय व्याधये दण्डनाय वा ।
<u>कुकवित्वं पुन: साक्षाद् मृतिमाहुर्मनीषिण:</u>[5] ।।

लालदास- <u>कुकबि झूठ बोलै नहि लाजै मूरष के मरै बेकाजै</u>[6] ।।

राजशेखर - उक्ति विशेष: काव्यं भाषा या भवति सा भवतु[7] ।।

लालदास- कवि जन उक्ति विशेष बखानी । भाषा जैसी-तैसी जानी[8] ।।

1- रामचन्द्रिका, केशव, टी0भगवान दत्त उपाध्याय, लीथो प्रति, पृ0 10
2- ~~लालदास~~ अवधविलास,लालदास, सं0डाॅ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0386
3- बिहारी सतसई, बिहारी,
4- पा0टि0 दो के समान, पृ0 29।
5- काव्यालंकार , आचार्य भामह, 1/12
6- पा0टि0 दो के समान, पृ0 11
7- कर्पूरमंजरी (काव्यमाला) राजशेखर ,पृ0 9
8- पा0टि0 दो के समान, पृ0 12

कालिदास- जगत: पितरौ बन्दे पार्वती परमेश्वरौ[1] ।।

लालदास- रूप अपार बहुत छवि होई । तातैं कवि बरनत नहिं कोई[2] ।।

कालिदास- मन्द: कवियश: प्रार्थी गमिष्यामि उपहास्यताम् ।
प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामन:[3] ।।

लालदास- मैं मूरख कछु नाहिं बिबेका । रामचरित गुन आहि अनेका ।
तिन्हहिं कह्यौ चाहत हौं ऐसे । बवना चंद गह्यौं चहे जैसे[4] ।।

कालिदास- वशिष्ठ मंत्रोक्षणजात्प्रभावादुदन्वदाकाशमहीधरेषु ।
मरुत्सखस्येव बलाहकस्य गतिर्विजघ्ने न हि तद्रथस्य[5] ।।

लालदास- मंत्र जुक्त रथ रचि ततकाला । धरे शस्त्र बहु तेज विशाला ।।
बोले गुरू बशिष्ठ सुहाती । पठवहु बान बाँधि लिपि पाती[6] ।।

कालिदास- उपात्त विद्यो गुरुदक्षिणार्थी कौत्स: प्रपेदे बरतन्तु शिष्य:[7] ।

लालदास- गुरू बर्तन्त नाम है जाको । शिष्य सुबुद्धि है कौत्सव ताको[8] ।।

मङ्खक - विना न साहित्य विदा परत्र
गुण: कथञ्चित् प्रथते कवीनाम् ।
आलम्बते तत्क्षणमम्भसीव
विस्तार मन्यत्र न तैल बिन्दु:[9] ।

लालदास- तैल बूँद जल माँहि जिमि परत करत विस्तार[10] ।।

1- रघुवंश, कालिदास, 1/1
2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 128
3- रघुवंश, कालिदास, 1/3
4- पा0टि0 दो के समान, पृ0 15
5- रघुवंश, कालिदास, 5/27
6- पा0टि0 दो के समान, पृ0 155
7- रघुवंश, कालिदास, 5/1
8- पा0टि0 दो के समान, पृ0 146
9- भारतीय साहित्य शास्त्र में उद्धत, मङ्खक, सं0टि0 अवधविलास, पृ0 37
10- पा0टि0 दो के समान, पृ0 37

चाणक्य- विद्या मित्रं प्रवासे च भार्या मित्रं गृहेषु च[1]।
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च ।।

लालदास- भीर परे धन मित्र है होई । धर्म मित्र परलोक है सोई ।।
त्रिया मित्र गृह एक ठिकाना । विद्या मित्र विदेस बषाना[2] ।।

चाणक्य - एकाक्षर प्रदातारं यो गुरुं नाभिवन्दते ।
श्वानयोनिशतं भुक्त्वा चाण्डालेष्वभिजायते[3] ।।

लालदास- अक्षर एक दान देइ काही । गुरु करि जौन मानिएँ ताही ।
श्वान जौनि पावै सत सोई । भेटत गुरुहि जगत महँ कोई[4] ।।

लालदास के काव्य में यत्र-तत्र सूक्तियों और नीतिकथनों का भी प्रभाव परिलक्षित होता है । कुछ स्थानों में तो इनका अविकल अनुवाद भी देखने को मिलता है । कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं -

(1) न वेत्ति यो यस्य गुण प्रकर्षम्
स तं सदा निन्दति नात्र चित्रम्
यथा किराती करि कुम्भ जातां
मुक्तां परित्यज्य बिभर्ति गुञ्जाम्[5] ।।

लालदास- जो जाको गुण शील न जाने । सो ताको निंदा नित ठाने ।
छीर समुद्र मीन मति हीना । अमृतभय चँद्रहिं नहिं चीना ।।
गुन्जा भील सीस ले धरहीं । गज मुक्ता अन आदर करहीं[6] ।।

1- चाणक्य नीति, चाणक्य, 13/17
2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 146
3- चाणक्य नीति, चाणक्य, 13/20
4- पा0टि0 दो के समान , पृ0 ~~186~~ 156
5- संस्कृत लोकोक्ति संग्रह, संग्रहकर्ता एवं सं0 पं0 धरणीधर बाजपेयी एवं पं0 बाल कृष्ण भट्ट, पृ0 142
6- पा0टि0 दो के समान, पृ0 73

§ 2§ न गृहं गृहमित्याहु: गृहिणी गृहमुच्यते[1] ।

लालदास- घर को घर कहियत है नाहीं । गृहनी गृह जानहु जग माहीं[2] ।।

§ 3 § व्यये कृते वर्द्धत एव नित्यं विद्या धनं सर्व धनं प्रधानं[3] ।

लालदास- और सकल धन जाइ बिलाई । विद्या धन दिन- दिन अधिकाई[4] ।।

§ 4 § आहारे व्यवहारे च त्यक्त लज्ज: सुखी भवेत्[5] ।

लालदास- लाल अहार बिवहार महिं लज्जा आठ निवारि[6] ।।

§ 5 § शैले-शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे - गजे ।
साधवो नहि सर्वत्र चंदनं न वने - वने[7] ।।

लालदास- धातु रतन गिरि गिरिनहिन गज- गज शिर मणि नाहिं ।
लाल साधु जहं तहं नहिन चन्दन बन- बन माहिं[8] ।।

§ 6 § शशिनि खलु कलंक: कंटकं पद्मनाले
युवति कुच निपात: पक्वता केश जाले ।
जलधि जलमपेयं पंडिते निर्धनत्वं
वयसि धन विवेको निर्विवेको विधाता[9] ।।

लालदास- बिधना रचत चूकि न संभारे । चंद कलंक सिंधु किए खारे ।
कोइल स्याम मयुर पग धारा । कामधेनु पशु कमल कटारा[10] ।।

1- संस्कृत लोकोक्ति संग्रह, संग्रहकर्ता एवं सं०प० धरणीधर बाजपेयी एवं प० बालकृष्ण भट्ट

2- अवधविलास लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 75

3- संस्कृत लोकोक्ति संग्रह, पृ० 310

4- पा०टि० दो के समान, पृ० 145

5- संस्कृत लोकोक्ति संग्रह

6- पा०टि० दो के समान,पृ०105

7- संस्कृत लोकोक्ति संग्रह, पृ० 340

8- पा०टि० दो के समान, पृ० 72

9- सुभाषित रत्न भाँडागार ,देवाख्यान, श्लोक 85

10- पा०टि० दो के समान,पृ० 151

अमरकोष और लालदास -

अमरकोष - सूर सूर्यर्यमादित्यद्वादशात्मदिवाकरा:
भास्कराहस्कर ब्रध्न प्रभाकर विभाकरा: ।।
भास्वद्विवस्वत्सप्ताश्व हरिदश्वोष्णरश्मय: ।
विकर्तनार्कमार्तण्डमिहिरारुण पूषणा: ।।

x x x

कर्मसाक्षी जगच्चक्षु लोकबन्धु स्त्रयीतनु:
प्रद्योतनो दिनमणि: खद्योतो लोकबान्धव: [1] ।।

लालदास- सूर्य सूर दिवाकर कहिऐ । आदित्य द्वादस आत्मा है ऐ ।।
अहकर भास्कर हंस विभाकर । भास्वत सविता प्र तपन प्रभाकर ।।
सप्तास्व रिवि अर्क अरुन गनि । हरिता अस्व ग्रिहपति अरु दिनमनि।।
पूषन सुरतम द्यु मनि विरोचन । अहपति मित्र तरनि जग लोचन ।।

x x x

मिहर मिर्तंड त्रै तन आक्षी । अंसुमाल एक कर्म है साक्षी ।।
प्रद्योतो तुषमति कहि भाषा । लोक बांधव नाम है राषा [2] ।।

अमरकोष- असुरा दैत्यदैतेयदनुजेन्द्रारिदानवा:
शुक्रशिष्या दितिसुता: पूर्वदेवा: सुरद्विष [3] : ।।

लालदास- असुर दैत्य दैत्येय दानव । पुनि इंद्रादि दनुज भष मानव ।।
दिव्य सुत राक्षस कौनप सुर द्विष । पूर्वदेव शुक्र सिस्य मुष विष [4] ।।

अमरकोष- हिमांशुश्चन्द्रमाश्चन्द्र इन्दु: कुमुदबान्धव:
विधु: सुधांशु: शुभ्रांशुरोषधीशो निशापति:

1- अमरकोष , प्रथम काण्ड, दिग्वर्ग, 28 से 41
2- अवधविलास,लालदास सं0 डॉ0 चिन्द्रका प्रसाद दीक्षित,पृ0 204
3- अमरकोष, प्रथम काण्ड, स्वर्ग वर्ग, 12
4- पा0टि0 दो के समान, पृ0 208

अब्जो जैवातृकः सोमो ग्लौर्मृगाङ्कः कलानिधिः
द्विजराजः शशधरो नक्षत्रेशः क्षपाकरः[1] ।।

लालदास- चंद्र चन्द्रमा इंदु हिमांसु । कुमुद है बांधव और सुधांसु ।।
बिधु हिमकर हिम रोच निशापति । औषधीश सुभाश नषतपति ।।
सोम सुधाकर ग्लौ बषाना । आतृक अब्जो नो कै बाना ।।
एक मृगांक कलानिधि होई । शशधर शशि द्विजराज है सोई ।।
एक छपाकर नाम कहाए । नाम नक्षत्र ईश एक पाए[2] ।।

अमरकोष- ब्राम्ही तु भारती भाषा गीर्वाग्वाणी सरस्वती ।
व्याहार उक्तिर्लपितं भाषितं वचनं वचः[3] ।।

लालदास- ब्राम्ही वाक भारती बानी । भाषा व्याहरगी बच बानी ।।
उक्ति सरस्वती भाषित लपितं । बचन जलपनं कथित जपितं[4] ।।

स्मृति एवं लालदास -

मनुस्मृति - पंच सूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः ।
कण्डनी चोद कुम्भश्च वध्यते यास्तु वाहयन् ।।
तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः ।
पंच क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम् ।।
अध्यापनं ब्रम्हयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्[5] ।।

लालदास- पातक पंच होत नित जनहीं । सूना पंच कहत बुध तिन्हहीं ।।
ऊपरि जांत बढ़नि अरु चुल्ही । गागरि पानि रहत तेहिं मूली ।।

1- अमरकोष, प्रथम काण्ड, दिग्वर्ग, 13-14

2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 207

3- अमरकोष, प्रथम काण्ड, शब्दादिवर्ग, 1

4- पा0टि0 दो के समान, पृ0 209

5- मनुस्मृति, 3/68, 3/69, 3/70

करै पंच जग्य बेद बखानी । सो निहपाप रहै नित प्रानी ।।
पुजा देव होम अरु श्राधा । जप स्वल अरु अतिथि अराधा ।।
जग्य शेष भोगी जे होई । पातक ताहि लगै नहिं कोई ।।[1]

मनुस्मृति- ब्राह्मायों देवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्त था ऽऽसुरः
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ।।[2]

लालदास- ब्रह्म देव आरष असुर प्रजापती गंधर्व ।
राक्षस पुनः पिसाच एक अष्ट ब्याह है सर्व ।।[3]

मनुस्मृति- पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने ।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति ।।[4]

लालदास- बाल पिता भर्ता युवा बृद्ध पुत्र रखवाल ।
कबहुं न होत स्वतंत्रता त्रिय परबस कहै लाल ।।[5]

सम्वर्त स्मृति-विद्या दानेन पुण्येन ब्रह्मलोके महीयते[6]
भूता भय प्रदानेन सर्व कामावाप्नुयात् ।[6x]
दीर्घमायुश्च लभते सुखी चैव तथा भवेत्।।[7]
औषधं स्नेहमाहारं रोगिणां रोगशान्तये ।
दत्वा स्याद्रोगरहितः सुखी दीर्घायुरेव च ।[8]
अन्नदानात् परंदानं विद्यते न हि किञ्चन ।
अन्नाद् भूतानि जायन्ते जीवन्ति च संशयः ।।[9]

लालदास- विद्या अभय औषधी धाना । वारि दान महादान बखाना ।।[10]

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 31-32
2- मनुस्मृति, 3/31
3- पा० टि० एक के समान ,पृ० 369
4- मनुस्मृति 9/3
5- पा०टि० के समान, पृ० 355
6- सम्वर्त स्मृति, 89
7- सम्वर्त स्मृति, 53
8- सम्वर्त स्मृति, 59
9- सम्वर्त स्मृति , 93
10- पा०टि० एक के समान , पृ० 146

श्रीमद्भगवद्गीता और लालदास -

गीता- ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।[1]

लालदास- जो जेहि भाँति भजत है मोही । मैं हों ताहि भजत करि तोही ।।[2]

गीता- कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मण: ।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गति: ।।[3]

लालदास- कर्म अकर्म विकर्म है भेदा । समुझत तिन्हहिं लहत कवि भेदा ।।[4]

गीता- चतुर्विधा भजन्ते मां जना: सुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।।[5]

लालदास- चारि विधा मोकहुँ भजत जना सुकृती देष ।
आरत जिज्ञासु अर्थी ज्ञानी लाल विशेष ।।[6]

गीता- अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रह: ।।[7]
इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च ।
जन्ममृत्युजराव्याधिदु:खदोषानुदर्शनम् ।।[8]
असक्तिरनभिष्वङ्ग: पुत्रदारगृहादिषु ।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ।।[9]
मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी ।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ।।[10]

1- श्रीमद्भगवद्गीता, 4/11
2- अवधविलास, लालदास , सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 94
3- गीता, 4/17
4- पा0टि0 दो के समान , पृ0 34
5- गीता, 7/16
6- पा0टि0 दो के समान, पृ0 97
7- गीता, 13/7
8- उपरिवत्, 13/8
9- उपरिवत्, 13/9
10- उपरिवत्, 13/10

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्वज्ञानार्थदर्शनम् ।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ।।[1]

लालदास- अमानि अदंभ अहिंसा क्षांती । सौचाचार्य उपासन दांती ।।
स्थैर्य आर्जव आत्म निग्रह । इंदियार्थ बिराग अपरिग्रह ।।
जन्म मरण रोगा अनुदरसन । अनअहंकार विषय नहिं परसन ।।
पुत्र दार गृह आदि असक्तिहिं । इष्ट अनिष्ट समान असक्तिहिं ।।
रहै बिबिक्त जन भीर निवारै । नित अध्यातम ज्ञान बिचारै ।।
इहै ज्ञान श्री कृष्न है राशा । भारत महिं अर्जुन सौं भाषा ।।[2]

गीता- हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतय: ।
प्राधान्यत: कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ।।[3]

लालदास- सोभा गुन श्रीमंत जे लाल देषि धरि ध्यान ।
इहु बिभूति गीता कह्यो सर्व बीज भगवान ।।[4]

गीता- गहना कर्मणो गति: ।[5]

लालदास- कर्म महागति कहन बताई ।[6]

पौराणिक साहित्य और लालदास -

अध्यात्मरामायण - लक्षणान्वितं शत्रुघ्नं शत्रुहन्तारमेव गुरुरभाषत ।[7]

लालदास- शत्रु होइ ताहि मारि बहावै । सोइ नाम शत्रुघ्न पावै ।।[8]

वाल्मीकि रामायण - कुम्भकर्णस्तु तद्वाक्यं श्रुत्वा वचनमब्रवीत् ।

1- श्रीमद्भगवद्गीता, 13/11

2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 166

3- गीता, 10/19

4- पा0टि0 दो के समान, पृ0 265

5- गीता, 4/17

6- पा0टि0 दो के समान, पृ0 32

7- अध्यात्म रामायण, 1/3/40-41

8- पा0टि0 दो के समान, पृ0 262

स्वप्तुं वर्षाण्यनेकानि देववेद ममेप्सितम् ।।
परमापद्गत स्यापि धर्मे मम मतिर्भवेत् ।।[1]

लालदास- कुम्भकरन निद्रा लई मांगी । भक्ति विभीषन हरि अनुरागी ।।[2]

वाल्मीकि रामायण- ग्रहोत्क्रामं तं गृह्य रक्षामीश्वर हरिः ।।
कुमुत्पपात वेगेन कृत्वा कक्षावलम्बिनम् ।।[3]

लालदास- बालि बगल रह्यो कछु उन भाख्यो । पलना बाँधि पिलौना राख्यौ ।।[4]

शिवपुराण - निर्भरस्य क्रोध संयुक्ता वृन्दा वचनमब्रवीत ।
{वृन्दोवाच} धिक् तदेवं हरे शीलं परदाराभिगामिनः
ज्ञातोऽसित्वं मया सम्यङ्मायी प्रत्यक्षतापसः।
यौ त्वया मामया ख्यातौ स्वकौ यौ दर्शितौ मम
तावेव राक्षसौ भूत्वा भार्यां तव हरिष्यतः ।
त्वं चापि भार्यादुः खार्तो बनेकपि सहायवान्
सर्वेश्वरेणायं यस्ते शिष्यत्वमागतः ।[5]

लालदास- मन्दिर मिले रहे इक सङ्ग । बृन्दा को पतिव्रत कियो भङ्ग ।।

x x x

वृन्दा शाप दयो फल पैहैं । तेरो औ नारि असुर लै जैहैं ।।
जिन्ह दोउ बोर मोहि डरवाई । कबहुँ कि तोहि होइ दुख दाई ।।[6]

वृन्दा श्राप के सन्दर्भ में शिवपुराण के अतिरिक्त स्कंदपुराण एवं पदम पुराण का प्रभाव भी लालदास में परिलक्षित होता है -

स्कंदपुराण- यौ त्वया मायया द्वाःस्थौ स्वकोयौ दर्शितौ मम ।

1- बाल्मीकि रामायण, 10/44-45, 10/30{उत्तरकाण्ड}

2- अवधविलास, लालदास, सं०डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 84

3- बाल्मीकि रामायण, उत्तरकाण्ड, 34/21

4- पा०टि० दो के समान, पृ० 86

5- महाशिवपुराण, रुद्र संहिता, युद्ध खण्ड, श्लोक 40,41,44,45

6- पा०टि० दो के समान , पृ० 138

तावेव राक्षसौ भूत्वा भार्यां तव हरिष्यत: ।।[1]

पाद्म पुराण- अहं मोहं यथा नीता त्वया माया तपस्विना
तथा तव वधू माया तपस्वी कोऽपि नेष्यति ।[2]

शिव पुराण- विलोक्य रुद्र भागं नो प्राप्यावज्ञां च तत्पत: ।
विनिन्द्य तत्र तान्सर्वान्देह त्यागमथाकरोत् ।[3]

लालदास- बलि विभाग देवन्ह के लेषा । महादेव को भाग न देषा ।।
शिव अपमान जान सरमानी । परी अग्नि महं जरी सयानी ।।[4]

महाभारत- ततो मय: स्वतपसा चक्रे धीमान् पुराणि च ।
त्रीणि कांचनमेकं वैरोप्यं कार्ष्णायसं तथा ।।
एकैकं योजनशतं विस्तारायामत: समम् ।
गृहाहालक संयुक्तं बहुप्रकारतोरणम् ।।[5]

लालदास- त्रिपुर दैत्य पुर तीन बनावा । कंचन तांब रुप मय भावा ।।
x x x
मनिमय कनक कंगुरे राजे । तोरन ध्वजा अनेक बिराजे ।।[6]

विष्णु पुराण- एकार्णवं भवत्येतत्त्रैलोक्यमखिलं तत: ।[7]

मत्स्य पुराण - संवर्तो भीमनादश्च द्रोणश्चण्डो बलाहक: ।
विद्युत्पताक: शोणस्तु सप्तैते लयवारिदा: ।।
अग्निप्रस्वेदसम्भूता: प्लावयिष्यन्ति मेदिनीम् ।

1- स्कंदपुराण, 21/28

2- पद्मपुराण, उत्तरखण्ड, 16/55

3- शिव पुराण, रुद्र संहिता, सती खण्ड , 28

4- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 235

5- महाभारत कर्ण पर्व, 33/17, 33/19

6- पा०टि० चार के समान, पृ० 111

7- विष्णु पुराण, अंश 6, 3/1

समुद्रा: क्षोभामागत्य चैकत्वेन व्यवस्थिता: ।।[1]

लालदास- एक समय इक कल्प के अंता । महा प्रलय जल बढ़े अनन्ता ।।[2]

श्रीमद्भागवत- श्रवणं कीर्तनं विष्णो: स्मरणम् पाद सेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम् ।।[3]

लालदास- नवधा भक्ति के नव हैं प्रकारा । जाके करत मिटत संसारा ।।
जन्म कर्म हरि जू के नाना । श्रवन सुनै नित कथा पुराना ।।
कीरतनं गुन कीरति भाषै । सुमिरन हरि मूरति मन राषै ।।
सेवन चरण करै नित पूजा । प्रतिमा रामहिं भेद न दूजा ।।
अर्चन मन्दिर रचना करई । केशरि चंदन हरि कहँ भरई ।।
बन्दन भक्ति जाहि को नामा। बारम्बार जु करै प्रनामा ।।
मथुरा आदि धाम है जेते । दासि भक्त देषै जाइ तेते ।।
हरि के काज टहल करै जोई । दासा तन कहियत है सोई ।।
प्रभु के संग निरंतर रहिये । सषा भक्ति ताही सौं कहिये ।।
तन मन धन हरि जू कौं देई । भक्ति निवेदन कहियतु एई ।।[4]

वाल्मीकि रामायण - ववर्ष रुधिरं देवो मेघाश्च खरनि: स्वना: ।
प्रबभौ न च सूर्यो वै महोल्काश्चापतन् भुवि ।।
चकम्पे जगती चैव ब वुर्वाता सुदारुणा: ।
अक्षोम्य: क्षुभितश्चैव समुद्र: सरितां पति: ।।[5]

लालदास- रावन जन्म भयो जेहि बारा । उठे अरिष्ट अनेक प्रकारा ।
टूटै लूक धूरि उधिरानी । बरषै रुधिर भूमि थहरानी ।।
बिन बादर घहरान अकासा । बिजुरी तरकि रही चहुँ पासा ।।
चले पवन आँधी अरु पानी । उपरे रूष शिला उधिरानी ।।
गऊ रुदन मुनि बदन मलीना । देव विमान भए गति हीना ।।
तीरथ जल जहँ तहँहि झुराने । ठौर -ठौर देवल भहराने ।।

1- मत्स्य पुराण , 2/7, 8,9
2- अवधविलास,लालदास सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 115
3- श्रीमद्भागवत, 7/5/23
4- पा0टि0 दो के समान, पृ0 13
5- वाल्मीकि रामायण , उत्तरकाण्ड , 9/31-32

घर -घर भर कलह विस्तारा । बोलै चौस सियार किकारा[1] ।।

वाल्मीकि रामायण - गणिकास्तत्र गच्छन्तु रूपवत्यः स्वलंकृताः

प्रलोभ्य विविधोपायैरानेष्यन्तीह सत्कृताः ।

वारमुख्यास्तु तच्छ्रुत्वा वनं प्रविविशुर्महत् ।

आश्रमस्याविदूरेऽस्मिन् यत्नं कुर्वन्ति दर्शने ।

श्रुत्वा तु वचनं तासां सर्वासां हृदयंगमम् ।

गमनाय मतिं चक्रे तं च निन्युस्तथा स्त्रियः[2] ।

लालदास- कहन लगे जे लोग सयाने । स्रिंगी रिषि जेहि भांतिन्ह आने ।।

x x x

अति स्वरूप रहि अद्भुत रवनी । केउ कहत गणिका तहँ गवनी ।।

x x x

हँसि मुसिक्याइ कहे जब राजा । बेगिहिं जाइ करहु इह काजा ।।

x x x

करिए जाइ उपाइ सुहांती । स्रिंगी रिषि आवै जेहि भांती ।।

x x x

तब बनि चली जहाँ बन आहीं । बस कीयो चाहति हैं ताही।।

x x x

छल बल करि दूती चतुराई । बस्ती महिं रिषि कौं लै आई[3] ।।

देवीभागवत पुराण - क्षेमान्देवेषु सा देवी कृत्वा दैत्यपतेः क्षयं ~~क्षेमकरी~~

क्षेमकरी शिवेनोक्ता पूज्या लोके भविष्यति[4] ।

लालदास- क्षेमकरी दरसन शुभकारी[5] ।

1- अवधविलास, लालदास, सं० डॉ० चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ० 8।

2- वाल्मीकि रामायण , बालकाण्ड, 10/5-7 -28

3- पा० टि० एक के समान, पृ० 175 -76-88

4- देवी भागवत पुराण , अध्याय 40

5- पा०टि० एक के समान, पृ० 17।

देवी भागवत पुराण - योगेनात्मा सृष्टि विधौ द्विधारूपोबभूव स: ।[1]
पुमांश्च दक्षिणार्धांगो वामार्धा प्रकृति: स्मृता ।

लालदास- एक आत्मा द्विधा प्रकासा । पति पतिनी मिलि कीन्ह विलासा ।।
त्रिया पुरुष जग माँहि जे होई । शिव सक्तिहि बिनु और न कोई।।[2]

परवर्ती कवियों पर प्रभाव -

'अवधविलास' का परवर्ती कवियों पर प्रभाव एक बड़ी सीमा तक नहीं पड़ सका, क्योंकि अप्रकाशित रहने के कारण यह काव्य कई शताब्दियों तक लाल बस्तों में ही बँधा पड़ा रहा । केवल कतिपय व्यक्तियों तक ही इसकी चर्चा रही है । 'अवधविलास' की परम्परा में 'ब्रजविलास' की रचना हुई प्रतीत होती है, क्योंकि इन दोनों में नाम का साम्य है । यद्यपि 'ब्रजविलास' 'अवधविलास' से भिन्न है, किन्तु इनमें साम्य है और भाषा आदि दृष्टि कोणों से फिर भी यह सम्भव हो सकता है कि 'ब्रजविलास' का रचनाकार 'अवधविलास' से परिचित रहा हो और उसने विलास परक ग्रंथों की परम्परा में इस ग्रंथ की रचना की हो ।

तुलनात्मक मूल्यांकन -

लालदास और तुलसीदास -

रामचरितमानस और 'अवधविलास' दोनों रामकथा से सम्बंधित ग्रंथ है । तुलसीदास और लालदास दोनों ही भक्त कवि हैं । किन्तु तुलसीदास और लालदास, रामचरितमानस और 'अवधविलास' को समान स्तर पर किसी भी दृष्टि से नहीं रखा जा सकता । समानता मात्र इस रूप में देखी जा सकती है कि दोनों भक्त कवि व रामकथा से सम्बंधित हैं ।

रामचरितमानस सात काण्डों तथा 'अवधविलास' 20 विश्राम में

1- देवी भागवत पुराण, 9/1/9

2- अवधविलास, लालदास, सं0 डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, पृ0 192

लिखा गया महाकाव्य है किन्तु रामचरितमानस का कलेवर विस्तृत है ।

तुलसी के सामने लोक संस्कृति के रक्षण का प्रश्न खड़ा हुआ था अत: उन्होंने मर्यादा पुरूषोत्तम राम को केन्द्र में रख कर रामचरितमानस की रचना की लालदास भी तुलसी की भाँति सामयिक स्थितियों के प्रति जागरूक थे,उनके काव्य में सामयिक जीवन के बिम्ब प्रतिबिम्ब अंकित हुए हैं ।

रामचरितमानस और 'अवधविलास' इस नामकरण से ही स्पष्टहो जाता है कि रामचरितमानस में राम के मर्यादावादी, संघर्षयुक्त चरित्र का सर्वांगींण चित्रण है और उस चरित्र के माध्यम से तुलसी ने समस्त जीवन के आदर्शों एवं लोक सिद्धान्तों को बिम्बित कर दिया है । लालदास राम के चरित्र के सौकुमार्य पक्षों को लेकर चले हैं,क्यों कि वे रसिकोपासक,माधुर्योंपासक लीला में रमने वाले कवि हैं, जिन्हें राम का संघर्षमय चरित्र या राम के जीवन को दु:खद घटनाएँ अभीष्ट नहीं है। वे तो अवध में राम का नित्यवास मानते हैं । कवि के अनुसार वनवास, लंकादहन आदि मायावी प्रसंग हैं और अनैतिहासिक हैं ।

तुलसी जीवन की संघर्षमयी स्थितियों से होकर चलने वाले कवि है। लालदास के काव्य का सामाजिक पक्ष बहुत अधिक समृद्ध और पुष्ट है । तुलसी के ठीक 100 वर्ष बाद लालदास हुए जिनके समय तक रामचरितमानस जन- जन का मानस हार बन चुका था। ऐसी स्थिति में लालदास ने रसिक साधना के अन्तर्गत 'अवधविलास' को रामकथा को सब ठौर' पहुँचाने के उद्देश्य से काव्य की रचना की । कहीं भी 'अवधविलास' के सौष्ठव में शिथिलता नहीं है और न ही उसके रचनाकार को तुलसी से हीन कवि माना जा सकता है । तुलसी का मूल्यांकन अपनी दृष्टि का और लालदास का अपनी दृष्टि का है।

केशव और लालदास -

केशव और लालदास दोनों ही पृथक् सम्प्रदाय के कवि हैं। केशव आचार्य हैं तो लालदास रसिकभक्त । अत: रामचन्द्रिका राजाश्रयी

कृति है, 'अवधविलास' राजाश्रयी प्रभाव से मुक्त है। रामचन्द्रिका छन्द बहुल कृति है। कहीं कहीं छन्द का अजायब घर सा प्रतीत होने लगता है किन्तु 'अवधविलास' मात्र दोहा, चौपाई व सोरठा, छंद में लिखा गया है। रामचन्द्रिका संवाद प्रधान रचना है किन्तु 'अवधविलास' में कहीं भी संवादों का प्रयोग नहीं किया गया। रामचन्द्रिका में आचार्यत्व की छाप स्पष्ट है, 'अवधविलास' में इस प्रकार का आरोपित आचार्यत्व तो नहीं है किन्तु वह आचार्यत्व विहीन रचना भी नहीं है।

केशव को कठिन काव्य का प्रेत कहा गया है किन्तु लालदास 'लाल सरल मनमाने' के उद्घोषक व अनुपालक है। रामचन्द्रिका में परशुराम संवाद, धनुष भंग, रावण युद्ध आदि विषयों को लिया गया है। किन्तु लालदास राम के माधुर्यपरक रूप पर ही मुग्ध हैं। साम्य मात्र इतना देखा जा सकता है कि दोनों राम कथा से सम्बन्ध रखते हैं।

चंददास और लालदास -

चंददास कृत रामविनोद एक रूपक प्रधान कृति है, जिसमें राम कथा को राष्ट्रीय युद्धों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। राम को प्रतीक रूप में लिया गया है। 'रामविनोद' में छंदो की प्रधानता है किन्तु छन्द सरस हैं तथा रासों की शैली में छन्दों का प्रयोग है। चंददास ज्ञान, भक्ति और योग के सूत्रों को लेकर चले हैं। 'अवधविलास' रूपक प्रधान कृति नहीं है। प्रत्यक्ष रामभक्ति से सम्बंधित कृति है। यह बात भिन्न है कि कवि ने जो प्रसंग प्राप्त करके संगीत, ज्योतिष, दर्शन, योग आदि के सिद्धान्तों को अपने महाकाव्य का विषय बनाया है तथा राम के योग निष्ठ व्यक्तित्व की पुष्टि के लिए अष्टांग योग विषयक एक विश्राम ही रच डाला है। लालदास छन्दों की दृष्टि से तुलसी की दोहा चौपाई शैली का अनुगमन करते हैं। चूँकि दोनों संत कवि हैं, भक्त कवि हैं, ज्ञान सम्पन्न हैं, अतः विविध विषयों का ज्ञान व साम्य स्वाभाविक है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में लालदास का योगदान -

हिन्दी साहित्य के इतिहास में काल विशेष के आधार

पर कवियों का मुल्यांकन किया गया तथा काल विशेष की प्रवृत्तियों के आधार पर कवियों की कृतियों का अनुशीलन किया गया है। लालदास के काव्य में संधि -युगीन प्रवृत्तियों के कारण जो वैविध्य अथवा भिन्नता मिलती है, उसे लेकर हिन्दी साहित्य के इतिहास को एक नई आधार भूमि प्राप्त हो सकती है। उदाहरण के लिए ऐसे भक्त कवि जो ऐतिहासिकता से युक्त होकर काव्य रचना करते हैं तथा जिन्हें अपने युग तथा काल के विपरीत् सर्जना करनी पड़ती है , वे एक सीमा तक विद्रोह की अभिव्यक्ति देते हैं । अत: यह विद्रोही चेतना इतिहास लेखन का एक अंग बन सकती है, किन्तु इस ओर उपेक्षा होने के कारण प्राय: परम्परित ढांचे ही कसौटी के विषय बनते हैं ।

इसी प्रकार लालदास के काव्य में काव्येतर विषयों का समावेश एक बड़ी सीमा तक पाया जाता है। अत: काव्य तथा काव्येतर विषय ज्ञान को मानक बनाया जाना चाहिए । साहित्य लेखन में लालदास का काव्य महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है । लालदास की कृतियाँ प्रकाश में आ जाये तो उसके काव्य के विविध पक्षों का मुल्यांकन किया जा सकता है । कवित्व, आचार्यत्व, बहुज्ञता, वैविध्य के विविध पक्ष सम्यक् रूप से प्रकाश में आ सकते हैं । मध्यकाल के समाज और संस्कृति के निर्माण में जो भूमिका इस कवि की रही है, उसका परिचय प्रस्तुत शोध प्रबंध के माध्यम से कराया जा रहा है । आशा है कि कवि के विविध पक्षों पर स्वतंत्र कार्य किया जायेगा जिससे उनके काव्य -जीवन के अनुद्घाटित पक्ष उद्घाटित हो सकें ।

कोई भी उच्च कोटि का काव्य एक विशिष्ट जीवन दर्शन को लेकर चलता है । वह जीवन दर्शन समाज और संस्कृति को पुष्ट करता है । मूलत: मनुष्य का व्यवहार मुल प्रवृत्तियों से परिचालित होता है । मूल प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्द धर्मी होने के कारण वासनात्मक दिशा की ओर भी जा सकती हैं । संत साहित्य और कला मानव की मुल भावनाओं को दमित नहीं करती वरन् वासना का रूपान्तरण करती है ।

रसिक साधना भी श्रृंगार की स्वस्थ मनोवृत्ति को लेकर चलती है और वासना की हेय वृत्ति का परिष्करण करती है । सच्चे अर्थों में अवधविलास समाज और संस्कृति के निमार्ण में उपयोगी सिद्ध होता है ।

'अवधविलास' में लालदास ने जो सतसंगति माहात्म्य ,गुरु माहात्म्य, अतिथि माहात्म्य, तीर्थ माहात्म्य, पर विवेचन प्रस्तुत किया है तथा वेद वेदाङ्ग, सांख्य वेदांत, दर्शन आदि पर अपनी जो विचारधारा अभिव्यक्त की है, निश्चय ही वह सांस्कृतिक एवं सामाजिक ढांचे को बौद्धिकता प्रदान करती है । अनेक ज्ञान-विज्ञान सम्बंधी विवेचन मनुष्य के मानसिक बोध को परिपक्वता प्रदान करते हैं । सांस्कृतिक मूल्यों और सामाजिक जीवन दर्शन के समीकरण से युक्त 'अवधविलास' जन -जन में भक्ति परक चेतना को उद्दीप्त करने वाला महाकाव्य है । इसप्रकार 'अवधविलास' सांस्कृतिक और सामाजिक विस्तार के लिए अद्भुत प्रकाश स्तम्भ है ।

संस्कृति को समृद्ध बनाने में लालदास का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है । उनके काव्य में लोक जीवन, लोक तत्व, लोक रूढ़ियां तथा लोक मान्यताएं इतने व्यापक रूप में चित्रित हुई है, जिससे कवि का लोक ज्ञान परिपुष्ट होता है । लालदास स्वयं स्वीकार करते हैं 'कवि जो लोक वेद अस मानै । इसप्रकार वैदिक मान्यता के साथ लोक मान्यता को भी कवि स्वीकार करता है ।

'अवधविलास' में मानव समाज का लोक प्रधान रूप व्यक्त हुआ है । बधाई के अवसर पर लोक जीवन में गाये जाने वाले गीत, उत्सव तथा रीतियां व्यक्त हुई है । इतना ही नहीं मनोरंजन वाले खेल, तमासे, कला, कौशल लोक नृत्य आदि सभी काव्य में अभिव्यक्त हुये हैं ।

कहानियां भी लोक जीवन का एक अंग होती है तथा मुहावरे और कहावतें भी लोक चेतना के अंग होते हैं । 'अवधविलास' में स्थान-स्थान पर रीति रिवाज, पर्व,लोक विश्वास, कहावतें आदि भरी पड़ी हैं जिससे कवि के लोकोन्मुखी होने का परिचय प्राप्त होता है । लोक तत्व का निर्वाह कवि ने बड़ी सीमा तक किया है, यहां तक की विवाह के अवसर पर राजा जनक द्वारा जन जातियों को बुलाया जाना, विवाह की तैयारी को लेकर तेली,तमोली, की चिन्ता, लोक जीवन की जीवन्तता को लिये हुए है । इतना ही नहीं कवि ने लोक भाषा का प्रयोग भी किया है । भोज पुरी आदि के शब्दों का प्रयोग इसी वृत्ति का सूचक है ।

इसी प्रकार लोक सिद्ध गाथाओं तथा पौराणिक गाथाओं को लोकोपयोगी बनाकर काव्य में स्थान देना भी कवि की लोक चिन्ता का ही परिणाम है। देवी- देवताओं की उपासना, व्रत और उपवासों का उल्लेख इसी बात को पुष्टि करता है। उदाहरण के लिए सीता का माघ स्नान श्रेष्ठ वर की कामना से किया जाता है। यह लोक धारणा की ही वस्तु है। लोक जीवन एवं लोक संस्कृति का जैसा गहन एवं संवेदन शील निरूपण लालदास ने किया है उससे न केवल कवि की गहरी लोक संवेदना की पुष्टि होती है बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के अध्ययन में महा कवि की लोक विद्वता नितान्त लोक निधि के रूप में अपना स्थायी महत्त्व रेखांकित करती है। काव्य में लोक जीवन की विराट् अभिव्यक्ति के कारण अवधविलास का एक लौकिक {सामाजिक} महत्त्व बढ़ जाता है, जो उसे अन्य आध्यात्मिक काव्यों से विशिष्टता प्रदान करता है।

सहायक ग्रंथों की सूची

ऋग्वेद

ऐतरेय ब्राम्हण

शतपथ ब्राम्हण

बाल्मीकि रामायण

अध्यात्म रामायण

श्रीमद्भागवत

श्रीमद्भगवद्गीता

शिवपुराण

मत्स्य पुराण

विष्णु पुराण

स्कंद पुराण

पद्म पुराण

देवीभागवत पुराण

मनुस्मृति

सम्वर्त स्मृति

महाभारत

वृहज्ज्योतिसार:

जातक पारिजात:

कामसूत्र वेदांतसार:

सांख्यकारिका

काव्यालंकार	भामह
काव्यादर्श	दण्डी
काव्यालंकार सूत्रवृत्ति	वामन
काव्यप्रकाश	मम्मट
किरातार्जुनीय	भारवि

वेदान्तसार

शिशुपाल वधम्	माघ
नाट्यशास्त्र	भरत
अष्टाध्यायी	पाणिनी
कर्पूर मंजरी	राजशेखर
काव्यालंकार	रुद्रट
काव्यानुशासन	हेमचन्द्र
रघुवंश	कालिदास
साहित्य दर्पण	विश्वनाथ
दशरूपक	धनंजय

हिन्दी -

हिन्दी साहित्य का इतिहास	आ० रामचन्द्र शुक्ल
हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास	डॉ० शिवमूर्ति शर्मा
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ० नगेन्द्र
भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा	डॉ० नगेन्द्र
रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय	डॉ० भगवती प्रसाद सिंह
बिहारी और उनका साहित्य	डॉ० हरवंशलाल शर्मा
तुलसीदासोत्तर हिन्दी राम साहित्य (शोध प्रबंध)	पं० रामलखन पाण्डेय
रामसाहित्य में रसिकोपासना	डॉ० भगवती प्रसाद सिंह
रामकथा	डॉ० फादर कामिल बुल्के
रस सिद्धान्त	डॉ० नगेन्द्र
साहित्यालोचन	डॉ० श्यामसुन्दर दास
केशव का आचार्यत्व	डॉ० विजयपाल सिंह
कामायनी	जयशंकर प्रसाद
रामचरितमानस	तुलसी
रामविनोद	चंददास
भूषण ग्रंथावली	

जायसी ग्रंथावली

रस विलास	देव
भवानी विलास	देव
श्रृंगार सागर	चंददास
रस सारांश	भिखारीदास
रसिक प्रिया	केशव
रश्मिबंध	सुमित्रानंदन पंत
सौन्दर्य शास्त्र	डॉ० हरद्वारी लाल शर्मा
भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा	डॉ० रामविलास शर्मा
रामभक्ति में रसिक साधना	गोपीनाथ कविराज
सामान्य भाषा विज्ञान	डॉ० बाबूराम सक्सेना
हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास	डॉ० उदयनारायण तिवारी
हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य	डॉ० सत्यदेव चौधरी
चिंतामणि	रामचन्द्र शुक्ल
भाषा विज्ञान	डॉ० भोलानाथ तिवारी
काव्य में अप्रस्तुत योजना	रामदहिन मिश्र
लक्षणा और उसका हिन्दी काव्य में प्रसार	भोजराज
हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास	डॉ० भागीरथ मिश्र
सूरसागर	सूर
रामचन्द्रिका	केशव
बिहारी सतसई	बिहारी
तालमार्तण्ड	पं० सत्यनारायण वशिष्ठ
मुगल कालीन भारत	डॉ० उपेन्द्र ठाकुर
मुगलकालीन भारत	डॉ० आशीर्वादि लाल श्रीवास्तव
मुगलसाम्राज्य का पतन	जदुनाथ सरकार

हस्त लिखित ग्रंथ -
=============

शिवसारंगाध्यावली ,चंददास ,ह०लि०प्रति चंददास साहित्य शोध संस्थान,बांदा

जनार्दन बुध विरचित वृत्तरत्नाकर टीका ह०लि०ग्र०

पत्र पत्रिकायें -

नागरी प्रचारणी खोज रिपोर्ट ,हिन्दुस्तान टाइम्स ,उत्तर प्रदेश अप्रैल 1980

SHORT History of Aurangzib - Jadunath Sarkar.

Aurangzib, J.N. Sarkar, Vol. II,

History of India, L. Mukerji,

History of India, Percival Spear,

Foreign policy of the great Moughals, R.C. Verma,

Origin and Development of Bengali Language,
Dr. SUNIT CHATURJA.

The Laws and Practice of Sanskrit Drama, Vol. II,

The Fall of the Moughal's Empire. Sidney J. Owen 1960.

------------ :::::::::::::::::: ------------